॥ ओ३म् ॥

दृष्टान्त-सागर

प्रथम भाग

जिसको

श्रीमान् पं० हनुमानप्रसाद जी शर्म्मा
अवैतनिक उपदेशक, शिवली,
जिला कानपुर ने रचा

और

महाशय श्यामलाल जी वर्म्मा
आर्य्य बुकसेलर, बरेली
ने
लखनऊ-निवासी
श्रीमान् पं० चन्द्रिकाप्रसाद जी गुप्त
से शुद्ध कराकर प्रकाशित किया ।

प्रथम बार २००० | सन् १९२२ ई० | मूल्य १) सजिल्द १॥)

Printed by R K at the Kishor Press, Bareilly

द्वितीय संस्करण में संशोधक का

निवेदन

शास्त्रों की गम्भीर बातें जिनका यथार्थ मर्म हृदयङ्गम करने के लिये तीव्रमति शास्त्राभ्यासियों को वर्षों प्रयत्न करना पड़ता है, कभी-कभी लौकिक दृष्टान्तों से अनायास ही समझ में आ जाती हैं और साधारण मनुष्यों के चित्तों पर तो ऐसी अंकित हो जाती हैं कि वे अपने सिद्धान्त तक पलट लेते और उनके जीवन के कार्यक्रम बदल जाते हैं और शास्त्राभ्यासियों को शास्त्राज्ञाओं पर विश्वास करने में सहायता मिलती है। इसी लिये, शास्त्रकार अपनी आज्ञाओं को स्पष्ट करने के लिये, लौकिक उदाहरणों का आश्रय ग्रहण करते हैं और उन्हें ही वे दृष्टान्त कहा करते हैं।

ज्ञानी पुरुषों की दृष्टि में, यह संसार विश्वविद्यालय है। इसकी प्रत्येक घटना शिक्षा से परिपूर्ण है, इसकी प्रत्येक वस्तु उपदेश से भरी है एवं इसके प्रत्येक नियम ज्ञानाग्नि के प्रदीप्त करनेवाले हैं किन्तु आवश्यकता है इससे शिक्षा पानेवाले शुद्धान्तःकरण विद्यार्थियों की, क्योंकि यदि अन्तःकरण ही शुद्ध न होगा तो सदुपदेशों से भी मनुष्य उलटे ही अर्थ ग्रहण करेगा। उसी एक लोक दृष्टान्त से ज्ञानी पुरुष अपने जीवन को समुन्नत बनाता है और मूर्ख उसको और का और ही समझ अपने जीवन का नाश मार देता है। इसी हेतु दृष्टान्तों से भी उपयोग लेने के लिये ऐसे ज्ञानी पुरुषों की आवश्यकता होती है जो प्रत्येक दृष्टान्त का उत्तम दार्ष्टान्त दिखाकर जीवन के उन्नत बनाने में सहायक हों।

इस संग्रह में, प्रायः सभी आवश्यक विषयों पर, २०३ दृष्टान्त हैं जो कि प्रायः सभी बड़े मनोरंजक एवं शिक्षाप्रद हैं और जिनकी आख्यायिकायें चुटीली एवं चित्त में चुभनेवाली हैं और खूबी यह है कि प्रत्येक दृष्टान्त के नीचे उसका उपयोगचित्र बड़ी ओजस्विनी भाषा में दार्ष्टान्त रूप में खींचा गया है जिससे वे और भी महत्व के हो गये हैं। एक और अनोखापन इस पुस्तक में यह है कि इसके प्रायः सभी दृष्टान्त वैदिक सिद्धान्तों के पोषण करनेवाले हैं और उनमें विशेष झलक रहा है।

दृष्टान्तों की संभवता और असम्भवता के विषय में ग्रंथकार ने बहुत स्थलों पर नोट देकर लिख दिया है कि—"यद्यपि यह दृष्टान्त असम्भव है पर उपयोगी होने से लिख दिया।" तथापि अधिकांश दृष्टान्त इस प्रकार लिखे गये हैं कि पढ़ने में उनकी आख्यायिकायें निरी मनगढ़न्त नहीं जान पड़तीं, वरन् सत्यघटनामूलक और मनोहर जान पड़ती हैं। किसी सत्य घटना का उल्लेख करते हुए उसका परिणाम दिखा कर जो उपदेश किया जाता है उसका चित्त पर जैसा कुछ विलक्षण प्रभाव पड़ता है वैसा कपोलकल्पित, असम्भव और असम्भव बात कहने से नहीं होता। ग्रंथकार ने इस बात का यथाशक्य ध्यान रक्खा है और ऐसा करने में दृष्टान्तों की मनोहरता को भी बिगड़ने से बचाया है।

एक और विशेषता जिसने इसकी आख्यायिकाओं का सौन्दर्य बढ़ाने में सहायता की है, दृष्टान्तों के मध्य और समाप्ति पर उद्धृत श्लोकादि हैं। ये श्लोक तथा वाक्य-रत्न वैराग्य, नीति एवं ज्ञान से पूर्ण हैं और आख्यायिकाओं के सङ्ग में उनका उद्धृत होना सोने में सुगन्ध के समान है। दृष्टान्तों के साथ इन श्लोकों के संग्रह करने में ग्रन्थकर्ता ने बड़ा परिश्रम किया है और कहना पड़ता है कि इन श्लोकों के कारण यह संग्रह हितोपदेश और पञ्चतन्त्र की शैली का सा एक ग्रन्थ बन गया है जिसमें प्रत्येक पुस्तकावलोकन-प्रेमी विद्वान् के संग्रह करने तथा विद्याभ्यासी बालक बालिकाओं को उपहार में देने योग्य हो गया है।

इस पुस्तकरत्न का प्रथम संस्करण सन् १९१० में धर्मदिवाकर प्रेस मुरादाबाद से निकल चुका है, किन्तु जहां तक हमारा अनुमान है या तो प्रेस की असावधानी अथवा संशोधक महोदय के प्रमाद वा संशोधन ज्ञानशून्यता ने पुस्तक को एक प्रकार चौपट ही कर दिया था, यहां तक कि अनेक स्थलों पर पढ़ने से उसका कुछ अर्थ ही व्यक्त न होता था, तथापि यह संग्रह गुणग्राही पाठकों को ऐसा रुचिकर हुआ कि इसके प्रथम संस्करण की कुल कापियां बिक गईं और पाठकों की मांग होने पर यह आवश्यकता हुई कि इसका दूसरा संस्करण निकाला जाय। आर्य-पुस्तकालय, बरेली के अध्यक्ष बाबू श्यामलाल वर्म्मा

ने, अब की बार, इस पुस्तक को जब लखनऊ के एंग्लो ओरियंटल प्रेस में छपने को दिया तो उन्होंने इसके भाषा दोष दूर करने का भार मुझे दिया। मैंने यह समझकर कि यह छपी हुई किताब है, इसमें कदाचित् अधिक सुधार की आवश्यकता न होगी, इस भार को स्वीकार कर लिया। किन्तु जिस समय मेरे पास इसके प्रूफ आने लगे तो मुझे उनमें बड़ी ही गड़बड़ देख पड़ी यहां तक कि पुस्तक फिर से लिखी जाने योग्य जान पड़ी, किन्तु प्रकाशक महोदय इसके लिए असमर्थ थे, इस कारण प्रूफों में ही जो कुछ हो सका सुधार किया गया। जिन महाशयों को हिन्दी के प्रेसों में पुस्तकें छपाने का अवसर मिला होगा वे भली भांति जानते हैं कि प्रेसवाले प्रूफ में अधिक करेक्शन निकालने से कितना हाहाकार करते हैं और विशेष कर उस दशा में जब कि उनसे काम शीघ्र छाप कर देने का वादा किया गया हो। इत्यादि कारणों से पुस्तक की भाषा, मार्जित और इसका विषयक्रम उज्ज्वल तो किया न जा सका, किन्तु इस बात का प्रयत्न किया गया है कि पुस्तक लिखित भाषा के प्रत्येक वाक्य का मर्म हृदयगम करने में पाठकों को कहीं अटकना न पड़े। श्लोकों को भी यत्र तत्र थोड़ा बहुत सुधार दिया गया है, पर अधिकांश श्लोक जैसे के तैसे ही रक्खे गये हैं, उनमें परिवर्तन नहीं किया गया। जिन दृष्टान्तों पर कुछ शीर्षक नहीं दिया था उनपर शीर्षक देकर सब की विषय सूची भी बना दी गई है जिससे पाठकों को सुविधा होगी। पहले संस्करण में दृष्टान्तों की संख्या १९४ थी किन्तु इस बार २०३ है, इससे पाठक यह न समझें कि इस बार ९ दृष्टान्त बढ़ा दिये गये हैं, दृष्टान्त उतने ही हैं, केवल उनकी संख्या ठीक होजाने से वे २०३ हो गये हैं।

अब विशेष कुछ न कह कर हम पाठकों से एक बार इस पुस्तक के अवलोकन करने का अनुरोध करते हैं।

सआदतगंज, लखनऊ
१५-८-१६ } चन्द्रिकाप्रसाद गुप्त।

पंचम संस्करण का वक्तव्य

दृष्टान्त-सागर के द्वितीय और तृतीय संस्करण की सब प्रतियां बिक गईं किन्तु गुणग्राही पाठक-पाठिकाओं की पाठ पिपासा की अब भी परितृप्ति नहीं हुई यह इस ग्रंथ की उपयोगिता और सर्व-प्रियता का उज्ज्वल उदाहरण है। हमें आशा न थी कि एक बार के साधारण संशोधन के बाद इतने शीघ्र इस ग्रंथरत्न के पंचम संस्करण का वक्तव्य लिखने का सौभाग्य होगा। इस गुण ग्रहिता के लिये पाठक-पाठिकाओं को बधाई है और साथ ही आर्य्य-पुस्तकालय, बरेली के अध्यक्ष बाबू श्यामलाल वर्म्मा को भी धन्यवाद है जो कागज के इस कराल अकाल के समय में भी पाठकों की रुचि-पूर्ति के लिये पुनः पुनः इस पुस्तक को छपा कर प्रकाशित करते हैं। इस बार भी इस पुस्तक में कुछ विशेष परिवर्तन नहीं किया गया, केवल दृष्टान्तों के शीर्षक कुछ छोटे कर दिये गए हैं और कहीं कहीं, कुछ सुधार भी कर दिया गया है किन्तु हमें यह सूचना देते हुए हर्ष होता है कि इसका द्वितीय भाग भी तैयार होरहा है जो परमात्मा की कृपा से शीघ्र ही पाठक पाठिकाओं की भेंट किया जायगा। आशा है, वे प्रथम भाग की भांति इसे भी अपना कर हमारी उत्साह वृद्धि करेंगे। किमधिकम्

अमीनाबाद, लखनऊ
५-६-१९२०

चन्द्रिकाप्रसाद गुप्त

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
मंगलाचरण	११
१ ईश्वर-विश्वास	११
२ झूठे आडम्बर में सच्चा ध्यान	१४
३ जो चाहो वह मिले	१६
४ ईश्वर जो करता है अच्छा ही करता है	१७
५ ईश्वर हमारा सुख न देख सका	१९
६ मुख्य कोष की प्राप्ति	२०
७ धर्म के सिवा कोई साथी नहीं	२४
८ परमात्मा सब देखते हैं पापों से बचो	३०
९ पारसमणि की पटिया	३३
१० कुछ आगे के लिये भी भेजिये	३५
११ वैराग्य	३६
१२ अब के न तब के	३८
१३ देह में खुशली	३९
१४ देह होते हुए विदेह नाम क्यों?	४०
१५ विषयों की असलियत	४१
१६ अष्टावक्र	४३
१७ क्या करें फुरसत नहीं मिलती	४५
१८ ऋषि-सन्तानों का त्याग	४७
१९ महात्मा कैयट का त्याग	४९
२० एक ब्राह्मण	५०
२१ अतिथि-सत्कार	५३
२२ धार्मिक राज्य	६४
२३–२४ अहिंसा	६५–६८
२५ मांस-भक्षण	६८
२६ हिम्मत और धृती	६९
२७ क्षमा	७२
२८ दम	७६
२९ एक महात्मा	७७
३० स्तेय	७९
३१ शौच	७९
३२ इन्द्रिय-निग्रह	८१
३३ धी	८२
३४ विद्या	८४
३५ छोटों की बात का तिरस्कार न करो	८५
३६ सत्य	८७
३७ अक्रोध	९०
३८ असत् कर्म अवश्य भोगने पड़ेंगे	९२
३९ ब्रह्मचर्य	९५
४० बिना परीक्षा के ब्याह	९७
४१ जैसा करना वैसा भरना	९८
४२ मूर्ख	९९
४३ मूर्खों के समाज में विद्वानों की दुर्गति	१०१
४४ मूर्खों के समाज में पंडितों की दशा	१०४
४५ मूर्ख उल्टा ही समझता है	१०६
४६ विषयासक्ति से वेसमझी	१०८

विषय	पृष्ठ
४७ जिन्हें भूकना सिखाओ वही काटने दौड़ते हैं	१०६
४८ सत्य वचन महाराज	११०
४६ असम्भवका सम्भवकर दिखाना	१११
५० बाप दादे से चली आती है	११२
५१ कलियुग	११३
५२ गुरु सेवा	११४
५३ टेढ़ी खीर	११५
५४ शेखचिल्ली	११६
५५ मूर्खता की छड़ी	११६
५६ ईश्वर विश्वासीपापनकरेगा	११७
५७–५८ व्यर्थ विवाद	११६
५६ मनुष्य पञ्च कैसे बन सकता है	१२०
६० स्वार्थ और परसताप	१२३
६१ खुदगर्जी से सर्वनाश	१२७
६२ अपनी अपनी उड़ाना...	१२६
६३ औंधर सोटा	१३०
६४ वर्तमान समय का पाण्डित्य	१३१
६५ वर्तमान समय के श्रोता	१३३
६६ बे अवसर की बात	१३४
६७ शठ बिना शठता के नहीं मानता	१३७
६८ श्राद्ध करना तो सहज है पर सीधा देना कठिन है	१३६
६६ मार ठोरि श्राद्ध कराना	१४१

विषय	पृष्ठ
७० अन्ध परम्परा	१४१
७१ सया से किसे मान बैठे	१४२
७२ खुशामदियों से दुर्दशा	१४३
७३ धर्मध्वजी	१४६
७४ गुरु चेला	१४७
७५ चेले का इस्तीफा	१४८
७६ भारवाही	१४८
७७ अविद्या की हठ	१५२
७८ कृतघ्नता	१५४
७६ अमल के बिना लोग पीछे नहीं चलते	१५६
८० मेल से लाभ...	१५७
८१ अदालत से नाश	१५७
८२ भेड़ियाधसानी...	१५६
८३ सखेश्वर	१५६
८४ मालिन का देवता	१६२
८५ सुभाई का स्वभाव	१६३
८६ नीच की नीचता	१६४
८७ जाति कभी नहीं छिपती	१६४
८८ ठनगन (तकल्लुफ़)...	१६५
८६ दिल्लगी मखौल	१६५
६० कष्ट-भय से ऐश्वर्य-निन्दा	१६६
६१ विद्या की निन्दा	१६७
६२ विद्या-दम्भ	१६७
६३ एक आर्य और उसकी पौराणिक भावज की वार्ता	१६८

विषय	पृष्ठ
९४ एक आश्चर्य घट् ...	१७०
९५ मल्लामियाँ अकेले .	१७२
९६ तत्त्व पदार्थ की पुड़िया	१७३
९७ परिहास से दुर्दशा .	१७६
९८ बहुत चालाकी से सर्वनाश	१७८
९९ अभ्यास ..	१७९
१०० यथा राजा तथा प्रजा	१८०
१०१ आशा में निराशा	१८२
१०२ बुद्धि और भाग्य ...	१८२
१०३ नाक की ओट में परमेश्वर	१८६
१०४ प्रकृति ही परमेश्वर के प्राप्त कराने में साधन है	१८९
१०५ कलियुग में अधर्म ही फलता है	१९०
१०६ खूबसूरती और बुद्धि	१९३
१०७ बच्चों को हमीं बुरा बनाते है	१९३
१०८ काठ का उल्लू	१९४
१०९ एक के करने से क्या होगा	१९५
११० पल्लड़ झाड़ .	१९६
१११ आजकल का तमस्सुक	१९६
११२ पुड़िया भाषा ..	१९७
११३ अँग्रेज़ी की लियाक़त	१९८
११४ उर्दू बीबी . .	१९९
११५ फूट से हानि .	२००
११६ उजबक ..	२०३
११७ स्त्रियों के परदे से हानि	२०६
११८ वर्तमान स्त्रियों की विद्या	२०७
११९ वेवा स्त्रियों का मुख्य धर्म	२०७
१२० असभव कभी सच नहीं	२०८
१२१ तन बदन का होश नहीं	२०९
१२२ चोर की दाढ़ी में तिनका	२०९
१२३ आज कल की सती	२०९
१२४ बिना सम्बन्ध के वार्त्ता	२०९
१२५ बिना योग्यता के काम	२१०
१२६ अत्यन्त लोभ से हानि	२११
१२७ कर्कशा . .	२१३
१२८ गंजेरन्दा बावला ..	२१४
१२९ दोष्याहकरनेवाले की दुर्दशा	२१५
१३० रण्डीबाज़ को उपदेश	२१६
१३१ चार श्रोता	२१६
१३२ बदनियते से दूर रहो	२१७
१३३ परमेश्वर की रक्षा	२१८
१३४ बिना परीक्षा का काम	२१९
१३५ बिना बुद्धि के किया निष्फल है	२२०
१३६ भेषधारी	२२२
१३७ परोसी गुण दोष जानना है	२२३
१३८ डपोलसंख	२२४
१३९ अनधिकार चेष्टा	२२७
१४० विपत्ति में बुद्धि बचाती है	२२८
१४१ टके टके की चार बातें	२२८

विषय	पृष्ठ
१४२ राजाभोजका विद्याकाशौक	२३३
१४३ पुरानेकालमें यज्ञका प्रचार	२३६
१४४ पहले हमारे यहाँ अधर्मी न थे	२३६
१४५ बालविवाह	२३७
१४६ पूर्व स्त्रियों की विद्या	२३८
१४७ अन्धेरनगरी अनबूझ राजा	२४०
१४८ अयोग्य श्रोता	२४४
१४९ उल्लू बसत	२४४
१५० उल्लूका दादा उल्लूसिंह	२४८
१५१ दुनिया में सबसे बड़ी बात	२४९
१५२ रमखुदैया ...	२५२
१५३ एक पतिव्रता ...	२५३
१५४ गम खाना	२५५
१५५ बेरहमी ..	२५५
१५६ निन्यानवे का फेर ..	२५६
१५७ तपस्वी और चार चोर	२५७
१५८ पाँच ठगों की ठगी ...	२५८
१५९ लाल बुझक्कड़ .	२६१
१६० परम लालची ...	२६२

विषय	पृष्ठ
१६१ खुशकिस्मत कौन है?	२६३
१६२ अयोग्य मन्त्री ..	२६४
१६३ भारत के शूरवीर ...	२६५
१६४ आप फँसे	२६६
१६५ भारत ..	२६६
१६६ शील ...	२७०
१६७ सन्तोष ..	२७२
१६८ दब्बूपनेसे स्वरूप-विस्मृति	२७४
१६९ शान्ति मे लाभ	२७५
१७० दो किसीके पास नहीं आते	२७६
१७१ बनावटी महात्मा .	२७७
१७२ दुष्टों से स्त्रियों की धर्म-रक्षा	२७७
१७३ सुशिक्षित माता का बेटा	२८१
१७४ सबसे बड़ा देवता कौन?	२८२
१७५ खुदा को दीमक खा गई	२८३
१७६ शुद्ध बुरेकोशुद्ध करसकता है	२८४
१७७ अमृत नदी	२८५
१७८ सनातनधर्म की गाड़ी	२८६

॥ ओ३म् ॥

दृष्टान्त-सागर

प्रथम भाग

मंगलाचरण

विश्वानि देवन देव जग-करतार नाथ गुणाकरम् ।
दुर्गुण दुर्व्यसन पाप अरु सन्ताप दुख सब भंजनम् ॥
कल्याणकारी वस्तु गुण कर्मादि साधन दायकम् ।
स्व-प्रकाशरूप प्रकाशयुत सूर्यादि ग्रह सब साधकम् ॥
प्रभु जगत के उत्पन्न होने पूर्व भी थे उपस्थितम् ।
हो आत्मज्ञान शरीर आदिक शक्ति के दाता परम् ॥
तुव ध्यान धरते योगि ज्ञानी देव ऋषि मुनि आदिकम् ।
पावें परमपद मोक्ष जो है जन्म मरण विनाशकम् ॥
इस दास को निज भक्त जानि कृपा करो करुणाकरम् ।
सब दुःख दारिद दूरि कर राखो शरण शरणागतम् ॥

१—ईश्वर विश्वास

परमात्मा पर सच्चा प्रेम रखते हुये जो मनुष्य उन पर सच्चा विश्वास रखता है और पुरुषार्थ करता है उसकी सम्पूर्ण अभिलाषाओं को परमेश्वर पूर्ण करते हैं। यथा—

एक अनाथ बेवा स्त्री अत्यन्त ही दीन और धर्मज्ञ थी। उस के दो बालक थे—एक ६ वर्ष का, दूसरा ८ वर्ष का। बेचारी बेवा दीनता के कारण दूसरे पुरुषों की सेवा, पीसना कूटना करके अपने लड़कों का पालन पोषण किया करती थी परन्तु बच्चों को नित्य दूध बताशे तथा उत्तम भोजन खिलाया करती थी और उसने उनके पढ़ने आदि का पूर्ण प्रबन्ध तथा पढ़ाने के व्यय का भार भी उठा रक्खा था, और अपना निर्वाह केवल सूखी रोटियों से करती थी। और किसी किसी दिन वह भी पेट भर नहीं मिलती थी। बच्चे बड़े धर्मात्मा और सुशील थे। जिस जिस समय वे पाठशाला से पाठ पढ़ कर आते तो आते ही माता से दूध बताशे माँगते थे। एक दिन ऐसा अवसर आया कि माता को कहीं काम न लगने के कारण कुछ न मिला और बच्चों ने पाठशाला से आते ही नित्य की भांति माता से दूध बताशे मांगे। माता ने उत्तर दिया कि "बेटा, आज तो मेरे पास कुछ नहीं है आज तो तुम्हें परमेश्वर ही दूध बताशे देगा तो पाओगे, नहीं तो मेरा कोई उपाय नहीं" बच्चों ने पूछा -"माता परमेश्वर कौन है?" माता ने कहा 'बेटा वह सबका पिता, सबका पालन पोषण करनेहारा है।" यह सुनकर बच्चों ने कहा- "तो माता वह हमें दूध बताशे देगा ?" माता ने कहा-"अवश्य।" अब तो बच्चों के हृदय में सच्चा विश्वास हो गया कि माता ही दूध बताशे देने वाली नहीं किन्तु माता के इतर और दूसरा परमेश्वर भी देनेवाला है। बच्चों ने पुनः माता से पूछा कि—"माता, वह परमेश्वर कहां रहता है?" माता ने साधारण ही ऊपर को उंगली उठा दी। बच्चे चुप हो, पुस्तक उठा कर पाठशाला को चल दिये और मार्ग में परस्पर छोटा भाई यह सम्मति करते जाते थे कि—"भाई, उस परमेश्वर के ऊपर कैसे चलें कि जो उससे दूध बताशे मांगें ?"

दूसरे ने कहा- भाई, ऊपर पहुंचना तो कठिन है परन्तु हमने एक बात सोची है कि परमेश्वर को हम तुम दोनों एक चिट्ठी लिखें और पण्डित जी से छुट्टी मांग चल कर डाक में डाल आवें।" पहले ने कहा—"यह बहुत ही ठीक है।" दोनों पाठशाला पहुंच पत्र लिखने लगे—

"पिता परमात्मा! आप सबके पालन पोषण करनेहारे हो, हम दोनों भाई आपको नमस्कार करते हैं और प्रार्थना करते हैं कि आप सेर दूध और एक छटांक बताशे हम दोनों भाइयों को दया कर नित्य भेज दिया कीजिये, हम आपके बच्चे हैं, हमें आपने बनाया है, इससे हमारा पालन भी कीजिये। अस्तु!

आपके सेवक,

दो बच्चे, जिनको आप जानते हैं।

चिट्ठी का सिरनामा यानी पता यह था—

चिट्ठी पहुंचे पिता परमात्मा के पास—

बच्चे पण्डित जी से छुट्टी मांग पोस्ट आफिस में चिट्ठी डालने गये। डाक बाबू से पूछा— बाबूजी यह चिट्ठी कहां डालें?" बाबू ने कहा—"इस लैटरबाक्स में डाल दो।" लड़कों का शरीर छोटा था और लैटरबाक्स ऊँचे पर गडा हुआ था। बच्चे ऊपर उछल उछल कर चिट्ठी डालते थे परन्तु वे उसे लैटरबाक्स में न डाल सके। बाबू ने लड़कों को देख कर कहा—"लाओ हम तुम्हारी चिट्ठी डाल देंगे।" बच्चों ने चिट्ठी दे दी। बाबू पत्र हाथ में ले पता पढ़ कर अत्यन्त ही चकित हुआ और उसने बच्चों की ओर देखा। बच्चे सारे दिन के भूखे मलीन मुख अति दुखित थे। बाबू ने कहा "तुम किसके बेटे हो, यह चिट्ठी किसने लिखी है?" बच्चों ने कहा—"अमुक सेठ के लड़के हैं हम घर में नित्य दूध बताशे पाते थे, हम दोनों आज घर गये और माता से दूध

बताशे मांगे तो माता ने कहा—'बेटा आज तो तुम्हें परमेश्वर ही दूध बताशे देगा तो मिलेंगे नहीं तो मेरे पास नहीं। हम दोनों ने आज कुछ भोजन भी नहीं खाया और घर से भूखे ही पाठशाला को चल दिये और पाठशाला में आकर हम दोनों ने पिता परमात्मा को यह पत्र लिखा था सो डालने आये थे।"

बाबू—तुम जानते हो परमेश्वर कहां है ?

बच्चे—माता ने बताया है कि ऊपर है।

बाबू—क्या हम तुम्हरे इस पत्र को खोल कर पढ़े ?

बच्चे—हां बाबू जी, पढ़ लीजिये।

बाबू ने पत्र खोल कर पढ़ा और बच्चों को दुखी देख कहा कि—"तुम दोनो नित्य आध सेर दूध और एक छटांक बताशे हम से ले जाया करो।',

वृत्यर्थं नाति चेष्टेत सा हि धात्रैव निर्मिता।
गर्भादुत्पतितो जन्तौ मातुः प्रस्रवतः स्तनौ॥

२—झूठे आडम्बर में सच्चा ध्यान

एक कुम्हार का युवा लड़का एक राजा के यहां पात्र देने गया। वहा राजा की युवती मनमोहनी राजपुत्री को छत पर देख वह चकित हो गया और उसके हृदय में इस प्रकार काम बाण लगे कि घर आकर वह उस मोहनी के शोक में व्याकुल हो रहा और खान पान सभी भुला कर केवल उस सुन्दरी के ध्यान में हाय हाय करने लगा। उसके घर के सम्पूर्ण लोगों ने उससे पूछा कि—"तुम्हारी क्या दशा है, तुमको क्या हो गया, क्या कुछ रोग है ?" परन्तु युवक ने किसी से कुछ न कहा। थोड़ी देर के बाद उसकी माता ने उससे पूछा तो उसने अपनी माता से सच्चा सच्चा वृत्तान्त कह सुनाया

कि—"मैं आज राजा के यहाँ गान देने गया था, वहा राजपुत्री को देख यह मेरी दशा हो गई, सो चाहे मेरे प्राण चले जायें परन्तु जब तक मुझे उस राजपुत्री के पुन दर्शन न मिलेंगे तब तक भोजन न करूंगा।' माता ने कहा—"उठो आज भोजन करो। आज से ६ मास के पश्चात् मैं तुम को राजपुत्री का दर्शन करा दूंगी।'

भोजन करने के पश्चात् उस की माता ने कहा कि—"तुम यहा से कहीं ६ मास के लिये चले जाओ और ६ महीने बाद जब आना तो साधु का भेष रच कर आना और आकर राजा की फुलवारी में ठहरना, तुम्हें राजपुत्री के दर्शन हो जायेंगे।' कुम्हार के बच्चे ने वैसा ही किया। जब ६ महीने पश्चात् राजा की वाटिका में साधु आया तो उसने एक मनुष्य के द्वारा अपनी माता को बुलवा कर कहा कि—"अब राजपुत्री के दर्शन कराओ।" माता ने कहा — 'तुम आखें बन्द करके ध्यान से बैठ जाओ, मैं तुम्हें अभी दर्शन कराती हू।' उस कुम्हार की माता ने गाव भर में यह हल्ला कर दिया कि—"एक बडे पहुचे हुए महात्मा आये हैं और उनसे जो मागो सो देते हैं।" यह सुन ग्राम का सम्पूर्ण नर नारी जाने लगे। यह बात राजा तथा राज महलों में भी पहुची। राजा अपनी रानी तथा राजपुत्री सहित महात्मा के दर्शनों को गये। ज्यों ही राजा, रानी और राजपुत्री इस के सामने पहुचे तो कुम्हार की माता ने पीछे से सकेत से कहा कि-"बेटा राजा रानी और राजपुत्री आगे खडे हैं अब दर्शन कर लो।

कुम्हार के लडके ने सोचा कि आज जब कि मैं झूठा साधु महात्मा बना हुआ हू तब तो मेरे आगे तमाम गाव के नर नारी तथा राजा रानी और राजपुत्री खडी हैं और यदि मैं सच्चा साधु महात्मा बन जाऊ तो न जाने मुझे क्या २ फल प्राप्त

कट गई।" मन्त्री ने कहा—"परमेश्वर जो कुछ करता है, अच्छा ही करता है।" राजा यह वाक्य सुन बहुत अप्रसन्न हुये और उन्होंने कहा कि—"हमारी तो अंगुली कट गई और तू यह कहता है कि परमेश्वर जो कुछ करता है अच्छा ही करता है।" यह कह कर मन्त्री को उसी समय निकल दिया। मन्त्री वन से अपने घर लौट गया। राजा एक दिन आखेट खेलते २ एक दूसरे राज्य में पहुंचे। वहां के राजा को बलिप्रदान के लिये एक मनुष्य की आवश्यकता थी।* दूत इन राजा जी को पकड़ ले गये। जब वहां के पण्डितों ने इन राजा जी को देखा तो इन की अंगुली कटी हुई पाई। पण्डितों ने कहा—"यह तो मनुष्य अङ्ग भङ्ग है। अङ्ग भङ्ग की बलि नहीं दी जाती।" अत राजा जी छोड़ दिये गये। और प्राण लेकर वे अपने घर को चले। मार्ग में राजा ने सोचा कि मन्त्री सच कहता था कि—"परमेश्वर जो कुछ करता है अच्छा ही करता है। यदि मेरी अंगुली आज कट न गई होती तो मेरा बलिप्रदान कर दिया जाता।"

घर आते ही उसने मन्त्री को बुलवाया। मन्त्री डरते डरते कि राजा न जाने मुझे क्या करेंगे, राजसभा में आये और प्रणाम कर बैठ गये। तब राजा ने मन्त्री से कहा—"मन्त्री तुम्हारा यह कहना नितान्त सत्य है कि ईश्वर जो कुछ करता है अच्छा ही करता है क्यों कि जब हमने वन से आप को निकाल दिया तो हम आखेट खेलते खेलते एक राज्य में पहुंचे। वहां के राजा को बलिप्रदान के लिये एक मनुष्य की आवश्यकता थी, इससे उसके दूत मुझे पकड़ ले गये। मेरी अंगुली कटी होने से वहां के पण्डितों ने मुझे अङ्ग भङ्ग जान छोड़ दिया। मेरी अंगुली कटने से तो ईश्वर ने अच्छा यह

* कुछ समय पहले मरा और नीच लोगों में यह परिपाटी थी।

किया कि मेरे प्राण बचे पर आप को जो मैंने निकाल दिया और इतने दिन तक नौकरी से पृथक किया तो आप के लिये ईश्वर ने क्या अच्छा किया ? मन्त्री ने कहा—' महाराज यदि आप मुझे न निकाल देते और मैं आपके साथ रहता तो आप तो अङ्ग भङ्ग होने के कारण बलिप्रदान से बच आये, पर मैं अङ्ग भङ्ग न होने से बलिप्रदान से कभी न बचता।"

५—ईश्वर हमारा दुख न देख सका

एक सिपाहीराम २० वर्ष नौकरी करके घर आ रहे थे। घर के लिये एक कच्चे रङ्ग की चुनरी अपनी स्त्री के लिये और कच्चे ही रङ्ग के खिलौने अपने लड़कों के लिये और कुछ बताशे भी ला रहे थे। पर मार्ग में वर्षा होने लगी इसमें सिपाहीराम की चुनरी और खिलौनों का रङ्ग छूट छूट कर बहने लगा और बताशे सब पानी में घुल गये। यह दशा देख सिपाहीराम ने कहा—'सचुरी शम्म ही शरण करिये थे रहे। हाय ! २० वर्ष के बाद तो एक कच्ची चुनरी, खिलौने और कुछ बताशे बच्चों को लाये वह भी परमेश्वर से देखा न गया।" थोड़ी ही दूर वे चले थे कि क्या देखते हैं कि एक नाले में दो डाकू बैठे हैं और वे इन पर बन्दूक की गोली चला रहे हैं। पर बन्दूक टोपीदार है और पानी होने के कारण बारूद जल सागई, गोली नहीं चलती। तब तो कहते हैं—धन्य हो परमात्मा यदि इस समय वर्षा न होती तो हमारे प्राण ही जाते और हम अपने बाल बच्चों के मुख भी न देख पाते। यह चुनरी खिलौने यहीं पड़े रहते। अब तेरा विरक्ति से तुम्हारा मिलन को मैं सकुशल अपने घर पहुंच कर बाल बच्चों से मिलूंगा। इस लिये हे भगवन ! मैंने अज्ञानता में आपको जो कुछ कहा

अर्थ—चमकीले पदार्थों के परे अहङ्कार रूपी शिला के नीचे भीतरी हृदय कोष अविद्यादि दोषों से रहित निरवयव और शुद्ध ब्रह्म ज्योतियों का भी ज्योति विद्वानों के जानने योग्य है। उसे विद्वान् जान सकते हैं। पुनः विवेकाश्रम जी शिला काट जाने पर सुदर्शनानुसार ब्रह्मानन्द रूपी शुभ्र कोष प्राप्त कर मोक्ष सुख में आनन्द करने लगे। इससे आप लोग भी विवेकाश्रम की भांति हृदय रूप मन्दिर में ही परमेश्वर को प्राप्त कीजिये। देखिये एक भाषा के कवि ने क्या अच्छा कहा है-

व्यापक ब्रह्म सदा सब ठौर। व्यर्थ चार धामों की दौर॥
देखु न कस हृद नैन उघारि। कनिया लड़िका गांव गोहारि॥

७—धर्म के सिवा कोई साथी नहीं

एक साहूकार का लड़का बड़ा दुराचारी था। एक दिन उसकी पतंग कट कर उड़ते २ एक महात्मा के पास एक वन में जा गिरी। वह साहूकार का लड़का पतङ्ग के पीछे महात्मा जी के पास पहुंचा और महात्मा को देख पतङ्ग भूल महात्मा जी के सामने हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया। कुछ काल में जब महात्मा जी ने ध्यान से नेत्र खोले तो इस की ओर उनकी दृष्टि पड़ी। इसे हाथ जोड़े देख महात्मा ने पूछा कि—"बच्चा तुम कौन हो यहां कहां आये ?" महात्मा को देख साहूकार के बेटे के हृदय में कुछ श्रद्धा उत्पन्न हो गई और उसने सम्पूर्ण सच्चा सच्चा वृत्तान्त कह दिया और अन्त में नेत्रों में जल भर के गद् गद् हो बोला कि—"महाराज, मुझे कोई ऐसा उपाय बतलाइये कि जिससे मैं इन कुकर्मों से बच सत्कर्मों का

अनुष्ठान करूं।" महात्मा ने कहा—"बच्चा, जैसा तुम इस समय मेरे सामने सत्य बोले हो ऐसा ही सर्वत्र, सदैव बोला करो। यही तुम्हें सम्पूर्ण दुष्कर्मों से बचायेगा।" साहूकार के लड़के ने वहीं से प्रतिज्ञा की कि—"आज से चाहे कुछ हो हो, असत्य कभी न बोलूंगा।" दूसरे दिन घर आ शराब की बोतल ले आबकारी की दूकान को चला। मार्ग में उसका बड़ा भाई मिला और उसने इससे कहा—"भैया, कहाँ जाते हो?" इस प्रश्न के होते ही इसे बड़ा संकट हुआ। इसने सोचा कि मैं यदि सत्य कहता हूं तो भाई जी फजीता करेंगे और झूठ कहता हूं तो व्रत टूटता है अतः उत्तर न दे वहीं से लौट आया इसी प्रकार तीसरे दिन वह वेश्या के घर जा रहा था। मार्ग में चचा मिला। उसने कहा—"बेटा, कहां जाते हो?" यह फिर उसी प्रकार के असमंजस में पड़ा और उत्तर न दे लौट आया। इसी प्रकार धीरे धीरे इसके संपूर्ण दुराचार छूट गये। दुराचार छूटते ही इसके हृदय में कुछ ज्ञान का प्रकाश हुआ और इसने सोचा कि जिस महात्मा की कृपा से ये सब दुराचार छूटे हैं, उन्हीं की सेवा में चलें और उनसे पूछें कि महाराज, अब हम क्या करें। साहूकार का बेटा महात्मा के पास गया और क्रम पूर्वक अपने प्रश्न पूछता रहा महात्मा ने इसे शौच, दन्तधावन, स्नान सन्ध्या, अग्निहोत्र, आदि पञ्च-यज्ञ, पञ्चदेव पूजा, माता, पिता, गुरु, अतिथि, ईश्वर आदि की बताई। पुनः अष्टाङ्ग योग सिखाना प्रारम्भ किया। साहू-कार का बेटा सात अङ्गों तक तो करता चला गया आठवें अङ्ग समाधि के लिये महात्मा ने कहा—'समाधि तुम्हें तब बताऊँगा कि जब तू मेरी एक बात मान लेगा।' साहूकार के बेटे ने कहा—'महात्मा जी, कहिये।" महात्मा जी ने कहा कि—"तुम आज अपने घर जा अपनी माता आदि से कहना—

मा, आज तो मानों हमारे प्राण नहँ नहँ, रोम रोम से निकल रहे हैं। यदि मेरे जीवन में कुछ बाधा आपड़े तो जब तक अमुक महात्मा जी को जो अमुक वन में रहते हैं न बुला लेना तब तक मेरे शव को न जाने देना।' ऐसा कह प्राणायाम लगा लेट जाना।" साहूकार के बेटे ने घर आकर वैसा ही किया। माता से कहा -"माँ, आज मेरे प्राण रोम रोम से मानो निकल रहे हैं।' माता ने कहा-' बेटा, यह क्या कुशब्द बोल रहे हो? परमेश्वर तुम्हारे शत्रु को भी मौत न दे।" बेटे ने कहा कि-"कदाचित् ऐसा हो जाय तो जब तक अमुक महात्मा को अमुक स्थान से न बुला लेना, हमारा मृतक शरीर न जाने देना।" ऐसा कह प्राणायाम लगा ध्यान में सो गया। साहूकार के बेटे की माता, पिता, स्त्री बहन सब ने उस की यह अवस्था देख व्याकुल हो रोना, पीटना प्रारम्भ किया। रोने की ध्वनि सुन टोला महल्ला के लोग भी साहूकार के धनिक होने के कारण बहुत कुछ इकट्ठे होगये। अब तो छोटी मोटी अमावास्या का सा मेला इकट्ठा होगया और सब के सब अपनी अपनी कह रोने लगे। माता बोली "बेटा हाय! मुझ अभागिनी को मौत भी नहीं और तुम्हारी यह दशा। हाय! चाहे मैं मर जाती पर तुम बच जाते।" इसी भांति पिता, स्त्री, बहन, टोला, महल्लावाले भी कह कह कर रो रहे थे। पश्चात् यह ठहरी कि अब इस के शव को श्मशान ले चलें। यह सोच उसके पिता तथा पड़ोसियों ने विमान बना उस पर साहूकार के बेटे को रख उसे उठा कर ले चले कि इतने में साहूकार के बेटे की मा को याद आया और उसने कहा कि-"आप लोग कृपा कर कुछ काल इस शव को रख दीजिये" और उसने अपने पति से कहा कि-' बेटे ने मरते समय यह कहा था कि यदि मैं मर जाऊँ तो अमुक

स्थान से अमुक महात्मा को जब तक न बुलवा लेना तब तक मेरा मृतक शरीर श्मशान को न जाने देना।" पिता यह सुन कर नंगे पैरों महात्मा जी के पास दौडा। पर महात्मा जी तो आगे से ही जानते थे, इससे उन्होंने एक पुडिया में आध पाव मिसरी बहुत बारीक पीस कर रख छोडी थी। साहूकार आ महात्मा जी के चरणों में गिर पडा और उसने कहा—"महाराज मेरे बेटे का यह हाल हुआ। उसने मरते समय कहा था कि जब तक आप को न बुला लेना, तब तक हमारे मृतक शरीर को श्मशान न जाने देना। सो महाराज, यदि आपके पास कुछ उपाय हो तो कीजिये। महाराज उस बेटे के बिना हम सब नाश हुआ जाता है। महाराज, चाहे हम मर जावें पर हमारा बेटा बना रहे।" महात्माजी ने कहा—"धीरज धरो घबडाओ नहीं मैं अभी चलता हूं।" अब तो महात्माजी मिश्री की पुडिया उठा साहूकार के साथ चल दिये महात्मा जी ज्योंही साहूकार के घर आये त्योंही उस बेटे की मा, बहन, स्त्री कुटम्बी, पडोसी सभी रोने और यह कहने लगे कि-'महात्माजी चाहे हम लोग मर जाय पर यह लडका जी जाय।" महात्माजी ने सब को धैर्य दे कहा कि—'आध सेर कपिला गौ का दूध शीघ्र लेआओ। जब दूध आया तो जो पिसी हुई मिश्री की पुडिया महात्मा जी के हाथ में थी, सब को दिखा कर महात्माजी ने कहा कि 'यह संखिया है" और उसे दूध में डाल प्रथम लडके की माता को बुलाया और कहा कि तुम अभी कहती थी कि चाहे हम मर जाय पर हमारा बेटा जी जाय, इससे इस जहर को तुम पी लो सो तुम अभी मर जाओगी पर तुम्हारा बेटा जी जायगा।" माता ने कहा—"महाराज, हमारी जन्मपत्री तो देखो, हमारे और बेटे होंगे या नहीं?" महात्माजी ने

कहा–' तुमने इसे नौ मास पेट में रक्खा और पाला पोषा है इसलिये 'कनिया का जाय और पेट का बासरा' वाली बात मत करो। इस दूध को पीलो।" माता ने कहा–"महाराज हमें आप पहले यह बात बता दें कि हमारे और बेटे होंगे या नही?" महात्मा जी ने समझ लिया कि यह दूध नहीं पी सकती, बातों में टाल रही है, अतः माता को अलग कर पिता को बुलाया और कहा कि—"आप हमारे यहा दौड़े गये थे और कहते थे कि चाहे हम मर जाय पर हमारा बेटा जी जाय, इस लिये आप इस दूध को पीलें। आप तो अभी मर जायँगे पर बेटा आपका जी जायगा।" पिता ने कहा—"महाराज, हमारी अवस्था तो अभी इस प्रकार की है कि और बच्चे हो सकते हैं।" महात्मा ने इन्हें भी पीछे हटा साहूकार के बेटे की स्त्री को बुलवाकर कहा कि–"तुमने इस के साथ भांवरें फेरी हैं और तुम्हारी शोभा इसी से है और तुम भी अभी यही कहती थी कि चाहें हम मर जाय पर हमारा पति जी जाय, इस लिये तुम इस दूध को पी लो। तुम तो अभी मर जाओगी और तुम्हारा पति जी उठेगा।" स्त्री ने कहा—"महाराज, यह जिया न जिया हमारे मां बाप के यहा बहुत धन है, हम वहां चली जायंगी और वहाँ अपना जीवन व्यतीत कर देंगी।" महात्मा ने उसे भी अलग किया। अब टोला महल्लावालों ने सोचा कि साहूकार के माता पिता स्त्री सब से तो महात्मा जी कह चुके, अब हम लोगों की बारी आई, इस कारण सब के सभी सरक गये। अब केवल वहा ५ मनुष्य शेष रह गये—महात्मा, साहूकार का बेटा, उसकी माता, पिता, स्त्री। तब तो महात्मा जी ने [illegible] देख कहा कि—"तुम हम पीलें!" माता पितादि ने उत्तर दिया कि–"महाराज, महात्माओं का तो परो[illegible] के ही

लिये जीवन होता है।' तब महात्मा ने बेटे की माता से कहा—"यदि तुम यह प्रतिज्ञा करो कि यदि हमारा बेटा जी उठेगा तो यह सब यथार्थ वृत्तान्त हम अपने बेटे से कह देंगी, तो हम दूध पी लें।" माता ने प्रतिज्ञा की। महात्मा ने मिश्री पड़ा दूध बड़े आनन्द से पी लिया और साहूकार के बेटे को प्राणायाम से जगा दिया और उसकी माता से कहा कि—"अब इससे वृत्तान्त यथार्थ यथार्थ कहो।" माता ने कहने में संकोच किया। महात्मा ने कहा—'यदि तुम कुछ संकोच करोगी तो शाप देकर तुम, तुम्हारे पति, वह तथा इस बेटे सबको अभी भस्म कर दूंगा।" ऐसा सुन साहूकार के बेटे की माँ को विवश हो सब कहना पड़ा। बच्चे ने सुन कर यह समझ लिया—

एकः पापानि कुरुते फलं भुङ्क्ते महाजनः।
भोक्तारो विप्रमुच्यन्ते कर्ता दोषेण लिप्यते॥

संसार में सिवा धर्म के तथा ईश्वर के सचमुच अपना कोई नहीं। ऐसा जान इनसे मोह छोड़ महात्माजी के साथ जा समाधि सीख, समाधि लगा उसने मोक्ष सुख को प्राप्त किया। सच है भर्तृहरिजी ने कहा है कि—

प्राप्ताः श्रियः सकलकामदुघास्ततः किं,
दत्तं पदं शिरसि विद्विषतां ततः किम्।
सन्मानिताः प्रणयिनो विभवैस्ततः किं,
कल्पं स्थितं तनुभृतां तनुभिस्ततः किम्॥

अर्थात्—इन नश्वर शरीरधारियों ने सब कामनाओं की देनेवाली लक्ष्मी पाई तो क्या, शत्रुओं के शिर पर पग दिया तो क्या, धन से मित्रों का सन्मान किया तो क्या फिर इस देह से कल्प भर जिये तो क्या अर्थात् परलोक न बनाया तो कुछ न किया।

जीर्णा कथा ततः किं सितममलपटं पट्टसूत्रं ततः किं,
एका भार्या ततः किं हयकरिसुगणैरावृतो वा ततः किम्।
भक्तं भुक्तं ततः किं कदशनमथवा वासरान्ते ततः किं,
व्यक्तज्योतिर्नवान्तर्मथितभवभयं वैभवं वा ततः किम् ॥

अर्थात्—पुरानी गुदड़ी धारण की तो क्या, उज्ज्वल निर्मल वस्त्र वा पीतांबर धारण किया तो क्या, एक ही स्त्री पास रही तो क्या, अथवा घोड़े हाथी सहित करोड़ स्त्रियाँ रहीं तो क्या, अच्छे व्यञ्जन भोजन किये वा कुत्सित अन्न सायङ्काल को खाया तो क्या, जिस से भव-भय नष्ट होजाय ऐसी ब्रह्म की ज्योति हृदय में न जगी तो बड़ा विभव ही पाया तो क्या?

८--परमात्मा सब देखते हैं; पापों से बचो

एक माली ने एक बाग बहुत ही अच्छा लगा रक्खा था जिस में हर प्रकार के फलफूल उपस्थित थे और माली स्वयं भेव अपने बाग का रक्षक था। एक बाबू साहब-एक बहुत ही अच्छा कोट जिस में कई एक पाकिट, भीतरी चोरगल्ले तथा कई पाकिट बाहर भी थे और पतलून भी बढ़िया पहिने हुए एक कीमती टोपी दिये तथा हाथ में छड़ी लिये हुए उस बागीचे को देखने के लिये पहुंचे और माली से पूछा कि—"हम आपके बगीचे को देखना चाहते हैं!" माली ने कहा—"आप बागीचे को प्रसन्नता पूर्वक देखिये परन्तु आप कृपाकर उसमें कोई फल फूल न तोड़ें।" बाबू साहब ने कहा—"वाहजी, यह भी कोई भलेमानसों की बातें हैं, भला यह आप क्या कहते हैं, कभी ऐसा हो सकता है?" बाबू साहब बगीचे के भीतर जा रविशों पर टहलने लगे और नाना प्रकार के वृक्षों,

पत्र, पुष्प, फल देख बाबू साहब का मन ललचाया और बाबू साहब ने यह सोचा कि यदि हम कुछ फल तोड अपने भीतरी चोरगल्लों में रख लें तो यहा माली किसी भांति न देख सकेगा, अत बाबू साहब ने फल तोड तोड भीतरी चोरगल्ले तो खूब ही ठूँस ठूँस कर भर लिये और बाहिरी पाकिटो में यह समझ कि यदि हम इनमें कुछ फल डाल लेंगे तो यह मालूम पडेगा कि कपडा फूला हुआ है, कुछ फल उनमें भी तोड़ तोड कर डाल बगीचे से चल कर निकलने लगे तो बगीचे का माली बगीचे के दरवाजे पर बैठा था, उसने कहा—'बाबू साहब, इस बगीचे का यह नियम है कि जो मनुष्य देखने जाता है, बिना झारा दिये नहीं जाने पाता है।" बाबू साहब ने कहा—"आप देख लीजिये, मैं खड़ा हूं।" तब तो माली ने कहा—' इस प्रकार झारा नहीं लिया जाता, यहां तो आप इस कोट को उतार कर अलग रखिये और मैं इसके एक एक पाकिट में हाथ डाल कर देखूँगा।" अब तो बाबू साहब हें हें करने लगे। माली ने कहा—"हें हें से कुछ न होगा। इस कोट को उतारिये।" अत बाबू साहब को विवश हो कोट उतारना पडा और माली ने पाकिटो में हाथ डाल देखा तो फल मौजूद ही थे। अब तो माली ने बाबू साहब को पकड अपने नियम के अनुसार दण्ड दे पुलिस के हवाले कर जेल को भेज दिया।

पाठको, दृष्टान्त तो यह हुआ परन्तु दार्ष्टान्त इसका यह है कि परमात्मारूपी माली और प्रकृतिरूप जीव को ले—

अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां, बह्वीः प्रजाः सृजमानां सरूपाः ।
अजो ह्येको जुषमाणोऽनुशेते, जहात्येनां भुक्तभोगामजोऽन्यः ॥

नाना भांति का संसाररूपी बगीचा रच कर स्वयमेव अपने आप ही संसार का रक्षक हो रहा है। यह जीवात्मा

शरीररूपी कोट पहिन बागीचे की सैर करने आता है, परन्तु उस माली ने (य० अ० ४० में) कहा था कि—

ईशावास्यमिदꣳसर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृध कस्य स्विद्धनम्॥

बगीचा तो देखने जाते हो पर यह जो कुछ संसाररूपी बाग है सब मुझ से भरा है, अत बागीचे में जा किसी वस्तु पर हाथ न डालना। ऐसा कह पुन आज्ञा दी कि—

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत ꣳ समाः।
एवं त्वयि नान्यथेऽतोस्ति न कर्म लिप्यते नरे॥

ऐसा जान कर यह स्मरण करते हुये कि बागीचे में किसी वस्तु को न छुयें सैर कर आइये, पर इसने यहां आकर नाना भांति के मद्य, मांस, हिंसा, चोरी, जारी आदि कुकर्मों से खूब ही पेट रूप चोर गल्ले भरे। इसने सोचा कि यहां मुझे कोई देखनेवाला थोड़े ही है, यह न सोचा कि—

एकोहमस्मीत्यात्मानं यत्त्व कल्याण मन्यसे।
नित्य हृद्यन्त स्थेषु पुण्यपापेक्षिता मुनि॥

वह परमात्मा सर्वत्र तथा आत्मा में भी पुण्य पाप का देखनेवाला मौजूद है, जीवात्मारूप बाबू बागीचे के बाहर चलकर नाना भांति के रूप बना अपने को यह दर्शाकर कि मैं बड़ा धर्मात्मा हूं बागीचे से अच्छी तरह निकलना चाहता है, पर यह साधारण मनुष्यों मे तो चल जाती है कि चाहे जैसे अधर्म करो पर एक उत्तम सफेद पोशाक पहरने, रूप बनाने, धन होने से सांसारिक लोग प्रतिष्ठा दे दिया करते हैं, क्योंकि सांसारिक मनुष्य तो व्यापक नहीं जो तुम्हारी भीतरी दशा जान सकें, किन्तु परमात्मा के यहां यह आडम्बर नहीं

चलता। जिस समय में संसाररूपी बगीचे के चिता रूप द्वार पर मनुष्य पहुंचता है तो इसका शरीररूपी कोट माली उतरवा कर अलग रखवा लेता है, यदि कोई चोरी नहीं तो उसे पारितोषिक और यदि कुछ फल फूल तलाशी में बरामद हुये तो दण्ड दे नाना प्रकार के योनिरुपी जेलखानों में अपने नियमरूपी दूतो के हाथ भेज कर्म का फल देता है।

९--पारस मणि की बटिया

एक महात्मा ने एक साहूकार को एक ऐसी पारसमणि की बटिया दी कि जिसको लोहे में छुआते ही लोहा सोना बन जाता था, परन्तु महात्मा ने यह कहा था कि बटिया मैं तुम्हें सात दिन के लिये देता हू, सात दिन पूरे होने पर मैं तुम से यह बटिया ले लूँगा। साहूकार ने बटिया पाते ही सोचा कि मेरे घर में तो लोहा सिवा हसिया, खुरपी, फावडा, कुदार के और है ही नहीं और बटिया केवल सात ही दिन को मिली है अत. उसने सोचा कि अभी दिन तो सात पड़े है इतने में लोहा खरीद कर आ सकता है ऐसा समझ एक आदमी कलकत्ता, दूसरा बम्बई भेजा और उन आदमियों से कहा कि लोहा जल्दी खरीद कर लाना। दो दिन में गाडी कलकत्ता आई, दो या ढाई दिन में बम्बई पहुची। पुन वहा लोहा खरीदते, गाडियों में लादते हुए दो दिन बीत गये। पुन दो दिन में फिर यहाँ रेलगाड़िया आई। इस भांति छै दिवस बीत गये। सातवें दिन साहूकार ने मालगाडियों से माल उतरवा कर सोचा कि यदि यहीं पारस पथरी छुआये देते हैं तो तात्या भील या दरोच सरीखे डाकू सब लूट लेंगे, अत लोहे को घर में भर कर तब पारस पथरी छुआयें, ऐसा समझ लोहा बैलगाडियो में भरा घर लाये। घर में दरवाजे

से लोहा बैलगाड़ियों से उतरवा उतरवा घर में भर रहे थे (यह समय सातवें दिन बारह बजे रात का था) तब तक महात्मा जी बटिया लेने के लिए आ गये। साहूकार ने महात्मा जी का बहुत कुछ आदर सत्कार किया। महात्माजी ने कहा—'वह बटिया लाइये।" साहूकार ने कहा—"महाराज, अब तक तो हम लोहा ही खरीदते रहे, कुछ काल गम खाइये।" महात्मा जी ने कहा—"मैं एक मिनट भी नहीं गम खा सकता, बटिया लाइये।" साहूकार ने कहा—"महाराज, अच्छा हम अभी जाकर लोहे में छुआये लेते हैं।" महात्मा जी ने कहा—"बस, आपकी अवधि हो गई, अब बटिया दे दीजिये।" साहूकार ने कहा—"अच्छा ये लो, हम छुआये लेते हैं।" महात्मा ने हाथ पकड बटिया छीन ली।

इस दृष्टान्त का दार्ष्टान्त यह है कि जीवात्मा रूप साहूकार को परमात्मारूपी महात्मा ने यह शरीररूपी पारसमणि की बटिया सात दिन के लिये (सात दिन का तात्पर्य यह है कि दिन सात ही होते हैं) दी थी कि इस पारसमणि पथरी से माया जंजाल विषयों से अलग हो मोक्षरूपी सोना बना लेना। पर यह जीवात्मारूपी साहूकार सातों दिन यानी सदैव लोहा ही खरीदता रहा अर्थात् विषयों में ही फसा रहा। जब महात्मा इनसे अवधि आने पर बटिया लेने गया तब कहते हैं परमेश्वर दो वर्ष या एक वर्ष या छै मास की और आयु दे तो हम कुआ बनवा लें, यज्ञ कर लें, योग साधन कर लें परन्तु वहां अवधि के पश्चात् एक मिनट की भी मोहलत नहीं, जैसा किसी कवि ने कहा है—

श्वःकार्यमद्य कुर्वीत पूर्वाह्णे चापराह्णिकम्।
नहि प्रतीक्षते मृत्युः कृतमस्याथवा कृतम्॥

जो काम करना हो उसकी आगे की प्रतीक्षा न करके अभी करे क्योंकि मौत यह नहीं देखती कि इसका यह काम शेष पड़ा है, इससे इसे इतने दिन के पश्चात् भक्षण करेगी। अब इस पारसमणि पथरी को यो ही व्यर्थ मत खोइये। यह मनुष्य शरीर बार बार नहीं मिलता। देखिये किसी कवि ने कहा है—

जन्मेद वन्ध्यता नीत भवभोगोपलिप्सया।
काचमूल्येन विक्रीतो हन्त चिन्तामणिर्मया॥

अर्थ—यह जन्म सांसारिक भोगों की लालसा से बन्धन में डाल दिया। हाय! मैंने चिन्तामणि को काच के समान बेच डाला। दूसरा कवि कहता है—

महता पुण्यपण्येन क्रीतेयं कायनौस्त्वया।
पारं दुःखोदधेर्गन्तु त्वरयावन्नभिद्यते॥

अर्थ—बडी पुण्यरूपी हाट से तूने यह मनुष्य देहरूपी नाव संसार रूपी समुद्र से पार जाने के लिये ली थी जब तक यह टूट न जाय तब तक इस समुद्र से पार जाने का शीघ्र शीघ्र यत्न कर।

१०—कुछ आगे के लिए भी कीजिये

एक राज्य में यह नियम था कि उसका प्रत्येक राजा १० वर्ष राज्य करने के पश्चात् वन को भेज दिया जाता था। कई एक राजा उस गद्दी पर बैठे परन्तु इस दुख से वे इतने दुखी थे कि जिसका पारावार नहीं और सोचते रहते थे कि यह सब सामान अब केवल हमारे पास ४ वर्ष है, २ वर्ष है १ वर्ष है, ६ मास है। इस दुख से उनका खाना पीना और आनन्द मनाना

बन्द थे। अनायास एक राजा साहब के यहां एक महात्मा आ गये। महात्मा ने कहा—"राजा, तू इतना दुखी क्यों है ?" राजा ने कहा—"महाराज, ६ मास के पश्चात् वन को भेज दिया जाऊंगा और ये राज्य के सम्पूर्ण पदार्थ छूट जायेंगे तब मुझे बड़ा कष्ट होगा। इसी कारण दुखी रहता हूं।" महात्मा ने कहा—'राजन्, उसके लिये इतना दुख क्यों करते हो यह तो थोड़ी सी बात है। आप को ६ मास के बाद जिस वन को जाना है अभी से राज्य के सम्पूर्ण पदार्थ क्यों नहीं धीरे धीरे उस वन को भेज देते हो ताकि वहाँ कष्ट न हो।' राजा ने वैसा ही किया और वह वन में जा आनन्द भोगने लगा।

इसका दृष्टान्त यो है कि इस जीवात्मारूपी राजा को कुछ दिनों के पश्चात् अन्य योनियों वा अन्य शरीरों की प्राप्ती हुआ करती है और वह शरीर तथा शरीर के साथ उपलब्ध पदार्थों एवं सम्बन्धियो के छूट जाने के शोक में शोकित होता है कि जाने दूसरे जन्म में मिले या नही। तो उसके लिये बताया कि यथाशक्ति तथा दान धर्म द्वारा क्यों न तू अपने पदार्थ धीरे धीरे इस प्रकार पहुचा दे कि तुझे पुनर्जन्म में वे सम्पूर्ण पदार्थ प्राप्त हों।

य ज्जीवेन तत् कुर्य्यात् येनामुत्र सुख भवेद्।

११—वैराग्य

एक राजा का मन्त्री अत्यन्त योग्य और बड़ा ही चतुर था तथा महाराज की सेना भी बड़ी प्रबल और पुष्ट थी। सभी अपना काम बड़े नियत समय पर किया करते थे परन्तु मन्त्री के चालबाज होने और बरगलाने से सम्पूर्ण सेना मन्त्री से मिल गई थी जिससे राजा को हर समय भय रहता था कि

जाने किस समय यह मन्त्री सेना ले मुझ पर धावा कर दे। एक दिन राजा रानी दोनों आनन्द में लेटे हुये थे तो रानी जी ने महाराज से कहा कि—"महाराज, मन्त्री का विरुद्ध रहना अच्छा नहीं, न जाने किस समय वह सेना ले धावा कर दे। इससे कल प्रात काल आप अपने बेटे को भेजें कि वह मन्त्री जी के मैल को हटा दे और वह आप से विरोध करना छोड़ आपके अनुकूल हो जाय।"

इसका दृष्टान्त यह है कि जीवात्मा रूपी राजा का मन रूपी मन्त्री बड़ा ही योग्य और चतुर है, जिसकी ही आज्ञा सम्पूर्ण कर्म जीव के होते हैं। इन्द्रिय रूप सेना से मन रूप मन्त्री जिस प्रकार चाहता है कर्म कराता है। परन्तु यह मन इतना चंचल है कि इसके लिये कहा है—

चंचलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम्।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्॥

देखिबे को दौरे तौ लटकि जाय वाही ओर सुनिबे को दौरे तो रसिक सरताज है। सूंघिबे को दौरे तौ अघाय न सुगन्ध करि खाइबे को दौरे तो न आवे महाराज है॥ भोगिबे को दौरे तो तृपति हू न काहू होय हनुमत कहे याको नेकहू न लाज है। काहू को न कह्यो करे, अपनी ही टेक धरे मन सों न कोऊ हम देख्यो दगाबाज है॥ १॥

बस, इस मन्त्री ने इन्द्रियरूप सेना अपने वशीभूत कर जब जीवात्मारूप राजा पर धावा करना चाहा तो बुद्धिरूपी रानी ने जीवात्मा रूप राजा से कहा—'महाराज आप अपने बेटे वैराग्य को मन्त्री मन के पास भेजिये ताकि बेटा वैराग्य जाकर मन्त्री के मन के मैल को हटा दे और मन्त्री आपके अनुकूल

हो जाय। ऐसा ही हुआ। धैर्य के जाते ही मन्त्री अनुकूल गया और जीवात्मा रूपी राजा का विजय हुआ।

१२—अब के न तब के

एक बार एक राजा ने अपने मन्त्री से कहा कि आप मनुष्य इस तरह के लाइये कि दो तब के और दो अब के और अब के न तब के। मन्त्री यह प्रश्न सुन चकित हो गया पर कुछ काल सोचने से मन्त्री महाराज की समझ में यह बात आ गई, अत उन्होंने ग्राम में आकर सन्यासी महात्माओं से प्रार्थना की कि आप कृपा कर कुछ देर के लिये हमारे राजा के यहाँ तक चलिये और दो राजाओं को बुलवा कर साथ लिया और दो हम में तुम में से ले जाकर राजा साहब से कहा—"महाराज वे छओं मनुष्य आ गये।" महाराज ने कहा—"लाओ।" मन्त्री प्रथम राजाओं को खड़ा किया और कहा कि—"महाराज, ये तब के हैं यानी पूर्व जन्म में किया था सो अब भोग रहे हैं।" पुन: दोनों सन्यासी महात्माओं को खड़ा किया और कहा —"ये अब के हैं यानी अब ये योगादि यज्ञों का पालन कर रहे हैं जिसका फल आगे पावेंगे।" और दो हम में तुम में से ले जाकर खड़े कर दिये और कहा—"ये अब के न तब के, अर्थात् न इन्होंने पूर्व जन्म में ही ऐसा कुछ सुकृत किया था जिससे कुछ ऐश्वर्य प्राप्त करते और अब भी इनके ऐसे ही कर्म हैं कि दूसरे जन्म में ऐश्वर्य पाना तो एक ओर रहा वरन् मनुष्य जन्म भी नहीं पा सकते।" एक कवि का वाक्य है—

> धर्मार्थकाममोक्षाणां यस्यैकोऽपि न विद्यते।
> अजागलस्तनस्यैव तस्य जन्म निरर्थकम्॥

१३—देह में खुजली

एक अन्धा किसी बड़े भारी मकान के भीतर पड़ गया। अब बेचारे को मार्ग मिलना कठिन हो गया, परन्तु अन्धे ने एक युक्ति सोची कि यदि दीवार पकड़े पकड़े इसके सहारे मैं चलूं तो दर्वाजा अवश्य मिल जायगा और अन्धे ने ऐसा ही किया। परन्तु दीवार पकड़े पकड़े जभी वह दर्वाजे के सामने आता तो उसकी देह में ऐसी खुजली उठती कि वह दोनों हाथों से दीवार का सहारा छोड़ खुजलाने लगता। इसी भांति उसने सैकड़ों चक्कर लगाये, पर हर बार दर्वाजा निकल जाता था और वह यो ही हाथ मलता रह जाता था।

इसका दृष्टान्त यो है कि यह जीवात्मारूपी अन्धा पुरुष योनिरूप मकान के घेरे में पड़ उससे निकलने का उद्योग करता है। यह ज्ञात रहे कि योनिरूपी घेरे के अन्दर से निकलने का दर्वाजा एक मात्र मनुष्य योनि ही है। पर इस जीवात्मा रूप अन्धे को जब जब मनुष्य योनि प्राप्त होती है तब तब उस मे इसे पञ्च विषय रूप खुजली उठा करती है और विषयों में ही इसकी उम्र व्यतीत हो जाती है और मनुष्य शरीर रूप दर्वाजा निकल जाता है। इस लिये सज्जनो ! विषयों में इस दर्वाजे को न निकालिये नहीं तो योनि रूपी मकानों के घेरे में ही चक्कर खाया करोगे। जैसा कि कवि ने कहा है—

> तृष्णाया विषयैः पूर्तिर्नैव कश्चित् कृतापुरा।
> करिष्यन्ति न चान्यैर्तर्भोगतृष्णा ततस्त्यजेत् ॥

हो जाय। ऐसा ही हुआ। बेटे के जाते ही मन्त्री अनुकूल हो गया और जीवात्मा रूपी राजा का विजय हुआ।

१२—अब के न तब के

एक बार एक राजा ने अपने मन्त्री से कहा कि आप ६ मनुष्य इस तरह के लाइये कि दो तब के और दो अब के और दो अब के न तब के। मन्त्री यह प्रश्न सुन चकित हो गया परन्तु कुछ काल सोचने से मन्त्री महाराज की समझ में यह बात आ गई, तब उन्होंने ग्राम में आकर सन्यासी महात्माओं से प्रार्थना की कि आप कृपा कर कुछ देर के लिये हमारे राजा के यहाँ तक चलिये और दो राजाओं को बुलवा कर साथ लिया और दो हम में तुम में से ले जाकर राजा साहब से कहा—"महाराज वे छ ओं मनुष्य आ गये।" महाराज ने कहा—"लाओ।" मन्त्री प्रथम राजाओं को खड़ा किया और कहा कि—"महाराज, ये तब के हैं यानी पूर्व जन्म में किया था सो अब भोग रहे हैं।" पुनः दोनों सन्यासी महात्माओं को खड़ा किया और कहा —"ये अब के हैं यानी अब ये योगादि यज्ञों का पालन कर रहे हैं जिसका फल आगे पावेंगे।" और दो हम में तुम में से ले जाकर खड़े कर दिये और कहा—"ये अब के न तब के, अर्थात् न इन्होंने पूर्व जन्म में ही ऐसा कुछ सुकृत किया था जिससे कुछ ऐश्वर्य प्राप्त करते और अब भी इनके ऐसे ही कर्म हैं कि दूसरे जन्म में ऐश्वर्य पाना तो एक ओर रहा वरन् मनुष्य जन्म भी नहीं पा सकते।" एक कवि का वाक्य है—

धर्मार्थकाममोक्षाणां यस्यैकोऽपि न विद्यते।
अजागलस्तनस्येव तस्य जन्म निरर्थकम्॥

१३—देह में खुजली

एक अन्धा किसी बड़े भारी मकान के भीतर पड़ गया। अब बेचारे को मार्ग मिलना कठिन हो गया, परन्तु अन्धे ने एक युक्ति सोची कि यदि दीवार पकड़े पकड़े इसके सहारे मैं चलूं तो दर्वाजा अवश्य मिल जायगा और अन्धे ने ऐसा ही किया। परन्तु दीवार पकड़े पकड़े जभी वह दर्वाजे के सामने आता तो उसकी देह में ऐसी खुजली उठती कि वह दोनो हाथों से दीवार का सहारा छोड़ खुजलाने लगता। इसी भांति उसने कैकड़ों चक्कर लगाये, पर हर बार दर्वाजा निकल जाता था और वह यो ही हाथ मलता रह जाता था।

इसका दृष्टान्त यो है कि यह जीवात्मारूपी अन्धा पुरुष योनिरूप मकान के घेरे में पड़ उससे निकलने का उद्योग करता है। यह ज्ञात रहे कि योनिरूपी घेरे के अन्दर से निकलने का दर्वाजा एक मात्र मनुष्य योनि ही है। पर इस जीवात्मा रूप अन्धे को जब जब मनुष्य योनि प्राप्त होती है तब तब उस में इसे पञ्च विषय रूप खुजली उठा करती है और विषयो में ही इसकी उम्र व्यतीत हो जाती है और मनुष्य शरीर रूप दर्वाजा निकल जाता है। इस लिये, सज्जनों! विषयों में इस दर्वाजे को न निकालिये नहीं तो योनि रूपी मकानो के घेरे मे ही चक्कर खाया करोगे। जैसा कि कवि ने कहा है—

तृष्णाया विषयैः पूर्तिर्नैव कश्चित् कदापुरा।
करिष्यन्ति न चान्यैर्तभोगतृष्णा समस्त्यपेत्॥

हो जाय। ऐसा ही हुआ। बेटे के जाते ही मन्त्री अनुकूल हो गया और जीवात्मा रूपी राजा का विजय हुआ।

१२—अब के न तब के

एक बार एक राजा ने अपने मन्त्री से कहा कि आप ६ मनुष्य इस तरह के लाइये कि दो तब के और दो अब के और दो अब के न तब के। मन्त्री यह प्रश्न सुन चकित हो गया परन्तु कुछ काल सोचने से मन्त्री महाराज की समझ में यह बात आ गई, अत उन्होंने ग्राम में आकर सन्यासी महात्माओं से प्रार्थना की कि आप कृपा कर कुछ देर के लिये हमारे राजा के यहाँ तक चलिये और दो राजाओं को बुलवा कर साथ लिया और दो हम में तुम में से ले जाकर राजा साहब से कहा—"महाराज वे छ ओं मनुष्य आ गये।" महाराज ने कहा—"लाओ।" मन्त्री प्रथम राजाओं को खडा किया और कहा कि—"महाराज, ये तब के हैं यानी पूर्व जन्म में किया था सो अब भोग रहे हैं।" पुन: दोनो सन्यासी महात्माओं को खडा किया और कहा —"ये अब के हैं यानी अब ये योगादि यज्ञों का पालन कर रहे हैं जिसका फल आगे पावेंगे।" और दो हम में तुम में से ले जाकर खडे कर दिये और कहा—"ये अब के न तब के, अर्थात् न इन्होंने पूर्व जन्म में ही ऐसा कुछ सुकृत किया था जिससे कुछ ऐश्वर्य्य प्राप्त करते और अब भी इनके ऐसे ही कर्म हैं कि दूसरे जन्म में ऐश्वर्य्य पाना तो एक ओर रहा वरन मनुष्य जन्म भी नहीं पा सकते।" एक कवि का वाक्य है—

> धर्मार्थकाममोक्षाणां यस्यैकोऽपि न विद्यते।
> अजागलस्तनस्येव तस्य जन्म निरर्थकम्॥

१३-देह में खुजली

एक अन्धा किसी बडे भारी मकान के भीतर पड गया। अब बेचारे को मार्ग मिलना कठिन हो गया, परन्तु अन्धे ने एक युक्ति सोची कि यदि दीवार पकड़े पकड़े इसके सहारे मैं चलूं तो दर्वाजा अवश्य मिल जायगा और अन्धे ने ऐसा ही किया। परन्तु दीवार पकडे पकडे जभी वह दर्वाजे के सामने आता तो उसकी देह में ऐसी खुजली उठती कि वह दोनों हाथों से दीवार का सहारा छोड खुजलाने लगता। इसी भांति उसने सैकडों चक्कर लगाये, पर हर बार दर्वाजा निकल जाता था और वह यों ही हाथ मलता रह जाता था।

इसका दृष्टान्त यों है कि यह जीवात्मारूपी अन्धा पुरुष योनिरूप मकान के घेरे में पड उससे निकलने का उद्योग करता है। यह याद रहे कि योनिरूपी घेरे के अन्दर से निकलने का दर्वाजा एक मात्र मनुष्य योनि ही है। पर इस जीवात्मा रूप अन्धे को जब जब मनुष्य योनि प्राप्त होती है तब तब उस में इसे पञ्च विषय रूप खुजली उठा करती है और विषयों में ही इसकी उम्र व्यतीत हो जाती है और मनुष्य शरीर रूप दर्वाजा निकल जाता है। इस लिये, सज्जनो ! विषयों में इस दर्वाजे को न निकालिये नहीं तो योनि रूपी मकानों के घेरे में ही चक्कर खाया करोगे। जैसा कि कवि ने कहा है—

तृष्णाया विषयैः पूर्तिर्नैव कश्चित् कृतापुरा।
करिष्यन्ति न चान्यैर्तभोगतृष्णा नरान्स्वयं॥

१४--देह होते हुए विदेह नाम क्यों?

एक बार महाराज जनक जी के मन्त्री ने उनसे पूछा कि—'महाराज, आपके देह होते हुये भी आपका नाम विदेह क्यों है?'' महाराजने कहा— 'इसका उत्तर हम तुम्हें कुछ दिवस बाद देंगे।' जब कुछ दिन व्यतीत हुये तो महाराजने एक दिन उस मन्त्री का निमन्त्रण किया और घर में सम्पूर्ण पदार्थ ऐसे बनवाये कि जिनमें किसी में भी नमक न पड़ा था और मन्त्री जी के भोजन करने के प्रथम ही एक ढिंढोरा इस प्रकार का पिटवा दिया कि "आज ४ बजे उक्त मन्त्री को फांसी दी जायगी" और ढिंढोरा पीटने वाले से कहा कि—"मन्त्री जी के द्वार पर तीन आवाजें लगा देना कि जिसमें मन्त्री सुन लें।" ऐसा ही हुआ। पश्चात् दो बजे महाराज जनक जी ने मन्त्री को भोजन के निमित्त बुलवाया और बड़े आदर से भोजन कराया। जब मन्त्री जी भोजन कर चुके तब महाराज जनक जी ने कहा–'मन्त्रीजी, यदि आप हमें बता दें कि किस किस भोजन में कैसा कैसा लवण था तो मैं आपको सूली से मुक्त कर दूं'।

मन्त्रीजी ने उत्तर दिया कि—"महाराज, मुझे मौत के भय से यह ध्यान न रहा कि किस भोजन में लवण है, किसमें नहीं मैं कैसे बताऊं?" तब तो महाराज जनक जी ने मन्त्री से कहा—"सुनिये, आप की सूली का समय चार बजे था और दो बजे आप भोजन करने बैठे थे, भोजन के समय से मौत के समय तक दो घन्टे की जिन्दगी की आप को पूर्ण आशा थी परन्तु फिर भी आपको लवण का ज्ञान शरीर, स्मरण-शक्ति, जिह्वा और घ्रान आदि के होते हुये भी न रहा किन्तु मुझे तो एक मिनट की भी जिन्दगी की पूर्ण आशा नहीं, अत निम्न

प्रकार तुम दो घन्टे का समय होते हुये भी देह होते हुये वि
देह हो गये इसी प्रकार एक मिनट की भी आयु की आशा न
रखता हुआ मैं सदैव विदेह रहता हूं। जनकजी का वाक्य है कि—

अनंतवत मेवित यस्य मे न स्ति किंचन ।
मिथिलाया प्रदीप्ताया न मे किंचन दह्यते ॥

१५--विषयों की असलियत

एक राजपुत्र एक दिन अपने ग्राम में घूमने गया। एका-
एक राजपुत्र की दृष्टि एक महल के ऊपर पड़ी। महल पर
एक सोलह वर्ष की कन्या अत्यन्त ही रूपवती स्नान करके
अपने केश सुखा रही थी। यह कन्या उसी राजपुत्र के पिता
राजा साहब के मन्त्रीजी की कन्या थी। राजपुत्र देख तुरन्त
ही मूर्छित हो गया और कुछ काल के पश्चात् जब इसकी
मूर्छा जागी तो फिर इस की दृष्टि महल की ओर गई परन्तु
फिर इसे वहां वह रूपवती न दिखलाई पड़ी। राजपुत्र अपने
घर लौट आया परन्तु घर आकर वह सब खान पान एक दम
छोड़ शोकभवन में लेट रहा। बहुत कुछ पूछने पर इसने
सच्चा २ हाल कह दिया। राजा अपने पुत्र की यह दशा देख
बड़े ही शोक में पड़ गया। मन्त्री राजा जी की यह दशा देख
अपने घर गया और अपनी कन्या से सम्पूर्ण वृतान्त कहा।
कन्या ने अपने पिता से कहा—"पिता जी इसके लिये राजा
और राजपुत्र क्यों दुखी हैं? आप जा कर राजपुत्र से कह
दीजिये कि आप उठिये, स्नान भोजन कीजिये, मेरी कन्या
आप से परसों मिलेगी।" मन्त्री ने ऐसा ही किया। राजपुत्र
ने यह सन्देशा सुन अत्यन्त प्रसन्न हो उठ कर स्नान भोजन
किये। मन्त्री जी जिस समय अपने घर गये तो उनकी कन्या

ने उनसे कहा कि—' पिता जी, मुझे एक जमालगोटा और ८० कूंडे मिट्टी के और ८० रूमाल रेशमी आज ही मंगवा दीजिये। पिता ने उसी समय ये सब चीज़ें मंगवा दीं। रूपवती ने ज्यों ही जमालगोटे का जुलाब लिया कि उसे दस्त पर दस्त आने प्रारम्भ हो गये। रूपवती हर बार उन्हीं कूंडों में पाखाने जाती और हर कूंडे पर जिसमें कि वह पाखाना हो आती थी एक रेशमी रूमाल ओढ़ा दिया करती थी। इस प्रकार वे सभी कूंडे सज गये और रूपवती की यह दशा हो गई कि उसका सम्पूर्ण शरीर पीला पड़ गया और इतनी दुबली हो गई कि मानो चारपाई में लग गई थी। वह टूटी सी खाट पर लेटी हुई थी और उसके चारों ओर मक्खियां भिनक रही थी और मल मूत्र सने कपड़े पहने थी। इस अवस्था में स्थित उसने अपने पिता मन्त्री से कहा कि—"पिता जी, अब आप राजपुत्र को ले आइये।" राजपुत्र पूर्ण रूप से सज धज बड़ी उमंग के साथ मन्त्री के साथ चल दिये। जब मन्त्री जी के महलों में प्रवेश करने लगे और ज्यों ही भीतर पहुंचे तो कुछ दुर्गन्धि आई। राजपुत्र ने रूमाल से अपनी नाक दबा कहा—"मन्त्री जी दुर्गन्ध काहे की आती है?" मन्त्री ने कहा—"होगी किसी चीज की, आप चले आइये?" पर बड़ी कठिनता से दुर्गन्ध सहन करते हुये राजपुत्र रूपवती तक पहुंचे। रूपवती की यह दशा देख राजपुत्र दंग रह गया कि—"अरे! इसकी क्या दशा हो गई! मैंने परसों इसे उस रूप में देखा था, आज क्या हो गया? रूपवती ने कहा—"महाराज, आइये" परन्तु राजपुत्र को रूपवती के पास जाना तो क्या बल्कि वहां खड़े रहने में मिनट मिनट में इतनी तक लीफ हो रही थी कि जिसका पारावार नहीं। रूपवती ने कहा—"महाराज, आप की प्रीति यदि मुझ से थी तो यह

दासी आप की सेवा में उपस्थित है और यदि मेरी खूबसूरती से प्रेम था तो वह कूंडे में भरी रक्खी है।" परन्तु इस मूढ़ राजपुत्र को फिर भी बोध न हुआ। इसने समझा कि खूबसूरती कोई वस्तु है जो कूंडे मे भरी रक्खी होगी। और ऊपर रेशमी रूमाल देख इसे ख्याल हुआ कि खूबसूरती कोई बड़ी उत्तम वस्तु होगी जिस पर कि रेशमी रूमाल पड़े हैं। राजपुत्र ने जाकर ज्योंही रूमाल खोले तो वहां पाखाना देख नाक दबा कर चल दिया और इस दृश्य से उसे ऐसा वैराग्य हुआ कि तमाम उमर उसने योगादि अङ्गों का पालन कर मोक्ष सुख को प्राप्त किया।

प्रिय सज्जनों! आप लोगों ने संसार के पदार्थों की खूबसूरती तथा चमकीलेपन की असलियत समझ ली होगी। किसी कवि ने कहा है—

> कदली स्तम्भ निस्सारे मसारेसार मार्गणम्।
>
> य करोति समम्मूढो जलबुद्बुद सन्निभा॥

संसार के चमकीले पदार्थों में सार ढूंढना इसी भांति है जैसे केले प्याज या करमकल्ले उधेड़ते जाइये, वक्कल ही वक्कल मिलेंगे।

१६--अष्टावक्र

एक बार महाराज जनक जी ने एक सभा की जिसमें बड़े बड़े विद्वानों को बुलाकर कहा कि हमें कोई ऐसा उपाय बताओ कि जिसमें २ घंटे में ईश्वर प्राप्त हो जाय। इस प्रकार वहां बहुत से पण्डित एकत्र हुये थे। उसी सभा में महाराज अष्टावक्र के पिता भी गये थे। महाराज अष्टावक्र जिस समय बाहर से घर आये तो अपनी माता से पूछा कि—"माता जी

आज पिताजी नही दिखलाई पड़ते, कहा गये हैं ?" माता ने कहा कि—"आज महाराज जनक की सभा में इस प्रकार का विषय उपस्थित है, आपके पिता वहां गये हैं।" महाराज अष्टावक्र ने कहा— 'माता जी आज्ञा हो तो भोजन के पश्चात् हम भी राजा जनक की वह सभा देख आवें ?" माता ने अष्टावक्र से कहा कि—' बेटा प्रथम तो तुम्हारी आठों गांठे टेढी हैं हाथ पैर से अपाहिज हो कहा कहिलते हुये जाओगे ? दूसरे तुम्हें देख सब हसेंगे।' पर अष्टावक्र जी तो बड़े विद्वान थे अत. माता से आज्ञा ले वे राजा जनक की सभा में जा पहुंचे। इनके पहुचते ही इन्हें आठों गाठ टेढ़ा देख सम्पूर्ण सभा के लोग हस पड़े," पर महाराज अष्टावक्रजी सभा के लोगों से दुगने हँसे। तव तो सभा के लोगो ने महाराज अष्टावक्र जी से पूछा कि "आप क्यों हसे ?" महाराज अष्टावक्र जी ने सभा के लोगों से कहा—"आप क्यों हसे ?" सभा के लोगों ने कहा—"हम तो आपका आठो गाठ टेढा शरीर देखकर हसे।"

तब तो महाराज अष्टावक्र ने कहा—"हम यो हसे कि तुम सब चमार हो, क्यो कि हड्डी चमड़े की परीक्षा चमार ही को होती है।" किन्तु राजा जनक ने महाराज अष्टावक्रजी का बड़ा ही सत्कार किया और अपना प्रश्न महाराज अष्टावक्र जी से भी किया। महाराज अष्टावक्र जी ने कहा कि— 'राजन, यदि हम आपको दो घन्टे में ईश्वर प्राप्त करा देंगे तो आप हमें क्या देंगे ?" महाराज जनक ने कहा- -"हम तुमको अपना सम्पूर्ण राज्य दे देंगे।"महाराज अष्टावक्र ने कहा कि- 'क्या राज्य तुम्हारा है ? क्या जिस समय आप पैदा हुये थे. राज्य साथ लाये थे ? आप तो खाली हाथ क्यहाँ क्यहाँ करते हुये उतपन्न हुये थे। तव तो महाराज जनक ने कहा कि—"महाराज राज्य के सिवाय तो हमारे पास कुछ नही हम आपको क्या दें ?" महाराज अष्टावक्र

के पालन करने में वे दृढ़ थे। ब्राह्मण के देश में एक बार अकाल पड़ा और जो कुछ सञ्चित अन्न था वह सब चुक गया। भिक्षावृत्ति धर्म नहीं, अन्न आवे तो कहाँ से आवे। अन्न तो तभी मिलता है जब खेतों में अन्न उपजता है। ब्राह्मण को नवोन्निद्र जानकर अन्नपान पहुँचाने लगे, परन्तु तो भी यथा समय आहार न मिलने से यह सब परिवार भूखों मरने लगा। इस परम कष्ट को धैर्य से सहन करते हुए ब्राह्मण ने कालक्षेप किया, किन्तु अपने कर्तव्य में तिल भर भी अन्तर न आने दिया। दुःख पर बड़े बड़े मोटे हिल जाते हैं, भार्या पेट की मार से स्वेच्छाचारिणी हो जाती है, पुत्र वा पुत्रियाँ साथ छोड़ अपने सुभीते की राह लेते हैं, माताओं ने भूख के मारे अपने नयनों के तारे एक मात्र बालक बेच दिये वा गर्भ में पेट ही पर आत्महत्या कर ली। सच कहा है—

वासुदेव जरा कष्ट कष्ट निर्धन जीवनम् ।
पुत्रशोक महाकष्ट कष्टातिकष्टकर क्षुधा ॥

अर्थात्—प्रथम तो बुढ़ापा ही दुःखदाई है, निर्धन जीवन और भी दुःखदाई है। पुत्र का मरण महा क्लेश है और क्षुधा तो सब से महान कष्ट है। गांधारी ने सौ पुत्रों का मरण देखने पर भी भूख से विकल हो भोजनोपाय किया था तो इस दीन ब्राह्मण का परिवार विचलित हो जाने तो क्या आश्चर्य है? किन्तु ऐसा नहीं हुआ। ब्राह्मण अपने नियत धर्म पर सकुटुम्ब स्थिर रहा। यद्यपि वह और उसकी पत्नी क्षुधार्त रहने से सूखकर ठठरी रह गई, पर उनका आत्मा बलवान् था अतएव वे अपने व्रत से न डिगे। इसी प्रकार पुत्र वा पुत्रवधू ने भी मर्यादा रक्खी। अस्तु इसी बुरे समय में एक दिन सेर भर जौ ब्राह्मण को प्राप्त हुए उसने उनके सत्तू बनवाये और पाव पाव सेर स्त्री पुत्रादि को बाँट दिए और पाव भर अपने लिये रख छोड़े कि इतने में—

—गाँव का रहनेवाला लाला हूं लेकिन किसी ने न सुना। यहाँ तक कि लालाजी के घरवालों ने भी न पहिचाना और लाला जी को मारते रहे। जब लाला जी ने देखा कि अब प्राण ही जाते हैं तब भाग खड़े हुये और वन में जा एक स्थान में बैठ रहे। पश्चात् महात्माजी जिस ओर लालाजी भाग कर गये थे, जाकर लालाजी से मिले और कहा —"कहो लाला जी फुरसत है?" लाला जी ने महात्मा से कहा—"महाराज, हम से जो कहो सो करें, हमें तमाम दिन फुरसत है। पर अब ऐसा उपाय कीजिये जिससे कि मैं अपने घर तो जाने पाऊं" महात्मा ने कहा कि "तो प्रतिज्ञा करो कि हम आज से नित्य पूजा, पाठ, सन्ध्या, अग्निहोत्र, परमात्मा का भजन करेंगे।" लालाजी ने प्रतिज्ञा की महात्माजी ने लालाजी को अपने साथ ले उनके घर पहुंचा दिया।

इसका दार्ष्टान्त यो है कि जीवात्मा रूपी लाला को परमात्मा रूपी महात्मा ने उपदेश दिया था—

अहरहस्सन्ध्यामुपासीत तस्तारहोरात्रस्य संयोगे ब्राह्मणः सन्ध्यामुपासीत उद्यन्तमस्त यान्तमादित्यमभिध्यायन न तिष्ठति तु य पूर्वां साय साय ग्रहपतिर्नो प्रातः प्रातः ग्रहपतिर्नो।

नित्य प्रातःकाल से उठते ही ब्रह्मयज्ञ, पितृयज्ञ, भूतयज्ञ, नृयज्ञ आदि स्वधर्म का पालन, सबसे मेलमिलाप किया करो, पर इन्हें तो 'आदित्यस्य गता गतैरहरहः' सांसारिक कामों तथा विषयों से फुरसत ही नहीं। परमात्मा ने सोचा कि इस प्रकार यह न मानेगा अतः उसने अतिवृष्टि, अनावृष्टि, अतिशीत, अति-उष्ण, नाना प्रकार के प्लेगादि रोगो के द्वारा इस फुरसत न पाने वाले पापी जीवात्मा शैतान को खूब ही ठीक कराया। तब ही यह दुःख में पड़ महात्मा के चरणों में गिर कर बोला

—"महाराज, जो कहो सो करें।" जैसे आज कल संसार वैसे तो कभी नाम नहीं लेते पर दु ख पडने पर 'हाय राम य राम ! हे ईश्वर ! कहीं कथा मानते हैं, कहीं होम मानते हैं, न्तु किन्हीं भाषा के कवि ने कहा है—

दु.ख में सुमिरन सब करैं, सुख में करै न कोय।
सुख मे जो सुमिरन करै, तो दु ख काहे को होय॥

सलिये क्यों न हम सब लोग आगे से ही अपने कर्त्तव्य कर्मों पालन करें ताकि इस दु ख के देखने की नौबत ही न आये।

१८—ऋषिसन्तानों का त्याग

हात्मा कणाद जब सब काश्तकार अपने खेत काट लेते थे उनका शीला बीन लिया जाता था और उन खेतों में पशु- जाते थे और,जब देखते कि अब इस खेत में काश्तकार कुछ नहीं रहा तब वे एक एक कण बीन कर अपना निर्वाह र करते थे, इसलिये उनका नाम कणाद (अर्थात् 'कणान् । कणाद'. कण बीन बीन कर खानेवाला=कणाद) हुआ। भारत तो महात्मा अपना निर्वाह करने और हमारे लिये पिक दर्शन' जैसा रत्न कितने कितने भारी कष्ट उठा कर थे, जिसको हम आज पढते भी नहीं हैं। ये महात्मा केवल में एक लंगोटी लगाये नङ्ग धडङ्ग वन में रहा करते थे जिस वन में वे रहा करते थे, जब उस वन के राजा के खबर पहुची कि आपके राज्य में एक महात्मा इस प्रकार हा करते हैं और शास्त्रों में लिखा है कि यदि किसी राजा ज्य में कोई सच्चा महात्मा कष्टित रहे तो राजा का सम्पूर्ण

राज्य तथा पुण्य, दान, धर्म, तप, सब का सभी नष्ट होजाता है। ऐसा जान राजा जी ने अपने कामदारों के हाथ कुछ द्रव्य महात्मा कपाट की सेवा में भेजा। वे कामदार जाकर द्रव्य ले सामने खड़े हो गये। जब कुछ काल के पश्चात् महात्मा ने ध्यान से कपाट खोले तो पूछा—"तुम कौन हो, और कहां आये हो?" कामदारों ने कहा—"महाराज आपके लिये यहां के राजा साहब ने कुछ द्रव्य भेजा है।" महात्मा जी ने कहा—"तुम जाकर किसी कंगले को दे दो।" कामदार यह शब्द सुन हैरान थे कि इस महात्मा के पास केवल एक लंगोटी है पर यह कहता है कि तुम यह द्रव्य जाकर किसी कंगले को दे दो। कामदारों ने राजा से आकर वैसा ही कह दिया। राजा ने इस बात को अपनी सभा में उपस्थित किया। वहां यह निश्चय हुआ कि राजा साहब की हैसियत के अनुसार यह सत्कार न था, इस लिये महात्मा जी ने लौटा दिया है। ऐसा सोच कर उस द्रव्य को दुगुण कर पुन: कामदारों को राजा साहब ने भेजा। पर महात्माजी ने फिर भी यही कहा कि तुम जाकर किसी कंगले को दे दो। राजा साहब ने पुन: इस बात को सभा में प्रगट किया। अब की बार यह निश्चय हुआ कि राजा साहब स्वयमेव इसका चौगुना द्रव्य और बहुत सा सामान दुसाले आदि ले कर जाय और ऐसा ही हुआ। जब राजा साहब पहुंचे और उन्होंने सब सामान महात्मा जी के सन्मुख उपस्थित किया तो महात्माजी ने कहा—"तुम इस सामान को जाकर किसी कंगले को दे दो।" राजा ने हाथ जोड़ कर कहा—"महात्माजी, अपराध क्षमा हो आपके पास सिवाय एक लंगोटी के और कुछ तो दीखता ही नहीं और आप इस सामान के लिये यह कह रहे हो कि तुम जाकर किसी कंगले को दे दो। हमें तो आप से विशेष कंगला और कोई

दीखता नहीं। महात्मा ने फिर वही कहा 'कि तुम जाकर किसी कंगले को दे दो। राजा विवश हो लौट आया और जब रात में अपनी चित्रसारी पर जाकर लेटा तो उसने अपनी रानी से संपूर्ण वृत्तान्त कहा। रानीजी ने कहा कि 'आपने बड़ी भूल की। ऐसे विद्वान तत्वदर्शी को आप द्रव्य और दुशाले दिखलाने गए थे। उनके पास क्या नहीं है? और दूसरी भूल यह की कि ऐसे महात्मा के पास पहुंच कर कुछ रसायन विद्या हो सीख आते जिससे कि राज्य के से कड़ो गरीबों का काम चलता। इस से अब भी कुशल है, आप महात्मा के पास जाकर पूछ आइये। आधी रात का समय है। राजा उसी समय उठकर महात्मा जी के पास गया। ज्योंही राजाजी पहुंचे कि महात्माजी ने पूछा "कौन है?" राजा ने उत्तर दिया कि— 'वही दिनवाला आपका सेवक राजा है।" महात्मा ने कहा— 'आप इतने समय क्या आये?" राजा ने कहा—"महाराज, हमारा अपराध क्षमा हो जो हम आपको अपनी दौलत दिखाते रहे। अब हमें आप कोई ऐसी रसायन विद्या बता दें जिससे हमारे राज्य के दीनों का पालन हो और हम और बहुत कुछ पुण्य दान कर सकें।" महात्मा जी ने कहा—"राजन्, मैं दिन में तेरे दर्वाजे नहीं गया, लेकिन अब आधी रात का समय है और तू मेरे दर्वाजे खड़ा है। अब बतला कि मैं कंगला हूं या तू कंगला है?" राजा साहब ने महात्मा के चरणों पर सिर नवा क्षमा मांगी। पुनः महात्मा ने राजा को रसायन विद्या यानी ब्रह्म विद्या का उपदेश किया और विषय रूपी लोहे को सोना बनाना बता दिया।

१६–महात्मा कैयट का त्याग

संसार में ऐसा कौन व्यक्ति होगा जो महात्मा कैयट से चिर

नाहं बिभेमि सुरराजवज्रान्न त्र्यक्षशूलान्न यमस्य दण्डात् ।
नाग्नेर्न सोमौ न रविर्नितापात् शङ्काम्यहं ब्रह्मकुलापमानात् ॥

अर्थ—मैं इन्द्र के वज्र से नही डरता और न महादेव के त्रिशूल ही से डरता हूं, न यमराज के दण्ड ही से डरता हूं, न अग्नि से और न चन्द्रमा से न सूर्य्य से, इनमें से किसी से किंचित् मात्र भी नही डरता, मुझे डर है तो केवल इतना कि कहीं ब्राह्मणों के कुल का मुझ से अपमान न हो जाय। यही नही बल्कि देखिये रामचन्द्र ने कहा है—

विप्रप्रसादात् धरणीधरोऽहं, विप्रप्रसादात् कमलावरोऽहं ।
विप्रप्रसादात् अजिताजितोऽहं विप्रप्रसादात् मम राम नाम ॥

अर्थ—ब्राह्मणों ही के प्रसाद से मैं धरणीधर हुआ और ब्राह्मणों ही के प्रताप से धनुष तोड़ सीता को व्याहा, विप्रों के ही प्रसाद से लङ्का फतेह की और ब्राह्मणों ही के प्रसाद से हमारा राम नाम है। तथा तुलसी दास ने भी कहा है—

करत अभेद विप्र-पद-पूजा। यह मम प्रिय उपाय न दूजा ॥

परन्तु आज कल तो निमन्त्रण आने पर यह दशा होती है जैसा कि एक बार एक ब्राह्मण के घर पर निमन्त्रण आया तो उस ब्राह्मण के बालक ने कहा कि—

ऊर्ध्वं गच्छन्ति डकारा अधो वायुर्न गच्छति ।
निमन्त्रणमागतं द्वारे किं करोमि पितामह ॥

अर्थ—खट्टी डकारें ऊपर को आ रही हैं, नीचे अपान वायु निकलती नहीं निमन्त्रण दूसरा दरवाजे पर आया, पिता जी क्या करूं? अब पिता का उत्तर सुनिये—

बालक वचनं श्रुत्वा निमन्त्रणं मन्यते ध्रुवम् ।
मृत्युर्जन्म पुनरेव परान्नञ्च दुर्लभम् ॥

ने कहा कि—"कोई अपनी चीज दीजिये?" महाराज जनक ने कहा कि—"हमारे पास हमारी चीज और क्या है?" महाराज अष्टावक्र ने कहा कि—"आप अपना मन हमें दे दीजिये तो हम आपको ईश्वर से मिला दें।" बस जहा महाराज जनक ने अपना मन ठहराया वहीं महाराज को ब्रह्मानन्द का अनुभव होने लगा और बड़ा ही आनन्द प्राप्त हुआ, क्योंकि कठोपनिषद् मे कहा भी है

मनमेवेदमाप्तव्यं नेह नानाऽस्ति किंचन ।
मृत्योः स मृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति ॥

अर्थात्—शुद्ध मन से ही परमेश्वर प्राप्त हो सकता है।

१७—क्या करें फुरसत नहीं मिलती

एक लालाजी से एक महात्मा जी जब कभी यह कहते कि लालाजी कुछ सन्ध्या, गायत्री, होम, यज्ञ परमेश्वर का भजन किया करो तब तब लालाजी तुरन्त ही यह उत्तर दे देते थे "क्या करें जनाब फुरसत नही मिलती।" महात्मा ने सोचा कि यह इस तरह न मानेगा। अब एक दिन लालाजी जब कि पाखाने जा रहे थे, महात्मा जी ने गांव में जाकर यह शोर कर दिया कि एक शैतान इस किस्म का (बस इस किस्म के वर्णन में महात्मा जी ने लाला की सब हुलिया वर्णन कर दी) आया है उसने कई समीप २ के गावों में कितने ही मनुष्य मार डाले और खा गया और वह शैतान अगर गाव में घुस जाता है तो फिर निकाले नहीं निकलता है इस लिये सब गाव के लोग तैय्यार हो जाओ। बस गाववाले कोई लाठी, कोई डण्डा, कोई ढेले ले ले तैय्यार हो गये और ज्यों ही लालाजी आये तो गांव के लोगों ने लालाजी को बेहद पीटा। लालाजी ने सब कुछ कहा कि मैं इसी

कृत जप्यान्हिकाग्नीतु हुत्वा चाग्नि यथाविधि।
कुडव कुडव सर्व्वे व्यभजत तपस्विनः॥

अश्वमेध प० अ० ६० ।

अर्थ—जप और अग्निहोत्र करके ब्राह्मण भोजन करने के विचार में ही था कि इतने में कपोत में मुला की भाति द्वार पर कुछ आहट हुई। जान पड़ा कि कोई अतिथि अभ्यागत है। यदि और कोई होता तो ऐसे समय चुप हो जाता और किंवाड़ न खोलता, परन्तु कपोती इसके विरुद्ध प्रसन्न हुआ। उसने सहर्ष द्वार खोल दिया और अतिथि को बड़े आदर से कुटी में लिया लाया। ब्राह्मण को अर्घपाद्य से अर्चित कर भोजन के लिए निवेदन किया। अतिथि के आने से छै दिन का भूखा सारा परिवार खाने से रुक गया। आर्य्य धर्म-शास्त्र की यही मर्य्यादा है कि अभ्यागत को जिमाने के पीछे घर वाले भोजन करें। कपोती ने अपने भाग के सत्तू उस अतिथि के भोजनार्थ परोस दिये जिन्हें वह रखते ही चाट गया और उसका पेट न भरा। अतिथि की और इच्छा देख कपोती विचारने लगा कि अब कहां से दिया जाय जो गह तृप्त हो। कपोती को चिन्ताकुल देख उस की वीर पत्नी ब्राह्मणी ने कहा—"महाराज, क्यों चिन्ता करते हो? मेरा भाग भी दे दीजिये।" यह सुन कर ब्राह्मण चहुक उठा। वह जानता था कि ब्राह्मणी छै दिन की भूखी है। कपोती कहने लगा कि—"भार्ये, एक तो तुम वृद्ध हो तिस पर आपत्काल में यथासमय अन्न न पाने से कृश हो रही हो। तुम्हारी आकृति पर श्रम और ग्लानि भासित होती है। माँस तुम्हारे शरीर पर नहीं रहा, केवल अस्थि चर्म अवशिष्ट है और तुम उठने बैठने में कंपित कलेवर हो रही हो अतएव तुम्हारा भाग देते हुए मुझे ग्लानि होती है। पखेरू और दूसरे जानवरों के मादा भी बचाने और पालन करने

योग्य होते हैं, कारण कि सन्तानोत्पत्ति की भूमि नारी है। इसी से नरों का पालन होता और लोक परलोक सम्बन्धी कार्य्य चलते हैं।

नवेत्ति कर्दतो भ र्यां रक्षणे यो नृप पुमान्।
अयशो महाच प्राप्नोति नरकाश्चैव गच्छति॥

अर्थ—जो पुरुष स्त्री की रक्षा करने में असमर्थ होता है वह बड़ा अपयश पाता है और नरकों में भेजा जाता है। यह सुन कर वृद्ध तपस्विनी ने उत्तर दिया—

इत्युक्त्वा सा तत प्राह धर्तायोनौ समौद्विज।
त्वत्तु मस्थ चतुर्भाग शृङ्गाणाम मर्मादये॥
रान्य रतिश्च धर्मश्च स्वर्गश्च गुणनिर्जितः।
स्त्रीणां पतिसमाधीन कांक्षित च द्विजपथ॥
ऋतुर्माता पिता बीज दैवत परमं पतिः।
भर्त्तु पसादान्नारीणां रति पुत्र फळ तथा॥
पा लनाद्धि पतिस्त्व मे भर्तासि भरणाच मे।
पुत्रदानाद्वरदाश्तस्मात्सक्तून प्रयच्छ मे॥

अर्थ—हे द्विजश्रेष्ठ! मेरा और आपका धर्म्म में साथ है। स्त्री के व्रत धर्म पति के अधीन होते हैं। ऋतु माता पिता बीज परम देवता पति धर्म शास्त्र में कहा है। भक्ति ही के प्रसाद से स्त्री को सुख और पुत्र लाभ होता है। मेरा आप पालन करते हैं इस कारण पति, और भरण करने से भर्ता हैं, और पुत्रदान देने से वरदाता हैं। सो कृपया सत्तुओं का देना स्वीकार करें। अभ्यागत का भग्न गृहस्थ के घर से असंतुष्ट जाना शास्त्र-विरुद्ध है, अतएव मेरे जीवन मरण का विचार छोड़ अतिथि को तृप्त कीजिये।

वस्तुतः विदुषी ब्राह्मणी का यह उत्तर धर्मसहोदर था अतः ब्राह्मण को कोई बात दोहराने योग्य प्रतीत नहीं हुई। सचमुच धर्म में स्त्री पुरुष का सङ्ग और साझा है, इसी कारण यह अर्धाङ्गिनी कहाती है। विवाह के समय होम के निकट चार भलेमानसों में बैठ स्त्री पुरुष यही प्रतिज्ञा करते हैं कि हम दोनों एक मन होकर रहेंगे, परस्पर एक दूसरे की प्रसन्नता से कार्य करेंगे और धर्म के कामों में समानता से भाग लेंगे। पति ने अपना आहार अतिथि को खिला दिया है वह अब के दिन तक अपने नियम के अनुसार भोजन नहीं कर सकता, पति भूख से व्याकुल रहे स्त्री पेट भर कर सुख की नींद सोवे, यह बात पतिव्रता ब्राह्मणी को किसी प्रकार स्वीकार न हुई। उसने अपना भाग अतिथि को खिला दिया। परन्तु इतने पर भी अतिथि की उदर दरी न भरी, तब ब्राह्मण और ब्राह्मणी सोच में पड़े। माता पिता को सोच विचार में डूबा जान कर पितृभक्त आज्ञाकारी पुत्र भी अपना भाग देने लगा। उसने इस बात पर किञ्चित् ध्यान न दिया कि मेरा प्राण रहेगा या पलायन कर जावेगा, कल माता से 'मा' यह कह कर पुकारने की शक्ति रहेगी या नहीं। पिता का प्रण रहना चाहिये। पिता ने जिस अतिथि को सादर बुलाया वह कुटी से भूखा जायगा, यह बड़ी ग्लानि और मानहानि की बात है। पिता का प्यारा पुत्र कहने लगा—

सक्तू निमान् प्रगृह्य त्वं देहि विप्राय सत्तम।
इत्येव सुकृतं मन्ये तस्मादेवं करोम्यहम् ॥
भवान्हि परिपाल्यो मे सर्वदैव प्रयत्नतः।
साधूनां वाञ्छितं यस्मात्पितुर्वृद्धस्य पालनम् ॥
पुत्रार्थो विहितो ह्येष वार्द्धक्ये परिपालनम्।

श्रुतिरपादि निर्पे त्रिु लोकेषु शाश्वती ॥

अर्थ—इन सत्तुओं को भी जो मेरे भाग के हैं अतिथि को खिला दीजिये, इसको मैं परम सुकृत मानता हू। आपने मुझे पाला और सदा रक्षा की है, यह शरीर आप ही का है वृद्ध पिता की आज्ञा का पालन करना शिष्ट सम्मत है पुत्र के होने का प्रयोजन यही है कि वह वृद्ध पितरो की सेवा करे, श्रुति निरन्तर तीनो लोक के लिये यही उपदेश करती है।

पुत्र की अमायिक भक्ति और ज्ञान भरे वचन सुन कर वृद्ध पिता की आँखें डबडबा आई। वह सोचता है कि आज आहार न मिलने से पुत्र को आगामि पष्ठकाल तक १२ दिन का अन्तर पडेगा, इस बीच यदि चिरंजीवि को कुछ अनिष्ट हुआ तो मैं पुत्रघ्न कहा कर किस प्रकार मुह दिखाऊंगा और यह ब्राह्मणी किसका मुह देख जीवन धारण करेगी? बुढापे मे एक मात्र अन्धो की यही लकडी है, पुत्रबधू की जवानी की नदी पार करने को यही नाव है और अपने वंश की भावी उन्नति का यही मार्ग है। पुत्र की अमङ्गल वार्ता जान उसकी वधू भी प्राण विसर्जन करेगी। संसार में मेरा अपयश होगा। मेरी आँख का तारा क्या मुझे छोड जायगा! मै किस प्रकार प्राण रक्खूंगा? बूढे की आखों के आगे अंधेरा छा गया। पुत्र निधन वार्ता के स्मरण ने उसे फिर एकाएक चौका दिया, मानो स्वप्न देख कर नींद खुली हो। बुड्ढे ने आँख उठा कर देखा तो पुत्र सत्तू लिये हाथ जोडे खडा है। वह उसे आँख फाड फाड कर देखने लगा। पुत्र को अक्षत देख पिता को ढाढस आया और ज्ञान का तेज उसके हृदय पर फिर अपना प्रभाव करने लगा। तपस्वी को धीरज हुआ ज्ञानियो पर भी कभी अज्ञान आक्रमण करता है, परन्तु वे क्षण भर ही में

सचेत हो जाते है, क्योंकि उनका आत्मा बलवान होता है। यह आत्मिक उन्नति प्राचीन समयमें हमारे देश मे बहुत थी। यदि ऐसा न होता तो राम कभी वन को न जाते एवं लक्ष्मण जी उस घोर विपत्ति मे उनका साथ न देते, न हरिश्चन्द्र अपने मृत पुत्र को गोद में लिये प्यारी भार्य्या से कर मागते। अस्तु पिता ने चैतन्य हो पुत्र को आशीर्वाद देते हुए कहा कि—"प्राण प्रिय दीर्घायु होकर सुपुत्रों को उत्पन्न करनेवाले हो। पुत्र से अन्य पुत्रों की उत्पत्ति होने पर पिता कृतकृत्य होता है किन्तु तेरे भूखे रहने से बलक्षय होगा और आगामि कुलवृद्धि रुक जावेगा। बालकों की भूख बलवती होती है। मैं वृद्ध हू। मुझे क्षुधा बहुत नहीं सताती। मैं चिरकाल मे आहार पाने में उपेक्षा करता आया हू इस कारण भूख प्यास रोकने में सहनशील हो गया हू। तेरे रहते हुए मुझे मरने का भय और सोच नही।"

पाठक विचारिये तो सही, कितनी कठिन बात है कि पिता अपने पुत्र को, नही नही अपने हृत्पिण्ड को भूखा देखे और प्राणों से अधिक प्यारे का भाग सहसा किसी को दे दे। पशु पक्षी तक अपने बच्चों को चराते है, क्या पुरुष क्या स्त्री सारा जगत् मोह सरिता में गोते खा रहा है। पिता को धर्म सकट में पडा देख पुत्र ने फिर कहा—

> अपत्यमस्मत पुंसस्त्राणात्पुत्र इति स्मृत ।
> आत्मापुत्रस्मृतस्तस्मा त्राह्यात्मानिमह त्वना ॥

अर्थ—हे पिता! मैं तेरी सन्तान हू, पिता की रक्षा करने ही से वह पुत्र कहाता है। आत्मा ही पुत्र कहा है और मैं तेरा आत्मा हू इस कारण आत्मा ही से आत्मा का त्राण होना चाहिये।

यह धार्मिक वचन पिता के मनमें बैठगया। उसका आत्मा धर्म से जाग्रत था। दृगरथ ने मोह माराना छोड यज्ञ की रक्षा

के लिये विश्वामित्र के साथ राम को कर दिया था तो इस तपस्वी कपोती ने भी प्राणोपम पुत्र का बारह दिन तक क्षुधा पीडित रहना स्वीकार किया किन्तु अतिथी को सन्तुष्ट करने से मु ह न मोडा। 'हे सते हैं सते ! पुत्र का भाग भी अभ्यागत को खिला दिया किन्तु अतिथी न जाने कब का भूखा था यह भी सत्तू पो छ कर खा गया परन्तु उसकी भूख न गई।'' कपोती लज्जित और विस्मित हुआ। अतिथी को तृप्त करना धर्म है जिसके लिये ब्राह्मण अपना और अपनी प्रिय भार्या का भाग दे चुका है प्राणप्रिय पुत्र की होनहार गति की कुछ भी चिन्ता न करके उसका भाग भी खिला दिया है। सारा परिवार किस प्रकार दिन काटेगा, इसका भी उसे कुछ सोच नहीं है। सोच है तो केवल इस बात का कि अतिथी भूखा न रहे। यही बात उसे व्याकुल कर रही है। धन्य तपस्वी का हृदय! कपोती यही सोच रहा था कि उसकी साध्वी पुत्रवधू सन्मुख आकर उप स्थित हुई। लज्जा से उसकी दृष्टि नीची है, सत्तू की पोटरी हाथ में है, नम्रता से शरीर झुक रहा है, न उसको इस समय भूख है न आगे भूख लगने की चिन्ता है। पतिव्रता तपस्विनी देख चुकी है कि उसके सास ससुर ने अपना अपना भाग अतिथि को सानन्द खिला दिया है, पति देव ने भी देह-मोह छोड अपना हिस्सा जिमा दिया है फिर वह सा सी कब रह सकती है? वह भी अपने पति की अनुगामिनी है सास ससुर की मर्यादा पर चलनेवाली है। पुत्र वधु ने हाथ जोड कर कहा कि—''ये पाव सेर सत्तू मेरे पास हैं इन्हें भी अतिथी को खिला कर सन्तुष्ट कीजिये।'' वृद्ध श्वसुर उसकी आकृति देख दया के मन्दिर मे जाता है सहसा कुछ कहने को समर्थ नहीं होता जो नाना प्रकार की खाद्य वस्तुओं से लाड लडाने योग्य है, उसका आहार हरण कर दूसरे को देना कैसे कहे की बात है

करानी वह देवी का खिलौना भी अन्य को देते मनुष्य का मन नहीं दुखता फिर भूखो का भोजन छीन कर अतिथि को दे देना कैसा नृशंस और कठोर व्यापार है, विशेषता स्त्री जाति का जो अपने आश्रय है। पुत्रवधु के कहने पर ब्राह्मण सम्मत न हुआ। उसने कहा कि—

वातातप विशीर्णांगीं त्वां विवर्णां निरीक्षये।
कर्शिता सु व्रताचारे क्षुधा विह्वल चेतसम्॥
कथं सक्तून् ग्रहीष्यामि भूत्वा धर्मोपघातकः।
कल्याण वृत्ते कल्याणि नैवन्त्वं वक्तुमर्हसि॥
षष्ठे काले व्रतवती शौचशीलतपान्विता।
कृच्छ्रवृत्ति निराहारा द्रक्ष्यामि त्वां कथं शुभे॥
बाला क्षुधार्ता नारी च रक्ष्या त्वं सततं मया।
उपवास परिश्रान्ता त्वं हि बान्धवनन्दिनी॥

अर्थ—हे प्यारी वधू, धूप से कुम्हलाई हुई लज्जावती वनस्पति के समान मैं तुझको उदास देखता हूं। व्रत आचार करते करते तेरा भी तन क्षीण हो गया है। भूख से तेरा चित्त विह्वल लज्जित होता है। निराहार कृच्छ्र व्रत करने से तेरे हाड निकल आये हैं मांस के सूखने से हाथो की रगें खुल रही हैं। बाला, क्षुधार्त और नारी होने से तू निरन्तर दया पात्री है तिस पर छे दिन के उपवास से परिश्रांत हो रही है मैं धर्म का घातक होकर किस प्रकार तेरे सत्तुओं को ग्रहण करूं तुझको आग्रह न करना चाहिये।

इसके उत्तर में पुत्रवधू ने कैसा धर्म सम्मत वचन कहा है जो हमारी प्यारी बहनों के ध्यान देने योग्य हैं वे इस आदर्श

मे अपना सुख देखें और विचार करें कि हमारे बीच धर्म का भाव कितना है ? हम कहाँ तक सास ससुर की आज्ञा मानती हैं और कितना पति के कहे पर चलती हैं ?

गुरोर्गुरुस्त्वं वै यतो दैवत दैवम् ।
दवातिदेव तस्मात्वं सक्तुनात्सवमे प्रभो ॥
देह प्राणाश्च धर्मश्च शुश्रूषर्थमिद गुरो ।
तव वित्र प्रसादेन लोकान्प्राप्यामहे शुभम् ॥

अर्थ—बहू ने बड़ी नम्रता से उत्तर दिया कि हे महाराज ! आप मेरे गुरू के गुरु हैं (यह उनका सकेत पति की ओर था अर्थात् आप मेरे पति के पूज्य अथवा गुरु होने से गुरु के गुरु हैं) इसी प्रकार देवताओं के देवता हैं। हे गुरो देह और प्राण सब आपकी सेवा के लिये है धर्म का फल भी आपके निमित्त है आपकी प्रसन्नता ही से उत्तम लोकों की मुझे प्राप्ति है, इस कारण सत्तू अतिथी को खिला दीजिये ।

प्रेम, भक्ति एव धर्म से भरे बहू के वचन सुन कर ससुर का हृदय उमड आया । उसकी आखो से पवित्र प्रेमाश्रु चलने लगे और कण्ठावरोध हो गया वृद्ध ने अपने को बहुत सम्हाल कर गद्गद् कण्ठ से इतना ही कहा कि— 'तू धर्म-वृत्ति और बडों की सेवा के लिये अमायिक भाव से स्थिर है तुझे प्राणों से धर्म अधिक प्रिय है इस कारण सत्तू स्वीकार करता हूं।'' यह कह कर बधू के दिये सत्तू अतिथि को खिला दिये । उसने सन्तुष्ट होकर बहुत आशीर्वाद दिया । ब्राह्मण के परिवार की देवता और ऋषियों ने प्रशसा की । धर्मज्ञ पुरुषों ने विमानारूढ होकर उस पर पुष्प वृष्टि की ।

पाठक ! विचारिये, प्राचीन समय कैसा था ? धर्म को

प्राणों से भी अधिक चाहनेवाले लोग उपस्थित थे। उनकी प्रतिष्ठा और प्रशंसा भी शुद्ध भाव से लोग करते थे। पुष्पवृष्टि और साधुवाद से धर्मात्मा का मान! क्या अद्भुत समय था जब भारत-जननी की गोद में ऐसे पुरुष रत्न खेला करते थे। पुत्र धर्म के लिये प्राण देने को तत्पर हैं, मा खड़ी देख रही है उसका पेट जुनता है पर पति के आगे चूं नही करती। अब वह समय है कि बेटे को बाप सुधरना चाहता है तो माँ मुह देती है, कहती है "मेरे को व यउण्डी ही रहने दो। नही पढता तो अनपढा ही भला है, गुरजी मारिये नही।" जब विद्या वा साधारण चाल चलन की यह दशा है तो सच्चा धर्मात्मा बनना कितना कठिन है। भारत धार्मिक सुपुत्रों से वञ्चित हो गया। यहां बालों का जीवन मरण हो रहा है और मरना तो इनको आता ही नही है। देश वा धर्म के वास्ते पूवजों को प्राण देना आता था। ऐसा दृष्टान्त इस समय पृथ्वी के आतिथ्य सत्कार में विरला ही कदाचित मिले। तीन सौ बरस हुये रूम का बादशाह ईरान जब अपनी प्रजा की जाच के लिये भेष बदल कर निकला था तो क्षुधार्त होने पर उसने बड़े २ महाजनों से भिक्षा के लिये कहा, परन्तु किसी ने उसकी दीन दशा पर दया न की। अन्त को वह एक गरीब किसान के घर गया और कहा कि मैं थका माया हूं और भूख के मारे अधमरा हो रहा हूं कृपा करके मुझे आज की रात यहां ठहरने की आज्ञा दीजिये। फलत किसान ने उसका आतिथ्य सत्कार किया जिस के बदले बादशाह ने जन्म भर उसके परिवार का पालन किया। यूनान के प्रसिद्ध विद्वान् सोलन ने लेडिया के बादशाह क्रोसस से एक लड़के की इस बात की बड़ी प्रशंसा की थी कि आरगोस निवासी दो सगे भाई बैल न मिलने पर आप ही अपनी माँ की गाड़ी मन्दिर तक खींच ले गये। यहा के इतिहास रचयिते

हैं कि भारत के सपूतों ने माता पिता के वचन और व्रत पालन के लिये जानें दे दी। धन्य आर्य्यभूमि ! और धन्य आर्य्यशिक्षा !!

२२—धार्मिक राज्य

एक मुसलमान बादशाह ने हिन्दुस्तान के एक दक्षिणी राज्य पर चढ़ाई की और राज्य के धुर पर पहुंच कर अपना एक दूत राजा के पास भेजा और यह सन्देशा कहला भेजा कि—"या तो तू अपना राज्य खाली कर दे या मेरे साथ युद्ध करने को तैयार हो जा" राजा ने यह सन्देशा सुन दूत से कहला भेजा कि—"हम राज्य को अपने सुख के लिये नहीं करते हैं किन्तु प्रजा के सुख के लिये करते हैं और नितान्त धर्मपूर्वक ही राज्य कार्य्य होता है। यदि इस भाँति तुम्हारा बादशाह करना स्वीकार करे तो हम राज्य छोड़ने के लिये तयार हैं हम लड़ कर मनुष्यों का घात नहीं करना चाहते।" दूतने यह सम्पूर्ण वृतान्त जाकर बादशाह से कहा। बादशाह उस राजा की न्यायोक्त वार्ता सुन कर अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उसके हृदय में उस राजा से मिलने की अभिलाषा उत्पन्न हुई और वह स्वयं राजा की सभा में आकर उपस्थित हुआ। सभा लगी हुई थी और दो कृषकों का अभियोग प्रविष्ट था। अभियोग यह था कि एक कृषक ने दूसरे कृषक के हाथ अपनी कुछ भूमि विक्रय की थी, कुछ कालके उपरान्त उस विक्रय की हुई भूमि में एक बड़ा भारी कोष निकला, तब तो मोल लेनेवाला कृषक बेचनेवाले से कहने लगा कि आपकी भूमि में एक कोष निकला है सो वह अपना कोष आप चल कर ले लीजिये, क्योंकि हमने तो केवल भूमि मोल ली है न कि कोष। इस पर विक्रय करने वाला कृषक कहता है कि यदि भूमि बेचने के पहले हमारी भूमि होते हुए कोष निकलता तो निःसन्देह वह मेरा कोष

था, परन्तु जब हमने यह भूमि आपको बेच दी तब वह कोष भी आपका ही है। राजा ने इन दोनो वादी प्रतिवादियो का यह निर्णय किया कि—"तुम दोनो में जिस किसी के लड़का और जिस किसी के लड़की हो परस्पर उनका व्याह कर यह सम्पूर्ण कोष उन लड़के लड़की को दे दो।" बादशाह इस न्याय को देख दंग हो गया। राजा ने बादशाह से पूछा कि—"कहिये, आपकी राय में यह न्याय कैसा हुआ?" बादशाह ने कहा—"यह बिलकुल वाहियात हुआ?" राजा ने कहा—"भला, आप इसे कैसा करते?" बादशाह ने कहा कि—"हम तो इन दोनो को कारागार में भेज सम्पूर्ण कोष अपने कोष में भेज देते।" यह सुन राजा ने पूछा—"भला आपके राज्य में पानी बरसता है, जाड़ा गर्मी आदि ऋतुयें ठीक ठीक समय पर होती हैं, अन्न आदि उत्पन्न होते हैं?" बादशाह ने कहा—"ये सब होता है।" राजा ने पूछा कि—"आपके राज्य में केवल मनुष्य ही रहते हैं या और कोई पशु, पक्षी आदि भी रहते हैं?" बादशाह ने कहा—"सब जीव रहते हैं।" तब राजा ने कहा कि—"उन्हीं पशु पक्षियो के भाग्य से चाहे आप के यहा वर्षा, जाड़ा, गर्मी, अन्न आदि भले ही होते हों, नहीं तो आप वा आपके सदृश आपकी प्रजा के भाग्य से तो वहां वर्षा, जाड़ा, गर्मी, अन्न आदि होने की मुझे आशा नहीं है।

२३--अहिंसा

जिस समय महारानी कुन्ती दुस्साशन के अत्याचार करने पर अपने पाँचों पुत्रों को ले राजा विराट के एक ग्राम में रही थी, उस समय वहा एक दानव इस प्रकार का लगा करता था जो सम्पूर्ण ग्राम के ग्राम नष्ट किये देता था। यह उपद्रव

देख ग्रामवालो ने यह नियम करलिया था कि हम में से एक नित्य आपके पास आ जाया करेगा, पर आप ऐसा उपद्रव न करें कि एक ही दिन में ग्राम का ग्राम नष्ट कर दें और ग्राम वालों ने अपनी अपनी वारी क्रमपूर्वक बांध ली थी। एक दिन एक बुढिया ब्राह्मणी की, जिसके एक ही बेटा था, वारी आई और महाराणी कुन्ती उस दिवस किसी प्रयोजनार्थ बुढिया के यहा गई। बुढ़िया को रोता देख महाराणी कुन्ती ने उससे रोने का कारण पूछा। बुढिया ने सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया। महाराणी कुन्ती ने बुढिया को अत्यन्त दुखी देख कहा कि—"तेरे एक ही बेटा है पर मेरे पाँच हैं। आज मैं तेरे बेटे के बदले अपने बेटे को भेज दूगी। तू दुखी न हो।" पर बुढिया को विश्वास न आता था कि भला ऐसा कौन होगा कि जो अपने बच्चे को दूसरे के बच्चे के लिये मरवा डाले। बुढिया यह सोच ही रही थी कि इतने में महाराणी कुन्ती ने अपने पाँचो पुत्रों को बुला यह वृत्तान्त कहा। पुत्रों में से प्रत्येक जाने को उद्यत था। महाराणी कुन्ती ने भीम को आज्ञा दी। भीम गदा ले दो घड़े पहले से जा विराजे।

ग्रामवालो का यह भी नियम था कि उस दानव की पूजा के लिये बहुत से नर नारी घी, गुड़, बताशे, छोटी २ पूड़ियाँ गुलगुले आदि ले जाते थे और यह सब सामान जिस जगह दानव आता था पहले ही से जाकर एकत्र हो रहे थे। भीम वहीं पहुचा और उन सबसे पूछा—'यहा सब क्यो बैठे हो?' लोगो ने उत्तर दिया कि—"हम लोग यह सब सामान ले दानव की पूजा करने आये हैं।" भीम ने कहा—'हम उसके खाने के लिए आये हैं सो तुम लोग क्यों व्यर्थ बैठे हो? ये सामान सब हमें क्यो न खिलादो? जब दानव हमें खायगा तो यह सामान भी

उस के पेट में पहुंच जायगा।" गाँववालों ने वैसा ही किया। भीमने सम्पूर्ण घी, गुड़, पकवान, पूड़ी, गुलगुले खाये और ज्योंही दानव आया तो उसका एक पैर इस हाथ में, एक पैर उस हाथ में पकड़ उसकी टाँगे फाड़ कर मरा उठा गर्जता हुआ माता के चरण चमने को आकर प्रणाम कर कहा—"माता अब तो मैं जन्म भर के लिये मौत आया।' माताने आशीर्वाद दिया, परन्तु बुढ़िया के हृदय में यह शङ्का उत्पन्न हुई कि भीम मौत के भय से भग आया है, अब दानव कोपित आता होगा और मेरे बच्चे को खा जायगा। महारानी कुन्ती ने कहा—"बुढ़िया, तेरे ये क्या विचार हैं। यह सिंहनियों के बच्चे हैं। भला तुझे यह मान्य नहीं होता कि जो दूसरे के बच्चे के लिए अपना बच्चा भेजे उस पर कभी आँच आ सकती है?" बुढ़िया आश्चर्य चकित रह गई।

आज कल बकरा, भैंडा, सुअर, मुर्गा आदि के बच्चे मरवा कर लोग अपने बच्चों का कल्याण चाहते हैं। हाय री भारत की अविद्या! कहाँ महारानी कुन्ती सरीखी मातायें, भीम सरीखे पुत्र और कहा आज घर घर हत्यारे पैदा हो भारत में खून खच्चर कर रहे हैं!! इन मूढों को यह नहीं सूझता कि जब एक अँगुली में दर्द होता है तो चाहे कितने ही उपाय करो दूसरी अँगुली में तब्दील नहीं हो सकता, तो दूसरे के बच्चे कटाने से हमारा बच्चा कैसे अच्छा हो जायगा? अच्छा तो दरकिनार हाँ मर अवश्य जायगा। क्योंकि कहा है—

जो और का चेते बुरा, उसका भी होता है बुरा।
जो और के मारे छुरी, उसके भी लगता है छुरा॥

२४-अहिंसा

यूनान के बादशाह के यहां यह नियम था कि यदि कोई मनुष्य भारी अपराध करता था तो किसी सिंह को पिंजड़े में बन्द कर कई दिन भूखा रख उस भूखे सिंह के सामने उस पुरुष को ला सिंह पर छोड़ सिंह से खिला दिया जाता था। एक मनुष्य ने बादशाह के यहां एक बड़ा भारी अपराध किया और वहां से भग खड़ा हुआ और भाग कर वह एक बड़े भयङ्कर वन में जा छिपा। उस वन में एक सिंह जिसके पैर में एक बड़ा विशाल काँटा लग जाने के कारण उसका पैर पक गया था और वह वेचारा अत्यन्त ही दुखित था पैर उठाये मुख मलीन किये खड़ा था। इस अपराधी ने चुपके चुपके पीछे से जा शेर के पैर का काँटा निकाल दिया। शेर को इतना सुख हुआ कि जैसे कोई जान निकलते हुए जान डाल दे। शेर ने आँख उठा कर उस पुरुष की ओर देखा और वह उसी के पीछे पीछे वन में फिरने लगा। एक दिन वह अपराधी उस वन से पकड़ आया। बादशाह ने कहा—"एक शेर जङ्गल से पकड़ लाओ।" दैवगति, वही शेर पकड़ आया और उसे कई दिवस भूखा रख उस अपराधी को शेर के सामने ला शेर उस पर छोड़ा गया। शेर चिग्घाड़ता हुआ उस अपराधी पर टूटा। पर पास जाकर जब अपराधी को पहिचाना तो शेर उसके चरणों पर लोटने लगा। धन्य हो ऋषि पातञ्जलि आपने क्या ही सच कहा है—

अहिंसा प्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैरत्यागः।

२५-मांस-भक्षण

एक चौबे जी महाराज एक मुसलमान तहसीलदार साहब के

ठाक और हँसमुख थे और मजहबी तहकीकात में भी उनकी बड़ी रुचि थी। आपने चौबेजी से वार्तालाप करते हुए यह प्रश्न किया कि—"चौबेजी, आप अपने को देवता और हमें म्लेक्ष क्यों कहते हो?" यह सुन चौबेजी महाराज बोले कि—"जमना मैया की जै बनी रहे, यजमान तुम मिट्टी खाते हो इस लिए म्लेक्ष कहलाते हो।" तब तो तहसीलदार साहब ने हँस कर पूछा कि—"चौबेजी, मिट्टी किसको कहते हैं?" चौबेजी ने कहा—"जै हो जमना मैया की, यजमान मिट्टी गोश्त को कहते हैं।" तहसीलदार साहब ने उलट कर जवाब दिया कि—"चौबेजी, गोश्त तो तुम भी खाते हो क्योंकि शाक भाजी और अन्न वगरह में तुम भी जीव मानते हो।" इस पर चौबेजी ने कहा कि—"यजमान की जै बनी रहे, हम जो अन्नादि खाते हैं वह शुद्ध जल से उत्पन्न होता है और तुम जो मास खाते हो वह मूत्र से पैदा होता है। बस हम में और आप मे इतना ही भेद है, जितना मूत्र और जल में। इसी लिए, हम देवता और आप म्लेक्ष हैं।"

२६–हिम्मत और धूर्ती

एक बार एक सियार ने किसी को कहते हुए यह शब्द सुन लिया कि—"हिम्मत मर्दा मदद खुदा।" उसने इसे अपना आदर्श बना लिया और हर बात में वह अपनी स्त्री सियारिन से कह दिया करता था कि—"हिम्मत मर्दा मदद खुदा।" कुछ दिनों के बाद उसकी स्त्री सियारिन गर्भिणी हुई। उसने अपने पति सियार से कहा कि—"अब मुझे कहीं ऐसे स्थान में ले चलो जहा मैं अपने बच्चों को अच्छी तरह से उत्पन्न करूँ और मुझे सुख मिले।" सियार ने सियारिन को ले जाकर एक

सिंह की सथरी में जहां सिंह ने अपने आराम के लिए फूस फांस बिछा कर रक्खा था, ठहराया और कहा—"तू यहां अपने बच्चे उत्पन्न कर।" शेर कई दिन तक न आया। इतने में सियारिन ने बच्चे उत्पन्न किये। एक दिन सियार और सियारिन मए अपने बच्चों के बैठे ही थे कि इतने में सिंह डहकता हुआ आया। सियार ने शेर को आते देख अपनी स्त्री सियारिन से कहा कि—"अपने बच्चे शीघ्र उठा कर चल, जल्दी भग चलें।" सियारिन ने कहा कि—"आज वह 'हिम्मत मर्दां मदद खुदा' कहां गया?" सियार को बडी शर्म मालूम हुई और वह अपने आगे के दोनो पैर ऊपर को उठा खडा हो गया। शेर इसे देख हैरान था कि यह कौन है! यद्यपि मैं रात दिन जंगल ही में रहता और जगल का राजा हूं पर ऐसा जन्तु मैंने आज तक नही देखा कि इतने में सियार अपनी स्त्री सियारिन से बोला कि—"अरी वनकूकरी!" सियारिन ने उत्तर दिया—"कहो, सब जग के वैरी!" यह शब्द सुन सिंह के होश हवास उड गये और वह सोचने लगा कि सब जग में तो मैं भी हू अरे यह कोई बड़ा बलवान् जन्तु है। ऐसा समझ सिंह भग खडा हुआ। सियार के सन्मुख से सिंह भगते देख जगल भर के जीवों को आश्चर्य हुआ कि आज गजब हो गया कि सियारों के सन्मुख से सिंह भगने लगे। एक बंदर जो यह चरित्र देख रहा था, वनराज शेर के सन्मुख जा हाथ जोड़ बोला कि—"महाराज यह सियार है, जिसके सामने से आप भगे जाते हैं।" शेर ने कहा—"तू बिलकुल झूठ कह रहा है क्या सियार हमने देखे नहीं? सियार ऐसा नहीं होता।" बन्दर ने कहा—"महाराज, वह ऊपर का पैर उठाये खडा था। आप चलिये, वह अभी भग जायगा। बन्दर के बहुत कुछ समझाने पर शेर ने बन्दर से कहा-"अच्छा तू आगे चल तो चलूं।" बन्दर तो यह निश्चय जानता ही था

कि वहा सियार है वह निर्भय आगे चला। सियार ने जाना कि यह वन्दर जान का घातक हुआ, लेकिन अपने उस वाक्य को याद कर कि 'हिम्मत मर्दा मदद खुदा' फिर खड़ा हो गया। जब वन्दर और शेर दोनों कुछ समीप पहुंचे तब फिर सियार ने कहा- -'अरी वनकुकरी !'' सियारिन ने कहा' कहो सब जग के वैरी !'' सियार ने कहा—' तेरे बच्चे क्यों रोते हैं ?'' सियारिन ने कहा—''मेरे बच्चे शेर खाने को मागते हैं।''वनराज शेर यह सुन कर फिर भग खडा हुआ। वन्दर यह दशा देख हैरान था कि जब शेर इस सियार के सन्मुख से भागता है तो हम लोगो का कैसे गुजारा होगा, अत वन्दर फिर शेर के पीछे पड़ा और हाथ जोड कर बोला कि ''महाराज, आप व्यर्थ भाग उठते हो। वह निश्चय सियार है, आपके चलने से ही भग जायगा।'' सिंह ने कहा कि-''सियार के बच्चे कहीं सिंह खाने को मागते हैं?'' वन्दर ने कहा—महाराज, यही तो गीदड भबकी है।''अत. शेर को वन्दर ने जब बहुत समझाया तो शेर ने कहा—''अब की बार हम तब चलेंगे जब मेरी पूछ से तू अपनी पूछ बाध और तू आगे चल। नही तू जात का वन्दर, बडा चालाक, तेरा क्या ठीक। मुझे वहा मौत के मुखमे झोंक भग खड़ा हो'' वन्दर को कुछ भय तो था ही नही उसने वैसा ही किया और दोनों शेर की सथरी की ओर चले। जब सियार ने इन दोनों को इस भाँति आते देखा तो कहा ''अब कि प्राण गये अब नही बच सकता।''परन्तु इसे अपनी कहावत फिर याद आई कि-''हिम्मत मर्दा मदद खुदा।'' अत यह फिर उसीभाति खड़ा हो गया और सियारिन से बोला-''अरी वनकुकरी !'' सियारिन ने कहा—''कहो,सब जग के वैरी।'' सियार ने कहा ''तेरे बच्चे क्यों रोते हैं ?'' सियारिन ने कहा-''मेरे बच्चे शेर खाने को माँगते हैं।'' सियार ने कहा—''तो तू गुस्सा क्यो

होनी है ?" सियारिन ने कहा—"इस लिये कि बन्दर को भेजा था कि दो शेर ले आ सो प्रथम तो वह आया ही बड़ी देर में है दूसरे दो के बदले एक ही पूंछ में बांध कर लाया है।" शेर इतना सुनते ही बन्दर की पूंछ तक उखाड के भग खड़ा हुआ सच है, हिम्मत मर्दां मदद खुदा।

बहुत से मनुष्य आपत्ति आने पर कुएं में गिर पड़ते, जहर खा लेते, कोई आग लगने पर कोने में घुस पडते, कोई निकल कर रास्ता भूल प्राण दे देते, कितने ही शेर और भालू का नाम सुन काठ के खिलौने से खड़े रह जाते और उन्हें आकर वे खा भी जाते हैं, कितने ही घबराये पथिकों के समूह दो चार डाकुओं से लूट लिये जाते हैं, पर एक धीर पुरुष सिंह के छक्के छुडा देता है। किसी ने ठीक कहा है—

त्याज्य न धैर्यं विधुरेपि काले, धैर्यात्कदाचित् स्थिति माप्नुयात्मः।
यथा समुद्रेऽपि च पोतभगो, सायात्रि को वाञ्छति तर्तु मेव॥

अर्थ—आपत्ति का समय आने पर भी धैर्य्य नहीं छोड़ना चाहिये, क्योंकि कदाचित् धैर्य्य से स्थिति प्राप्ति हो जाय जैसे कि समुद्र में जहाज़ डूबने का समय आ जाने पर भी उद्योग करने पर बच जाता है।

२७—क्षमा

एक रामनाथ नामक साधु ब्राह्मण सत्यस्त सदाचारी पुत्र पौत्रों से युक्त और बड़ा ही धनाढ्य किसी ग्राम में रहता था। उसके घर के पास जो दो चार पड़ोसी रहते थे वे सब के सभी महान् दुष्प्रकृति के थे और उस के धन ऐश्वर्य तथा प्रतिष्ठा को देख कुढा करते थे और सदैव इसी चिन्ता में निमग्न रहते थे कि किसी न किसी भांति रामनाथ को क्लेश

पहुचावें और कभी कभी वे अपनी आशा को पूरी भी कर लिया करते थे। विशेष कहा तक लिखा जाय विचारे रामनाथ की वही दशा थी जैसी कि लंका के मध्य विभीषण ने हनुमान से अपनी दशा कही थी—

सुनहु पवनसुत रहनि हमारी। जिमि दशनन बिच जीभ बिचारी॥

इसी भांति साधु रामनाथ रहा करते थे और वे दुष्ट इन्हें सदैव कटु वाक्य और गालि प्रदान तथा ऐसे ऐसे अडङ्गा लगाये रहते थे कि रामनाथ बोलें और वे इनकी पूरी पूरी खबर लें। परन्तु साधु रामनाथ को जब दुष्ट लोग गालि प्रदान करते तो वे उसके उत्तर में कहा करते थे कि—

ददतु ददतु गालिर्गालिवन्तो भवन्तो,
वयमपि तदभावाद् गालिदानेऽप्यशक्ताः।
जगति विदित मेतद् दीयते विद्यते तत्,
नहि शशक विषाणं कोपि कस्मै ददाति॥

अर्थ—देव देव गाली आप गालिवन्त हैं। कोई धनवन्त होता है, कोई बलवन्त होता है, आप गालिवन्त हैं। पर मेरे पास तो गालियों का अभाव है, कहां से दू, और संसार में यह बात विदित है कि जो वस्तु जिस के पास होती है वही मनुष्य दूसरे को दे सकता है, न होने से कैसे दे? खरगोश अपने सींग किसी को क्यों नहीं देता। भाषा में भी कहा है—

जाके ढिग बहु गाली होइहै, सोई गाली देहै।
गालीवालो आप कहेहै, हमरो का घटि जैहै॥

परन्तु वे इस वाक्य के अनुसार—

मधुना सिंचयेन्निम्ब निम्बः किं मधुरायते।
जातिस्वभाव दोषोऽयं कटुकत्वं न मुंचति॥

अर्थ—जाकी जैसी टेव छुटै नहिं जीव से ।
नीम न मीठो होय सिंचै गुड़ घीव से ॥

उद्योग कर टिकट भी बँधवा दी और कई बार चोरों से मिलजुल कर चोरी भी करा दी परन्तु आप जानते हैं कि क्षमारहित पुरुषों का स्वभाव उस पानी भरे कटोरे के समान, होता है जिसमें कुछ डालते ही उसका पानी गिरने लगता है, किन्तु क्षमावान् पुरुषों का स्वभाव समुद्र के समान गम्भीर होता है कि चाहें उसमें पहाड़ के पहाड़ आ पड़ें तो भी वह घटता बढ़ता नहीं अथवा जैसे गजराज के पीछे चाहे कितने ही कुत्ते भौंका करें तो भी वह विचलित नहीं होता।

अन्ततोगत्वा उन दुष्टों के दुष्ट कर्मों के अनुसार उनकी यह दशा हुई कि उनको दरिद्रता ने आकर ऐसा घेरा कि वे सबके सभी दाना दाना को दुखी होगये और भूखों मरने लगे। यह दशा देख साधु रामनाथ को दया आई वे (उन महात्मा की भांति जिनको कि एक नदी-तट पर स्नान करते समय जल में एकाएक बिच्छू दृष्टि पड़ा और वे दया परवश उसे हाथ से पकड़ जल से बाहर करना चाहते थे कि बिच्छू अपने स्वभावानुसार उनके हाथ में डंक मार हाथ से पुनः नदी में जा गिरा और वे बारम्बार उसको जल से बाहर निकालते और वह डंक मार मार जल में जा पड़ता, इस चरित्र को देख एक ब्राह्मण ने उनसे कहा कि—"जाने दीजिये महाराज! ये दुष्ट जीव हैं।" जिसके उत्तर में महात्मा जी ने ब्राह्मण से कहा था कि—"यदि यह अपने स्वभानुसार डंक मारना नहीं छोड़ता तो हम अपने स्वभावानुसार इसका परित्राण करना क्यों छोड़ दें?") उन्हें भोजन देने लगे और कुछ धन की सहायता कर उन सब को उद्यम में लगा दिया। परन्तु इन दुष्टों ने अपनी

दुष्ट प्रकृति अब भी न छोड़ी। एक दिवस साधु रामनाथ का एक बारह वर्ष का पुत्र खेलते खेलते एक वन में जो ग्राम के समीप ही था पहुंचा। इन दुष्ट पड़ोसियों ने उसे मार उसके संपूर्ण आभूषण उतार लिये। इसका पता साधु रामनाथ को पूर्णरूप से मिल गया। किन्तु जब वे दुष्ट रामनाथ जी की शरण आये और उन्होंने कहा कि हम कभी अब ऐसा न करेंगे, हमने जो कुछ किया बहुत ही बुरा किया, अब आप क्षमा करें तो इस कवि वाक्य के अनुसार—

कोऽहि तुला मभि रोहित शुचिना। दुग्धेन सहज मधुरस्य हृत विकृत मथित तथापि यत्स्नेह मुद्गिरति ॥

अर्थात—सर्वथा मधुर रस के ग्रहण करने वाले महोज्वल दूध की बराबरी कौन कर सकता है? कोई नहीं, क्योंकि उसे चाहे कोई कितना ही तपावे, चाहे कितना ही विकृत करे और कितना ही मथे तिस पर भी प्रहारों को सहता हुआ प्रहार-कर्त्ताओं के लिये वह स्नेह चिकनाई घी ही देता है अर्थात् शत्रुओं पर भी वह स्नेह करता है साधु रामनाथ ने उन सब पर दया की।

उन संपूर्ण दुष्टों ने सारी आयु साधु रामनाथ पर चोटें की, परन्तु इस कवि वाक्य के अनुसार—

अतृणो पतितो वन्हि स्वमेवोपशाम्यति।
क्षमाखड्ग करे यस्य किं करिष्यति दुर्जना ॥

वे दुर्जन उनका कुछ न कर सके।

महात्मा बुद्ध को एक पुरुष ने एक दिन आकर बहुत सी गालियां सुनाईं। जब महात्मा बुद्ध उस दिन गालियों को सुन न बोले तो दूसरे दिन उसने आकर दूनी गालियां सुनाईं और जब दूसरे दिन भी महात्मा न बोले तो तीसरे दिन तिगुनी

और जब उस दिन भी महात्मा जी न बोले तो चौथे दिन चौगुनी गालियाँ सुनाई और जब महात्माजी फिर भी न बोले तो पांचवे दिन वह पुरुष आकर महात्मा के पास चुपके से खड़ा हो गया। तब महात्मा बुद्ध ने उससे कहा कि—"बेटा यदि कुछ और भी तेरी इस पेटरूपी थैली में हो तो उसे भी दे दे।" तब उसने कहा कि—"अब तो जो कुछ था वह सब मैंने सुना दिया पर इतनी गाली सुनाने पर भी आपने कोई जवाब नहीं दिया।" महात्मा ने कहा कि—"जवाब तो मैं पीछे दूंगा पर इससे पहले तुम मेरे एक सवाल का जवाब दे दो।" यह कह कर महात्मा ने कहा कि—"कोई किसी के पास यदि किसी वस्तु की भेंट ले जाय और वह उसे स्वीकार न करे तो उसका मालिक कौन होता है?" उसने कहा कि—'वही, जिसकी वह वस्तु है अथवा जो उसे लाया है।"

२८—दम

एक बार महात्मा जनक के पास एक ब्राह्मण ने जाकर कहा कि—"महाराज, यह पापी चञ्चल मन हम को अपने जाल में निशिदिन नचाया करता है हम बहुत बहुत जोर लगाते हैं पर यह पापी हमको नहीं छोड़ता।" महात्मा जनक ने यह सुनते ही एक वृक्ष को पकड़ लिया और बोले कि—'अगर यह वृक्ष हमें छोड़ दे तो हम आपके प्रश्न का उत्तर दे दें।" ब्राह्मण राजा जनक की यह दशा देख हैरान हो गया कि यही राजा जनक हैं जिसकी ब्रह्मविद्या में प्रशंसा है? एक वृक्ष को पकड़े हुए कह रहा है कि यदि यह छोड़ दे तो हम तुम्हारे प्रश्न का उत्तर दें। ऐसा समझ वे बोले कि—"महाराज, जड़ वृक्ष आपको क्या पकड़ सकता है? आप ही स्वयमेव पकड़े हुए हैं। आप

छोड़ दें तो वह आप ही छूट जाय।" महात्मा जनक ने कहा-"तुम्हें दृढ़ विश्वास है कि छूट जायगा ?" ब्राह्मण ने कहा—"यह तो बिल्कुल प्रत्यक्ष ही है कि आप छोड दें तो छूट जाय। महात्मा जनक ने कहा—"बस, इसी भाति मन जड है, वह विचारा जीवात्मा को क्या नचा सकता है ? जैसे हम वृक्ष को पकड़े थे उसी भाति आप मन को पकडे हुए हैं। यदि मन को छोड़ दें और इसके फन्दों में न आये तो मन कुछ नहीं कर सकता—यानी इस जड मन को चाहे आप सुमार्ग में चलाये चाहे कुमार्ग में। यह आपके आधीन है। यह तो सब कहने की बातें हैं कि मन बड़ा चञ्चल है, कुमार्ग में जाता है। बिना जीव के मन में संकल्प नहीं हो सकते।"

२६-एक महात्मा

एक महात्मा एक ऐसे सेवक की चिन्ता में थे जो बिना वतन लिये ही उनका काम करे। यह बात प्रसिद्ध है कि 'जिन खोजा तिन पाइया' महात्मा को सेवक मिल गया, पर सेवक ने महात्मा जी से यह प्रतिज्ञा करा ली कि "आप हमको सदैव काम बतलाते रहें, यदि आप ने किसी समय काम न बताया तो हम आपको बिना पीटे न छोड़ेंगे।" महात्मा ने प्रतिज्ञा करली। सेवक ने कहा कि 'महात्मा जी काम बतलाइये' महात्मा जी ने कहा कि—"शौच के लिये लोटे में पानी ले आ सेवक ले आया। महात्मा ने कहा—हमें कुल्ला, दन्त धावन, स्नान करा" उसने वह भी कर दिये। महात्मा ने कहा—'यह लँगोटी फींच डाल। उसने लँगोटी भी धो डाली। लगोटी धो सेवक ने कहा-"महात्मा जी और।" महात्मा जी ने कहा—"अब तो इस समय कोई काम दृष्टि नहीं पडता।"

महात्मा के यह शब्द कहते ही सेवक ने सोटा उठा धमा चौकड़ी मचानी आरम्भ की। महात्माजी रोते हुए पूजा पाठ छोड भग खड़े हुए। सेवक ने सोंटा ले उनका पीछा किया कुछ दूर चल महात्मा को एक और महात्मा मिले। इन्होंने भगते हुए ही शीघ्र २ दूसरे महात्मा को सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनाया। महात्मा ने कहा- बस इसी लिये आप भगे फिरते हैं? जिस समय आपके यहा कोई काम न रहे इससे कह दिया कीजिये कि एक लम्बा बांस ले आ। जब ले आवे तब कहना इसे गाड व गाड चुके तब कहना कि जब तक हम दूसरा काम न बतलावें तब तक इस पर चढा उतरा कर। महात्मा ने ऐसा ही किया। स्थान पर आ आपने सब काम करवा कर एक लम्बा बांस मँगवा कर कहा—'जब तक हम दूसरा काम न बतलावें इसी पर चढ़ा उतरा कर।" बस, सेवक ज्योंही दो चार बार चढा उतरा कि थक कर शिथिल हो बोला—"महात्मा जी अब तो चढा उतरा नहीं जाता।"

इसका दृष्टान्त यह है कि जीवात्मारूपी महात्मा को एक अवैतनिक सेवक की आवश्यकता होने पर इसे मनरूपी बेदाम का भृत्य मिला। परन्तु इस मन ने जीवात्मा से यह प्रतिज्ञा करा ली थी कि हमको सदैव काम बताते रहना अर्थात् सदैव काम में लगाये रखना, नहीं हम पीटेंगे अर्थात मन जब काम से रहित हो ठाली होगा उस समय कुमार्ग में जायगा और अपने साथ जीवात्मा को ले दुर्दशा करावेगा। इस प्रकार मन ठाली होने पर जीव को कुमार्गों में लिये हुये खेद रहा था और जीवात्मारूप महात्मा व्याकुल था कि इतने में दूसरे महात्मा ऋषि ने उपदेश किया कि—

प्रच्छर्दन विधारणाभ्यां वा प्राणस्य।

तुम स्वाँस प्रस्वाँस पर ध्यान गाड जब यह मन ढाली हो चंचलता करे तो इस पर चढाओ उतारो। बस, तीन चार बार प्राणायाम करने से मन शिथिल हो गया और इस का चंचलपना छूट गया।

३०—स्तेय

अस्तेय प्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम्।

एक बालक नित्य पाठशाला जाया करता था। एक दिवस पाठशाला से वह किसी विद्यार्थी की पुस्तक चुरा लाया। लड़के की माता ने पुस्तक निकाल कर उसे आम खाने को दे दिये। इसी भाँति करते करते कुछ दिवस में वह चोरों का शिरोमणि हो गया। एक दिन वह चोरी करते समय राजा के यहां पकड़ा गया और उसको राजा के यहाँ से सूली के दण्ड की आज्ञा हुई। सूली पर चढ़ते समय कितने ही पुरुष उस बालक के अवलोकनार्थ आये और बालक की माता भी सब पुरुषों के साथ बालक को देखने आई। बालक ने अपनी माता से कुछ वार्ता करने की आज्ञा मांगी और माता के कान में बातें करने के समय उसके नाक कान दोनों ही काट लिये तब तो माता बहुत ही दुखी हुई। सम्पूर्ण पुरुष यह दशा देख बालक को धिक्कारने लगे। तब बालक ने कहा कि—"आप लोग धिक्कारते हैं परन्तु यदि मुझे यह चोरी न सिखाती तो आज सूली का समय न आता।"

बस, आप लोग समझ लें कि चोरी इतनी बुरी चीज़ है, इसी के त्याग को स्तेय कहते हैं।

३१—शौच

शौचानामेव शौचानां अर्थे शौचं परं स्मृतम्।
योऽर्थे शुचिः स शुचिः न मृद्वारि शुचिः शुचिः॥

एक गाँव में दो सगे भाई प्रथक् प्रथक् रहा करते थे। उनमें से एक भाई तो वाह्य शुद्धि अर्थात् शौच, दन्तधावन, स्नान आदि और दीन होने पर भी दूसरे तीसरे दिन अपने वस्त्र धो लिया करता था एवं जहां जिस स्थान में वह बैठता हो उसे अत्यन्त स्वच्छ रखता था और भीतर का भी कपटी न था जिससे कि उसकी बुद्धि भी अत्यन्त तीव्र, बड़े से बड़े गम्भीर विषयों को सहज ही में समझने को समर्थ थी और इसका मान भी बड़े पुरुषों में था, जहां यह जाकर बैठता सभी प्रसन्न रहते। और दूसरा भाई यद्यपि बड़ा धनवान् था परन्तु अत्यन्त ही मलिन था, दन्तधावन स्नानादि का तो यह महीना न म ही न जानता, मुह में दुर्गन्ध आती, शरीर तथा पैर मैल से फट गये थे और फटे टूटे वस्त्र अति मैले जिनमें मक्खियां भिनक रही थीं पहिरे हुए पेट भी कपट की खानि, सदैव 'मनस्यन्यत् वचस्यन्यत् कर्मण्यन्यत् दुरात्मनः' के अनुसार ही इसकी वार्ता भी रहती थी, यानी कहते कुछ जाते कहीं, इन से इनकी न तो कोई बात ही मानता था और जिसके पास ये जाकर बैठते वह इनसे अतीव घृणा करता था और बुद्धि में भी यह बुद्धू थे, इस कारण भंग, तम्बाकू आदि नशे तो आपके एक मात्र भूषण थे। इनके रहने का स्थान भी बड़ा ही भ्रष्ट रहता था, इस कारण कभी इस दरभूरे में दण्ड कभी गर्दवीन में दण्ड, कभी खुद इनको मैला और बुद्ध देख लोगों ने मनमानी घूस ले ले तबाह कर दिया। कुछ इनकी रहन सहन से इनकी अप्रतिष्ठा के कारण भी इनके सब व्यवहार नष्ट होगये, अन्त में यहां तक हुआ कि इन बेचारे को एक एक दिन के लाले पड़ गये। इस लोक में तो यह दशा हुई परलोक का ईश्वर जाने। परन्तु उक्त दूसरे भाई की सम्पूर्ण पुरुष प्रतिष्ठा करते तथा इनकी बात भी मानते थे और बुद्धि के लिए तो

में लिख ही चुका हूँ कि विलक्षण थी, वह अपनी किसी न किसी युक्ति से एक राजा के पास पहुंच गया। राजा इसके ऊपर अति प्रसन्न हुआ और बहुत ही चाहने लगा। और थोड़े ही काल में राजा ने उसे अपना मंत्री नियत किया। पुन योगादि साधन करने से जब इसकी आत्मा में बुद्धि का प्रकाश हुआ तो राजा की नौकरी छोड़ एकान्त वन मे जाकर ध्यान करने लगा। यह सब धन की पवित्रता का कारण है।

३२-इन्द्रिय-निग्रह

एक मिया किसी गाव में सकुटुम्ब रहा करते थे और मिया जी झाड़ फूंकी अथवा नाउतों का काम किया करते थे। एक बार बर्सात में मिया जी की तिदरी कई दिन से टपक रही थी। मियां की बीवी ने कहा कि-'मिया, जरा इस सूराख को बन्द कर दीजिये।' मिया जीने कहा कि-'बन्द कर देंगे, अभी क्या भरभर है?' इतने में मियां जी को कहीं से झाड़ने का बुलावा आया और मिया एक बकरकसाब की सी छुरी ले चल दिये और मिया जी की बीबी भी चुपके से पीछे २ इस लिए चलती हुई कि देखू मुआ कैसे झाड़ता है। मिया जी वहां जाकर छुरी से भूमि खोदने लगे और पढ़ते जाते थे कि 'जल बाधों उलहरि बाधों, बाधों जल की काई, जखै मीरा सैयद बाधू हनूमान की दोहाई'-तथा-'आकाश बांधू, पाताल बांधू दें तडाक छू।' इतने में बीबी ने पीछे से एक चपत दे तडाक की और कहा-"मुआ, यहा आकाश पाताल बांधता है, घर में जरा सा सूराख जो तिदरी में टपक रहा था सो तो तेरे बाधे न बंधा तब तू आकाश पाताल क्या बांधेगा?"

इसका दार्ष्टान्त यों है कि जब इस जीवात्मारूप मिया से इन्द्रियरूपी सूराख शरीर रूपी तिदरी के न बाधे बँधे तो कौन

आर्य्य-समाज का प्रचार करेगा? कौन सनातनधर्म का प्रचार करेगा? कौन देश भर में वेद प्रचार करेगा? कौन स्वराज्य प्राप्त करेगा? किस से आशा की जाय?

३३--हाँ

किसी एक गांव में दो सगे भाई रहते थे। उसमे से बडा बेचारा साधारण उर्दू वा थोडी सी अंगरेजी वा साधारणत मातृभाषा जानता था और छोटा भाई पूर्ण संस्कृतज्ञ था परन्तु बुद्धि में पूरा बुद्धू था। बड़े भाई के गौने के दिन समीप आ गये थे और उन को एक अभियोग होने के कारण न्यायालय में जाना था, अत बडा भाई अपनी ससुराल नहीं जा सकता था, इस कारण उसने अपने छोटे भाई से कहा कि 'तुम अमुक तिथि पर जाकर अपनी भावज को विदा करा लाना क्योंकि मुझे उसी तिथि पर अमुक अभियोग में न्यायालय में जाना है परन्तु वहा जाकर ठीक तौर से बात चीत करना अर्थात् हा के स्थान में हाँ और नहीं के स्थान में नही।' इन्हों ने कहा कि-"मैं इतना मूर्ख हूं क्या कि मुझे हाँ नही का भी ज्ञान नहीं?" बडे ने कहा-"तुम्हें ज्ञान तो है परन्तु मैं बडा हू इस लिए समझाना मेरा धर्म था, इससे समझा दिया।" परन्तु छोटे हा नाहीं को सिलसिलेवार लिख यानी प्रथम हा पीछे नाही, भावज को विदा कराने चले। ये ज्योंही उस गाव के धुर पर पहुचे तो इनके भाई की ससुराल के लोग मिले और इनसे पूछा कि-"कहो, तुम्हारे गांव में कुशल है?" कहा-"हां।" पूछा-"तुम्हारे भाईजी तो अच्छे हैं?" कहा-"नाही।" पूछा-"क्या कुछ बीमार हैं?" कहा-"हाँ।" पूछा कि-"कुछ औषधि होती है?" कहा- "नाही।" पुन. कहा- "क्या बहुत बीमार हैं?"

कहा–हा।" यह सुन घबड़ा कर पूछा कि– 'बचने की उम्मेद है या नाहीं?" कहा– 'नाहीं।" कहा कि– क्या इतने सब बीमार हैं?" कहा—' हां।" पुनः पूछा कि—' मौजूद हैं या नहीं?" कहा–"नाहीं।' इतना सुन सबके सब बड़े जोर ओर रोने लगे और सबका रोना सुन ये भी रोने लगे। अब तो सब को और भी निश्चय हो गया कि इन के भाई नहीं रहे। प्रातःकाल इन्हों ने कहा कि— "क्या भावज को विदा नहीं करोगे?" उन्होंने कहा कि– "दो चार दिन और चूरी निहुये पहने हैं फिर तो हम भेज ही देंगे।' ससुराल वालों का यह उत्तर सुन यह वापिस आये। जब घर में इनके बड़े भाई आये और पूछा कि– 'भावज को विदा नहीं करा लाये?" तब इन्हों ने कहा कि–' भावज तो राड़ होगई, उस कैसे लिवा लाते?' भाई ने कहा–"है है, यह क्या कहता है? हम बने ही हैं और वह राँड हो गई।" इसने उत्तर दिया कि— क्या तुम कहीं के नाहर हो? तुम बने रहे बुआ राड हो गई। तुम बने रहे, मौसी राड होगई। तुम बने रहे बहन राँड होगई। तुम बने रहे, चाची राड हो गई। भावज के लिए तुम राड होने से कैसे रोक सकते?" तब तो भाई ने कहा–' बताओ वहां क्या क्या बातें हुई थीं?" तब इसने सम्पूर्ण वृत्तान्त सच्चा २ कह सुनाया। बड़े भाई ने अपनी ससुराल जा सबको शान्ति दी। सच है, बुद्धि तेरी बड़ी महिमा है। देखिये—

बुद्धिर्यस्य बलं तस्य निर्बुद्धेस्तु कुतो बलम्।
यस्य सिंहो मदोन्मत्तः शशकेन निपातितः॥

अर्थ—एक बार एक खरहे से सिंह ने गुस्सा हो कहा— 'इतनी देर तू कहा रहा?" खरहे ने कहा— महाराज, एक दूसरा सिंह कहता था मैं इस बन का राजा हूं तू कहां जाता

है?' उसने कहा— चल, निकल।" उसने ने कुआ बतला दिया और कहा—"इसमें है।" सिंह ज्यों ही झांका कि उस को परछाहीं भी मालूम हुई और उडीकने पर आवाज भी आई, अत कुएं में कूद पडा। कहा है कि—

समुत्पन्नेषु कार्य्येषु बुद्धिर्यस्य न हीयते।
स एव दुर्गं तरति जलस्थो वानरो यथा॥

अर्थ—एक बार एक बन्दर एक नदी में पड गया। उस की टांग एक मगर ने पकड ली। दूसरे ने कहा—"क्यों हमने कहा था।' उसने कहा—"क्या हुआ, साले ने लकडी पकडी है और समझता है कि बन्दर की टांग पकडे हू।" ऐसा सुन मगर ने टांग छोड दी बन्दर नदी के पार आया।

२४--विद्या

एक दीन काश्तकार का लड़का नित्य पाठशाला में पढने जाया करता था, परन्तु वह बहुत ही दीन था इस कारण वह अपने पढने का सामान इकट्ठा नहीं कर सकता था, यहां तक कि लेखनी, मसीपात्र और कागज भी नहीं लेसकता था और भोजनों के लिए भी उसे पेट भर, अन्न नहीं मिलता था जिससे वह बहुत ही कृश होरहा था किन्तु पढने का उसे इतना व्यसन था कि सामानों के न होते हुए भी वह बडे चाव के साथ पढता था और अपनी कक्षा के लडकों में बडा ही बुद्धिमान और होशियार प्रतीत होता था। इसकी यह दशा देख अध्यापकों के चित्त में दया आई और उन्होंने आपस में सम्मति करके उस बालक के भोजन का सामान इकट्ठा करा दिया। बालक अपने सहपाठियों से बडा ही मेल जोल रखता था, इससे कोई कोई

सहपाठी लेखनी, मसीपात्र, कोई पुस्तक भी दे दिया करते थे। पाठशाला के सिवा वह अपने घर पर भी पढ़ा करता था परन्तु कभी कभी घर में दीनता के कारण तेल का प्रबन्ध न हो सकने से वह वन में जा खद्योतों (जुगनू) को पकड़ अपनी टोपी में रख उनके प्रकाश से और कभी कभी चाँदनी में चन्द्रमा के प्रकाश से पढ़ा करता था। इस प्रकार बड़े बड़े कष्ट उठा उसने विद्या प्राप्त की और विद्या में ऐसा निपुण निकला कि जिसके कारण सरकार से वा पाठशाला के निरीक्षकों से कई बार अनेक प्रकार के बड़े बड़े प्रशंसनीय प्रशंसापत्र तथा पारितोषिक भी प्राप्त किये। अब तो इसकी विद्या की चर्चा चारों ओर धूम धाम से साथ विस्तृत हुई। यहाँ तक कि बड़े बड़े राजाओं के भी कर्णगत हुई। तब तो इसे एक बड़े राजा ने बुला कर इसकी योग्यतानुसार अपने यहाँ मन्त्री पद पर नियत किया। धन्य है महारानी सरस्वती ! तेरी अपार महिमा है। तूने कितने ही कंगालों को राजा और कितने ही मूर्खों को महात्मा योगिराज ऋषिमुनि तपस्वी तथा देवता बना दिया और मुक्ति तक प्राप्त कराई। किसी कवि ने कहा है—

विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्न गुप्तधनम् ।
विद्या भोगकरी यशः सुखकरी विद्या गुरूणां गुरु ॥
विद्या बन्धु जनो विदेशगमने विद्या परं दैवतम् ।
विद्या राजसुपूजितं न च धनं विद्याविहीनः पशुः ॥

२५—छोटों की बात का तिरस्कार न करो

कभी अभिमान में आकर छोटों की बात का तिरस्कार न करना चाहिये क्योंकि कभी कभी छोटों के ख्याल में वह बात आ जाती है जो बड़ों को स्वप्न में भी नहीं सूझती।

लण्डन के महात्मा न्यूटन से ऐसा कोई शिक्षित व्यक्ति न होगा जो परिचित न हो। आपको बिल्ली पालने का बड़ा शौक था और आपने छोटी बड़ी दो बिल्लियां पाल रक्खी थीं जो दिन भर तो इधर उधर घूमा करती थीं और रात में महात्मा न्यूटन की चारपाई के नीचे आकर सो रहती थीं। इस कारण महात्मा न्यूटन जब रात में अपने कमरे में सोया करते थे तो कमरे के किवाड़ों की जंजीर न बन्द करके साधारण ही किवाड़े भेड़ लिया करते थे कि जिसमें बिल्लियां किवाड़े खोल कर चली आयें और बिल्लियां भी जब घूम कर बाहर से आतीं तो किवाड़े खोल अन्दर तो चली आती थीं पर किवाड़ों को वे बन्द नहीं कर सकती थीं कि जिससे वे सारी रात जड़ाया करती थीं। यह देख महात्मा न्यूटन ने सोचा कि कोई ऐसा इन्तिजाम कर देना चाहिये कि जिसमें बिल्लियां जड़ाया न करें। इसके लिये उन्होंने यह विचारा कि अगर हम अपने कमरे के दोनों किवाड़ों में दो छेद यानी छोटी बिल्ली के लिये छोटा और बड़ी के लिए बड़ा करा दें और कमरे के किवाड़े की जंजीर सोने के समय बन्द कर लिया करें तो बिल्लियां ठण्ड से बच जायें। बस यह विचार बढ़ई को बुलवा कहा कि—"ऐ बढ़ई! तुम सुनते हो देखो यह जो दो बिल्लियां मैंने पाल रक्खी हैं सो रात में मैं तो योंही साधारण किवाड़े भेड़ कर सो जाता हूं और बिल्लियाँ कुछ घूम कर बाहर से आती हैं तो किवाड़े तो खोल लेती हैं पर बंद नहीं कर सकतीं जिससे वे जड़ाया करती हैं। सो तुम इन हमारे कमरे के दोनों किवाड़ों में दो छेद कर दो यानी छोटी बिल्ली के लिए छोटा और बड़ी बिल्ली के लिए बड़ा ताकि मैं शाम से किवाड़े बन्द कर सो जाया करूं।" यह सुन बढ़ई ने कहा कि—"हुजूर इसके लिए दो छेदों को दोनों किवाड़ों में करने की जरू

जरूरत है, एक ही बड़ा छेद एक किवाड़ में करने से दोनों निकल जाया करेंगी।' बढ़ई ने बहुत कुछ समझाया पर न्यूटन ने न माना। तब तो बढ़ई ने छेद करना शुरू किया और प्रथम एक किवाड़ में बड़ा छेद करके किवाड़े भेड़ दिये और उस एक ही छिद्र से दोनों बिल्लियें निकल गईं। यह देख महात्मा न्यूटन उछल पड़े और बड़े ही प्रसन्न हुये और बढ़ई को बहुत कुछ पारितोषिक दिया। ठीक है—

बलादपि गृहीतव्य युक्तमुक्त मनीषिभिः।
रवेर विषय किन्न प्रदीपस्य प्रकाशकम्॥

३६-सत्य

एक राजा की एक अत्यन्त रूपवती रानी स्नान किये हुये महल की छत पर केश सुखा रही थी कि इतने में कौवे ने उसके शिर पर हग दिया। रानी को यह देख बड़ा ही क्रोध आया, और वह तुरन्त जा कर कोपभवन में लेट रही। महाराज को यह रानी बहुत ही प्यारी थी इस से महल में आते ही रानी को न देख उन्होंने दासी से पूछा— 'आज रानीजी कहा हैं?' दासी ने कहा—"महाराज, रानीजी आज कोपभवन में हैं।" बस—' कोपभवन सुन सकुचे राऊ। भय बस अगे परत न पाऊ।" परन्तु जैसे तैसे राजा ने वहां तक पहुंच रानी से कहा—"कहो प्यारी! क्या हुआ, किसने तुम्हारे साथ अनुचित व्यवहार किया, किसे काल ने आकर घेरा है?" रानी ने कहा—"महाराज आज मैं महलों की छत पर स्नान किये हुये केश सुखा रही थी कि एक दुष्ट कौवे ने मेरे सिर पर हग दिया, सो जब तक आप उस कौवे को न मरवा डालेंगे, मैं अन्न जल ग्रहण न करूँगी।" महाराज ने कहा—"अरे रानी, यह कैसी है, पक्षियों में क्या बोध है कि यह रानी है या साधारण

री है। उसने उडते हुए साधारणतः ही हगा होगा और वह तेरे सिर पर पड गया होगा। इससे तुझे हठ नहीं करना चाहिये।' पर रानी ने एक न सुनी और बहुत कुछ हठ किया। तब राजा ने कहा कि— तुम उठ कर अन्न जल करो, हम कल प्रातःकाल सब कौवों को पकडवा उनमें से उस अपराधी कौवे को मरवा डालेंगे।" रानी यह सुनते ही मुस्करा कर बडे नाज नखरे के साथ आँखें मटकाती हुई उठी। राजा देख फूल गया। जब दूसरे दिन प्रातःकाल आया तो राजा ने अपने भृत्यों को आज्ञा दी कि-"जाओ रे हमारे राज्य के सब कौवों को पकड लाओ।" भृत्यों ने ऐसा ही किया। जब भृत्यों ने आकर यह कहा कि-'महाराज सब कौवे आ गये।" तब राजा ने इन कौवों से कहा- 'कहो भाई कौवो, सब कौवे आगये ?' तब तो सब कौवों ने जाँच पडताल कर कहा- 'महाराज एक कौवा नही आया है, बाकी सब आ गये।" राजा ने भृत्यों से कहा-"क्यों, भाई जो कौवा नहीं आया, उसे भी शीघ्र ही लाओ।" भृत्यों ने कहा-' महाराज हम उसे कई बेर बुला आये हैं, आता ही होगा।' और कौवों ने आपस में सम्मति की कि भाई किस कौवे ने ऐसा भारी अपराध किया जिसके कारण आज बिरादरी भर को कष्ट मिल रहा है ? अन्त में यह ठहरी कि हो न हो वही कौवा अपराधी है जो अब तक नहीं आया है शायद वही अपराधी है। ऐसा समझ राजा उस पर अत्यन्त ही क्रोधित थे कि इतने में वह कौवा आ गया। कौवे के आते ही महाराज का उससे यह प्रश्न हुआ कि-"क्यों भाई कौवे, ये कौवे सब अभी आ गये थे, तुमने इतनी देर कहाँ की ?' कौवे ने कहा-"महाराज, अपराध क्षमा हो मेरे पास एक न्याय आ गया था, उसे चुकाने लगा, इससे देर हो गई।" राजा ने कहा —"क्या न्याय था?" कौवे ने कहा—

"महाराज, एक स्त्री अपने पति से यह कहती थी कि मैं मर्द और तू मेरी स्त्री। और मर्द कहता था मैं मर्द और तू मेरी स्त्री है। मर्द और स्त्री दोनों हमारे पास आये और मर्द ने मुझ से यह प्रश्न किया कि भाई कौवा, यह मेरी स्त्री मुझ से कहती है कि तू मेरी स्त्री और मैं मर्द हूँ, सो कभी मर्द भी स्त्री हो सकता है? तब मैंने कहा हाँ हो सकता है जो मर्द कामवश हो स्त्री के अनुचित कहे में आ जाय और उसके कहने में चले वह स्त्री है।" राजा ने यह सुन सब कौवों से कहा—"अरे जाओगे कौवो, तुम सब भग जाओ।" राजा की आज्ञा पा सब कौवे चले गये जब रानी ने यह वृत्तान्त सुना तो तुरन्त ही कोपभवन में जा गिरीं। जब फिर राजा महल में भोजन करने गया तो रानी को न देख दासी से पूछा। दासी ने कहा—'महाराज, रानी जी कोपभवन में हैं।" राजा ने वहां जा बहुत कुछ समझाया पर रानी ने कहा—"कौवे ! की चले हमारी नहीं। हम चाहें वहीं मर जायँ पर जब तक आप उस कौवे को न मरवा डालेंगे तब तक अन्न जल ग्रहण न करूँगी।" राजा ने रानी का विशेष हठ देख कहा—' हम फिर सब कौवों को बुला उसे मरवा डालेंगे। तुम उठ कर अन्न जल करो।" रानी पुनः प्रसन्न हो उठ खड़ी हुई। दूसरे दिन प्रातःकाल होते ही राजा ने पूर्ववत् सब कौवे पकड़ मगवाये, परन्तु वह कौवा फिर भी नहीं आया। तब राजा ने कहा कि—'निश्चय यही कौवा अपराधी है, आते ही उस कौवे को बिना वध कराये न छोड़ेंगे।" कौवा ज्यों ही आया राजा ने कहा—"क्यों रे कौवे, तूने इतना विलम्ब क्यों किया ?" कौवे ने कहा—"महाराज, अपराध क्षमा हो एक न्याय आ गया था उसके चुकाने में इतना विलम्ब हो गया। दो पुरुषों में विवाद था, एक एक से कहता था कि तेरा मुंह नहीं है, पाखाने का स्थान है। दूसरे ने कहा—"मुह

पर अभियोग चला। सेवक ने न्यायालय में साफ साफ कह दिया कि हुजूर हम को इसने जिस मुख से गाली दी उस मुख को हमने काट दिया तथा जिन हाथों से मारा वे हाथ काटे। किसी कवि ने क्या ही सत्य कहा है—

क्रोधोहि शत्रुः प्रथमो नराणां देहस्थितो देह विनाशनाय।
यथा स्थितः काष्ठगतोहि वह्निः स एव वह्निर्दहतेच काष्ठम्॥

अर्थ—मनुष्य के शरीर में छिपा हुआ क्रोध इस प्रकार देह के नाश का हेतु स्थित है जैसे काठ के भीतर छिपी हुई आग जो प्रज्वलित होने पर उसी को नष्ट कर देती है, इसी भांति क्रोध प्रज्वलित होने पर क्रोधकर्त्ता को ले मरता है। दूसरे, संसार में ऐसा कोई पुत्र चाण्डाल न होगा जो अपनी माता ही को खाजाय, पर यह चाण्डाल क्रोध जिस हृदयभूमि रूपी माता से उत्पन्न होता है प्रथम उसे ही खाता है, दूसरे को पीछे। पुनः एक कवि का वाक्य है—

अन्धा करोमि सुधनं बधिरीकरोमि वीरं सचेतनमचेतनतां नयामि।
कृत्यं न पश्यति न येन हितं शृणोति धीमानधीतमपि न प्रतिसन्दधाति॥

३८—असंतकर्म अवश्य भोगने पड़ेंगे

अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।
नाभुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटिशतैरपि॥

एक राजा एक हाथी पर सवार बड़ी धूम धाम के साथ चला जाता था। परन्तु हाथी बहुत ही दुष्ट था, जिस समय किसी प्रयोजनार्थ राजा हाथी से उतरा कि हाथी बिगड़ गया और राजा के ऊपर सूंड प्रहार करने को दौड़ा। राजा हाथी की यह दशा देख भग खड़ा हुआ और हाथी ने भी राजा का पीछा

किया। यहां तक कि राजा को एक ऐसे अन्धे कुए में ले जा कर डाला कि जिसके एक किनारे पर पीपल का एक वृक्ष था और वृक्ष की जड़े कुयें के भीतर फोड़ २ निकल रहीं थी जो आधे कुए तक फैली थीं। राजा के कुयें में गिरते ही उसका पैर पीपल की जड़ों में हिलग गया। अब राजा का सिर नीचे और पैर ऊपर को थे। राजा की दृष्टि जब नीचे को पड़ी तो यह क्या देखता है कि कुए में बड़े २ विकराल काले २ सर्प विष नाग, कछुवे ऊपर को मुख बा रहे हैं जिन्हें देख राजा कांप गया कि यदि जड़ से मेरा पैर कदाचित् छूट गया और मैं कुए में गिरा तो मुझे यह दुष्ट जीव उसी समय भक्षण कर जायेंगे। जब ऊपर की ओर उसने दृष्टि डाली तो देखा कि दो चूहे, एक काला और दूसरा सफेद जिस जड़ में उस का पैर हिलग रहा है उसे कुतर रहे हैं। राजा ने विचारा कि मैं यदि जड़ पकड़ कर किसी प्रकार ऊपर निकल जाऊँ तो मतवाला हाथी ठोकर लगाने को ऊपर ही खड़ा है और नीचे सर्पादि जन्तु हैं और जड़ का यह हाल है। निदान राजा घोर विपत्ति में फसा। परन्तु उस पीपल के वृक्ष में ऊपर शहद की मक्खियों ने एक छत्ता लगा रक्खा था जिससे एक एक बूंद शहद धीरे धीरे टपकता था और वह शहद कभी कभी उन राजा साहब के मुख में जा गिरता था जिससे कि वह ऐसी आपत्ति में होते हुये भी सारी आपत्तियों को भूल शहद चाटने लगता और यहां तक उस बूंद के चाटने में आसक्त हो जाता था कि उसे इन आपत्तियों का किञ्चित् मात्र भी ध्यान नहीं रहता कि इस जड़ के टूटते ही मेरी क्या दशा होगी।

— मित्रो, दृष्टान्त तो यह हुआ पर इसका दार्ष्टान्त यों है कि यह जीवात्मारूपी राजा कर्मरूपी हाथी पर सवार है। चाहे

पर अभियोग चला। सेवक ने न्यायालय में साफ साफ कह दिया कि हुजूर हम को इसने जिस मुख से गाली दी उस मुख को हमने काट लिया तथा जिन हाथों से मारा वे हाथ काटे। किसी कवि ने क्या ही सत्य कहा है—

क्रोधोहि शत्रु प्रथमो नराणां देहस्थितो देह विनाशनाय।
यथा स्थितः काष्ठगतोहि वन्हिः स एव वन्हिर्दहतेच काष्ठम्॥

अर्थ—मनुष्य के शरीर में छिपा हुआ क्रोध उस प्रकार देह के नाश का हेतु स्थित है जैसे काष्ठ के भीतर छिपी हुई आग जो प्रज्वलित होने पर उसी को नष्ट कर देती है, इसी भांति क्रोध प्रज्वलित होने पर क्रोधकर्ता को ले मरता है। दूसरे, संसार में ऐसा कोई पुत्र चाण्डाल न होगा जो अपनी माता ही को खाजाय, पर यह चाण्डाल क्रोध जिस हृदयभूमि रूपी माता से उत्पन्न होता है प्रथम उसे ही खाता है, दूसरे को पीछे। पुन एक कवि का वाक्य है—

अन्धी करोमि भुवनं बधिरीकरोमि वीरं सचेतनमचेतनतां नयामि।
कृत्यन पश्यति न येन हितं शृणोति धीमानधीतमपिनप्रतिसंदधाति॥

३८—असंतकर्म अवश्य भोगने पड़ेंगे

अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।
नाभुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटिशतैरपि॥

एक राजा एक हाथी पर सवार बड़ी धूम धाम के साथ चला जाता था। परन्तु हाथी बहुत ही दुष्ट था, जिस समय किसी प्रयोजनार्थ राजा हाथी से उतरा कि हाथी बिगड़ गया और राजा के ऊपर सूँड प्रहार करने को दौड़ा। राजा हाथी की यह दशा देख भग खड़ा हुआ और हाथी ने भी राजा का पीछा

किया। यहां तक कि राजा को एक ऐसे अन्धे कुए में ले जा कर डाला कि जिसके एक किनारे पर पीपल का एक वृक्ष था और वृक्ष की जड़ें कुएं के भीतर फोड़ २ निकल रहीं थी जो आधे कुए तक फैली थीं। राजा के कुयें में गिरते ही उसका पैर पीपल की जड़ों में हिलग गया। अब राजा का सिर नीचे और पैर ऊपर हो गये। राजा की दृष्टि जब नीचे को पड़ी तो यह क्या देखता है कि कुए में बड़े २ विकराल काले २ सर्प जिन पादरें, कछुये ऊपर को मुह बा रहे हैं जिन्हें देख राजा काप गया कि यदि जड़ से मेरा पैर कदाचित छूट गया और मैं कुए में गिरा तो मुझे यह दुष्ट जीव उसी समय भक्षण कर जायेंगे। जब ऊपर की ओर उसने दृष्टि डाली तो देखा कि दो चूहे, एक काला और दूसरा सफेद जिस जड़ में उसका पैर हिलग रहा है उसे खुतर रहे हैं। राजाने विचारा कि मैं यदि जड़ पकड़ कर किसी प्रकार ऊपर निकल जाऊं तो मतवाला हाथी ठोकर लगाने को ऊपर ही खड़ा है और नीचे सर्पादि जन्तु हैं और जड़ का यह हाल है। निदान राजा घोर विपत्ति में फसा। परन्तु उस पीपल के वृक्ष में ऊपर शहद की मक्खियों ने एक छत्ता लगा रक्खा था जिसमें एक एक बूंद शहद धीरे धीरे टपकता था और वह शहद कभी कभी इन राजा साहब के मुख में जा गिरता था जिसको कि वह ऐसी आपत्ति में होते हुये भी सारी आपत्तियों को भूल शहद चाटने लगता और यहां तक उस बूंद के चाटने में आसक्त हो जाता था कि उसे इन आपत्तियों का किञ्चित मात्र भी ध्यान नहीं रहता कि इस जड़ के टूटने से मेरी क्या दशा होगी।

मित्रो, दृष्टान्त तो यह हुआ पर इसका दार्ष्टान्त यों है कि यह जीवात्मारूपी राजा कर्मरूपी हाथी पर सवार है। चाहे

यह इसे सुमार्ग से ले जाय चाहे कुमार्ग से। परन्तु जिस समय इस कर्मरूप हाथी से यह उतरता है उस समय कर्मरूप हाथी इस पर प्रहार करने दौडता और इसे खेदकर माता के गर्भाशय रूपी अन्धे कुयें में ले जाकर डालता है। उस कुये में आयुरूपी वृक्ष की जड में इसका पैर हिलग रहता है और जब यह उस जड में उलटा लटकता है (गर्भाशय में प्रत्येक पुरुष का सिर नीचे और पैर ऊपर होते हैं) और कुये में नीचे संसार को देखता है तो इस में बड़े बडे भयंकर सर्प, विसखापरे, कछुये यानी काम क्रोध लोभ मोह अहंकार ईर्षा द्वेष तृष्णा आदि सर्प, कछुये मुंह फाड़े ऊपर को ताक रहे हैं कि यह ऊपर से गिरे और हम इसको अपना भक्ष्य बनावें। यह देख जीवरूप राजा अत्यन्त व्याकुल होता है और जब यह ऊपर की ओर दृष्टि डालता है तो इसकी आयुरूप जड को दो काले सफेद चूहे, यानी सफेद चूहा दिन और काला चूहा रात, इसकी आयुरूपी जड जिसमें इसका पैर हिलगा है काट रहे हैं और जब यह बिचारता है कि यदि इस कुयें से मैं किसी प्रकार जड वड पकड कर निकल जाऊँ तो कर्मरूपी हाथी इसके ठोकर लगाने को ऊपर खडा है इस दशा में जो मधुमक्खीरूप विषय का शहद (रूप, रस, गन्ध, शब्द, स्पर्श) है उसका आस्वादन करने में यह ऐसा निमग्न हो जाता है कि सारी आपत्तियों को भूल जाता है। इसे यह भी स्मरण नहीं रहता कि आयुरूपी जड अभी कटने वाली है और अन्त में मैं गिर के इन सर्प कछुओं की खुराक बनूंगा। इस लिये हम लोग न ऐसा कर्म करें कि जिस से हाथी खेद कर हमें गर्भाशयरूप कुएँ में न डाल पाये अर्थात् हम लोग ऐसे सत् कर्म करें जिससे गर्भाशयों रूप अन्धे कुओं में हमें न आना पड़े और हम मोक्ष प्राप्त करें।

३६-ब्रह्मचर्य

एक माली बड़ी शीघ्रता के साथ दौड़ा जा रहा था। एक आदमी ने पूछा—"भाई, कहाँ इतनी शीघ्रता से दौड़े जा रहे हो?" माली ने कहा—"मुझे आज कई गाड़ी फूल तोड़ने हैं।" उस मनुष्य ने पूछा—"कई गाड़ी फूल तोड़ कर क्या करोगे?" उसने कहा—"इनका रस खींचेंगे।" उसने पूछा—"रस खींच कर क्या करोगे?" इसने कहा—"फिर रस का रस खींचेंगे।" उसने पूछा—"फिर क्या करोगे?" कहा—"फिर कई बार रस खींच कर इतर बनावेंगे।" उसने पूछा कि—"कई गाड़ियों में कितना इतर बनेगा?" इसने कहा—"एक शीशी।" उसने कहा—"फिर इस इतर को क्या करोगे?" माली ने कहा—"उसे किसी नरदबोन की नाली में फेंक देंगे।" उसने कहा—"भला तुझ सरीखा भी कहीं मूर्ख मिलेगा कि इतनी शीघ्रता से दौड़ा जा रहा है, किसी से बात तक करता नहीं, फिर इतना सब कुछ परिश्रम कर इतर निकाल नरदबोन में फेंकेगा।"

मित्रों दृष्टान्त तो यह हुआ पर इसका दार्ष्टान्त यह है कि जीवात्मारूपी माली दिन रात बड़ी शीघ्रता से दौड़ रहा है, परन्तु इससे जब कोई महात्मा कहता है कि—"कहाँ जाते हो, सुनो।" तो यह कहता है—"फुरसत नहीं।" क्योंकि कई गाड़ी फूल यानी नाना प्रकार के अन्नादिक पदार्थ धन प्राप्त करना है, जिस के लिए किसी कवि ने कहा है—

नृत्यन्ति गायन्ति रुदन्ति चैव रोदन्ति वश च गुणे चलन्ति।
तथापि पिण्ड मही लिहन्ति सर्वं कुकर्मावरित चरन्ति॥
पतिव्रतं सत्कुलजा जहाति स्वब्रह्मचर्यं च पुमान् कुलीनः।
यस्य प्रभावैर्नवमासमात्रात् द्रव्यं सदा विच्छरणं ममास्तु॥

वृत्तान्त पत्राणि पर शतानि सु माञ्जलैरा शर्युतानि।
स्वकान्यानि समर्थयंति धना न नान्यत्र न के भजति ॥
गतापराधानपि दण्डय त कृतापराधानपि च त्यजति।
य भ्रान्तचित्ता क्रियराजकीया वृत्त यतस्यै दशतिमर्दाश्च ॥
उपानत्महारैस्ताडित प्र सुर्नभर्त्सिता. कारागेहे निबद्धा।
यदर्थं व्यथास्तस्करा: स मह्न्तो धनायाय तस्मै नमस्ते नमस्ते ॥

बस केवल एक पेट के भरने के लिए धन के लिए लोग क्या२ नहीं करते। तब तो इन से महात्मा पूछता है, धन कमा कर क्या करोगे? धान्यादिक नाना प्रकार के पदार्थ खरीदेंगे। उन पदार्थों को लेके क्या करोगे? रस बनावेंगे। उन रस का क्या करोगे? रक्त बनावेंगे। रक्त बना के क्या करोगे? मांस बनावेंगे। मांस बना के क्या करोगे? मज्जा बनावेंगे। मज्जा बना के क्या करोगे? हड्डी बनावेंगे। हड्डी बना के क्या करोगे? सार बनावेंगे। सार बना के क्या करोगे? वीर्य्य बनावेंगे क्यों कि शुश्रुत मे लिखा भी है—

रसाद्रक्त ततो मांसं मांसान् मेद: प्रजायते।
मेदसोस्थि ततो मज्जा मज्जा शुक्रस्य संभव: ॥

अर्थ—रस से रक्त, रक्त से मांस, मांस से मेदा, मेदा से मज्जा, मज्जा से हड्डी हड्डी से सार सार से वीर्य्य बनता है। तब तो महात्मा ने कहा—गाडियों अन्नादिक पदार्थों में कितना वीर्य्य बनता है? इसने कहा—बहुत ही थोड़ा। फिर उसे क्या करोगे? कहा—रण्डियों की नरकवीनरूपी मोरियों में फेंक देंगे।

अब आप लोग सोचें कि जिस अन्न के प्राप्त करने में कितने पाप तथा कितने कष्ट सहे, फिर उससे वीर्य्य बनाने में कितने कष्ट सहे पुन उसे इस प्रकार व्यर्थ फेंकना कितना अनुचित है?

४०—बिना परीक्षा के व्याह

पर हथ बनिज संदेसे खेती। बिन बर देखे ब्याहे बेटी॥

एक सेठजी ने अपनी कन्या के जिसकी अवस्था आठ वर्ष की थी, विवाह के लिए नाई को भेजा। नाई कुछ दूर चल कर दूसरे गाँव में पहुंचा। वहां एक लालाजी ने नाई को कुछ दे दिया वहीं खा-खिला व्याह निश्चय कर लौटा दिया। जब नाई लौट कर आया तो लालाजी ने कहा कि—"कहो नाऊ-ठाकुर, विवाह कर आये?" कहा—"हाँ लालाजी, ब्याह ठीक हो गया।" लालाजी ने कहा कि—'वर की अवस्था क्या है?" नाऊठाकुर ने उत्तर दिया—'लालाजी, बीस बीस बीस।' लालाजी ने कहा—'और धन जन?" नाऊठाकुर ने कहा—'लालाजी, धन तो इतना अधाधुन्ध है कि कहीं कोई लिए जाता, कहीं कोई लिए जाता, पर वह कुछ देखते ही नहीं।" लालाजी ने पूछा—"और इज्जत भलमन्सी कैसी है?" नाऊ ठाकुर ने कहा—"लालाजी, चार आदमी हर समय साथ चलते हैं, इज्जत मरजाद को क्या कहना।" लालाजी ने कहा—"और वर का स्वभाव कैसा है?" नाऊठाकुर ने कहा—लालाजी, चाहे कोई शिकायत लावे सुनते ही नहीं। बड़ा सीधा स्वभाव है।" लालाजी के सब सन्देह दूर हो गए और व्याह ठीक हो गया और भी जो मध्य की बातें थीं सब नाऊठाकुर कर धरा आये। जब व्याह का दिन आया और लड़का भाँवरों में गया तो बरातवालों में से एक ने उसे गोद में उठा पाटे पर बिठाल दिया। तब तो लोगों ने वर को देख कहा—' नाऊठाकुर, यह लड़का कैसा? तुम तो कहते थे कि 'बीस वर्ष का है?' नाऊठाकुर ने कहा—"लालाजी, आप न समझें तो मैं क्या करूं, हमने नहीं कहा था कि— 'बीस बीस बीस'?" पुन लालाजी ने कहा—"यह तो अन्धा भी है।" नाई

ने कहा—' सरकार हमने तो यह भी कहा था कि उनके यहां से चाहे कोई कुछ ले जाय, देखते ही नहीं।" तब पण्डित ने वर से कहा—"जल ले आचमन कीजिये।" वर ने सुना ही नहीं। तब लाला जी ने कहा कि—'यह तो बहिरा भी है।" नाई ने कहा—"लालाजी, हमने तो कहा था कि उनसे चाहे कोई शिकायत करे, सुनते ही नहीं, स्वभाव के बड़े सीधे हैं।" पुनः पण्डित ने कहा—' आप उस पाटे पर आइये।" तब चार आदमियों ने उठा कर बिठाया। तब तो लालाजी ने कहा—' यह तो लँगड़ा भी है।" नाई ने कहा—"लालाजी, क्या हमने नहीं कहा था कि चार आदमियों के साथ चलते हैं, वह ऐसे इज्जत दार हैं।'

४१—जैसा करना वैसा भरना

एक वैश्य की बहू बहुत ही कर्कशा दुष्ट प्रकृतिवाली थी। निशदिन न कुछ काम न काज, केवल अपनी सास से लड़ने का उसका काम था और यहां तक अपनी सास के साथ अत्याचार करती थी कि अपने उतारन फटे पुराने वस्त्र उसके पहिनने को और एक टूटी सी खाट उसके लेटने को दे रक्खी थी और खाने को भोजन जो सब से बुरा अनाज सड़ा घुना चुनी भूसी होती थी उसकी रोटियाँ और दाल मिट्टी के कूंड़े में दिया करती थी। परन्तु इस बहू के भी एक लड़का था। जब यह लड़का सयाना हुआ और इसका व्याह हुआ और उसकी स्त्री घर आई तो भी वह अपनी सास के साथ तो दुष्ट व्यवहार करती थी, पर अपनी बहू को बड़े प्यार से रखती थी। परन्तु छोटी बहू अपनी सास के व्यवहार जो वह अपनी सास से करती थी नित्य देखा करती थी। यह बड़ी बहू अपनी छोटी बहू के आने पर अपनी बुढ़िया सास को इसी के हाथ कूंड़े में

भोजन भेजती थी और वह छोटी बहू अपनी सास की सास यानी अजियासास को भोजन खिला कूँडे को दीवार से औंधा देती थी। इस प्रकार करते करते बहुत कूँडे जमा हो गये। एक दिन इस छोटी बहू की सास यानी बड़ी बहू ने कूँडे देखे तो वे बहुत से जमा हो गये थे, तब तो वह अपनी पतोहू छोटी बहू से बोली—'बहू, यह कूँडे क्यों इकट्ठा करती जाती है? तमाम जगह घेर रक्खी है, इन्हें फोड़ती क्यों नहीं जाती।" उसने उत्तर दिया कि—"सासजी, फिर तुम्हें आगे मैं काहे में भोजन दिया करूंगी? कहां से इतने कूँडे लाऊंगी?" यह सुन कर बड़ी बहू ने अपना दुष्ट व्यवहार छोड़ दिया। सच है, किसी कवि ने कहा है—

चक्षुषा मनसा वाचा कर्मणा च चतुर्विधम्।
प्रसादयति यो लोकं तं लोकोऽनुप्रसीदति॥

४२—मूर्ख

बुद्धयत्र विद्या सफला फलप्रदा अबुद्धि विद्या विफलाऽफलप्रदा।
यथाति मूढाश्चतुरोऽपि विप्रा, गताः प्रदेशं स्वधना पुनरापि॥

अर्थ—बुद्धि ही से विद्या सुफल होती है और बुद्धि से रहित विद्या व्यर्थ होती है। यथा—

एक ज्योतिषी, एक वैद्य, एक नैयायिक, और एक वैयाकरणी ये चारों द्रव्य प्राप्ति की आशा से विदेश को निकले। ये चारों मनुष्य यद्यपि पण्डित थे तथापि बुद्धि से शून्य थे। चलते चलते जब वे बहुत दूर निकल कर एक राजा के राज्य में पहुंचे तो ग्राम के बाहर बैठ आपस में सम्मति की कि मुहूर्त पूर्वक ग्राम में चलना चाहिये, अत सबों ने कहा कि—"महाराज ज्योतिषी जी कोई ऐसा मुहूर्त निकालिये कि जिसमें

चलते ही सिद्धि प्राप्त हो।" ज्योतिषी जी महाराज ने मीन मेख वृष मिथुन कर कहा कि–"रात में दो बजे ऐसा मुहूर्त है कि चलते ही कार्य्य सिद्ध होगा।" जब दो बजे रात को चलना है तो कुछ भोजनादि का प्रबन्ध करना चाहिये, अतः यह सम्मति हुई कि भोजन के लिए वैद्यजी को भेजना उचित है; क्योंकि वे सम्पूर्ण पदार्थों के गुण दोष जानते हैं, इससे वे उत्तम पथ्य रूप भोजन लायेंगे और यह भी सम्मति हुई कि साथ में नैयायिक जी को जाना चाहिये क्योंकि यदि यह साथ होंगे तो तर्क वितर्क हो भोजन ठीक आयेगा। ऐसा सोच इन दोनो महाशयो को भोजन लेने के लिए भेजा। अब तो वैद्यजी सोचने लगे कि अमुक पदार्थ ले चलें तो वह कफवर्द्धक है और अमुक ले चलें तो वातवर्द्धक है और अमुक ले चलें तो वह पित्त वर्द्धक है। यह सोचते ही थे कि वैद्य जी को याद आया कि 'सर्वरोगहरो निम्ब.' इस लिए नैयायिक जी से कहा–"नीम के पत्ते सर्वरोग नाशक हैं, चलिये उन्हें तोड़ें।" निदान दो गट्ठे नीम के पत्ते तोडे गये वैद्य जी ने कहा–"जब तक मैं इन्हें बांध रहा हूं तब तक आप हाट से घृत लेते आइये।" नैयायिक जी घृत लेने गये। हाट से घृत लेकर मार्ग में चले आते थे कि अनायास ही इनके मन में शङ्का उत्पन्न हुई कि–"घृताधारं पात्र यद्वा पात्राधार घृतं।" अर्थात् घृत के आधार पात्र है या पात्र के आधार घृत है। पुनः सोचा कि–"प्रत्यक्षस्य किं प्रमाण?" यह विचार कर पात्र औंधा कर दिया। सम्पूर्ण घृत भूमि पर गिर पड़ा। कोरा पात्र ले वैद्य के पास आये। वैद्य ने पूछा–"घृत ले आये?" तब उन्होंने सम्पूर्ण वृत्तान्त वैद्य जी को कह सुनाया। दोनो नीम के पत्तों के गट्ठे सिर पर रक्खे हुए पूर्व स्थान पर आ विराजे। अब तीन तो अपना अपना काम कर चुके, रहे व्याकरणी जी उनसे कहा गया कि–"अब आप इसे पकाइये।" व्याकरणी जी कुम्हार के

यहां से दो गांदें लेकर और उनमें नीम के पत्ते भर चार चार यहां उनमें जल डाल कर उबालने लगे। जब नीम के पत्ते "बुड बुड बुड बुड" करने लगे, तब तो व्याकरणी जी ने कहा—"अशुद्ध न वक्तव्य, अशुद्ध न वक्तव्य।" परन्तु जड नाद या जल क्या सुनता, कैसे चुप होता, जब बार बड बड बड होता ही गया तो व्याकरणी जी ने क्रोध में आ पात्र भूमि में दे मारा और कहा—"अशुद्ध कि वक्तव्यं।" अन. चारों तमाम दिन भूखे रहे। रात को दो बजे राजा के शहर पनाह का फाटक बन्द हो गया। दूत पहरा देने लगे। उस समय इनका मुहूर्त आया। जब यह चारों शहर को चले तो वहां फाटक के किवाड़े बन्द पाकर बोले कि—"फाटक की खिड़की अवश्य तोड़ना चाहिये, क्योंकि इस साअत में प्रवेश करने से बड़ी सिद्धि प्राप्त होगी।" अब चारों ने ज्योंही फाटक की खिड़की को तोड़ा त्योंही राजदूत उन चारों को पकड़ ले गये और राजा के यहां से छै छै मास का कठिन कारागार हुआ। यह सिद्धि प्राप्त हुई। कहिये, इनको विद्या पढ़ाने से क्या फल प्राप्त हुआ किसी भाषा कवि ने ठीक कहा है—

> ऐरे गन्धी सुघर नर, अतर सुंघावत काहि।
> कर फुलेल को आचमन, मीठो कहत सराहि॥

तब गन्धी ने कहा—

> नहिं गंगा नहिं गोमती, नहीं राम सचार।
> तू कित फूली केतकी, गीधी गाव गवार॥

४३-मूर्खों के समाज में विद्वानों की दुर्गति

एक पण्डितजी पचीस वर्ष काशीजी में पढ आचार्य परीक्षा उत्तीर्ण कर आ रहे थे। वे एक मूर्खों के गाउं में से आ निकले।

उस ग्राम के वासी इन की धोती धोती चन्दन तिलक देख बोले- "क्या आप पण्डित हैं ?" उन्होंने कहा—"हां पण्डित हूं।" कहा—"आप कहाँ से आ रहे हो ?" पण्डितजी ने कहा—"काशीजी से।" पूछा—"आप कहाँ तक पढे हैं ?" पण्डितजी ने कहा—"मैं आचार्य्य परीक्षा उत्तीर्ण कर आया हूं।" ग्राम वासियों ने कहा—'आप हमारे पण्डित लठा पांड़ेजी से शास्त्रार्थ करेंगे?' पण्डितजी ने कहा—'हां करूँगा, आप उनको बुलाइये।' ग्रामवासियों ने कहा—'भाई इस प्रकार नहीं, पहले यह प्रतिज्ञा होजाय कि यदि आप जीतें तो हमारे पण्डित लठा पाडे के सम्पूर्ण पोथी पत्रा ले लीजिये और यदि हमारे पण्डित लठा पाड़े जीत जाय तो आपके सम्पूर्ण पोथी पत्रा ले लें।' पण्डित जी ने कहा— ऐसाही सही, आप लठा पांडेजी को ले आइये। ग्रामवासी लठा पाडेजी को इस श्लोक की भांति—

वडा धोता वडा पोथा पण्डिता पगडा वडा।
अक्षर नैव जानाति नपोडसखाय नमोनम ॥

एक वडी भारी धोती काशी के पण्डितजी से चार अंगुल नीची पहिरा कर तथा बहुत कुछ चदन तिलक चौयिहे मटके की तरह रंग पण्डित के सामने लाये। काशी के पण्डितजी ने कहा—'पण्डितजी, नमस्कार।' तव तो लठा पाडेजी ने कहा "नमस्कार फमस्कार, टमस्कार, गमस्कार।" काशी जी के पण्डित जी यह सुन चुप होगये कि यथार्थ में मैं इस मूर्ख से नहीं जीत सकता। लठा पाड़ेजी ने कहा—'अच्छा आप वडे पण्डित हो तो वताओ इसका क्या अर्थ है—

"खल्ल खेदया मदया।"

पर पण्डित जी चुपके चुप ही रहे। गाववालों ने पडितजी को चुप देख सव पुस्तकें छीन लीं। तव तो पण्डितजी चुपके

[?]न सोचते विचारते हुए चल दिये । जब घर पहुंचे तो इनका भाई जो मूर्खता में लठापाडे का वाप था, इन्हें देख कर आया और अपने भाई से मिल कर पूछा कि—"भाई जी आप उदासीन क्यों हैं !" भाई ने सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया । यह सुनते ही वह लठा पाडे से नीची धोती, चोटा पाग तिलक छाप लगा एक बोरे में पक्की ईंटें भरा एक आदमी के सिर पर रखवा अपने से एक हाथ ऊंचा लट्ठ ले लठा पाडे के गाँव जा विराजा परन्तु वहां यह दशा थी कि—

"घर की गाय गलैंदा खाय । बार बार महुना तर जाय ॥

अतः ग्रामवासियों ने आकर इनसे पूछा—"क्या आप पण्डित हैं" इन्होंने कहा—"हां ।" पूछा—"कहां पढ़े हो ?" कहा—"नदिया शान्ती में ।" कहा—"हमारे पण्डित लठा पाडे से शास्त्रार्थ करोगे?" कहा—"हां हां, और विद्या किस लिए पढ़ी है ?" तब गाँववालों ने कहा कि—"शास्त्रार्थ के प्रथम यह प्रतिज्ञा हो जाय कि यदि आप जीतें तो हमारे पण्डित लठा पाडे की सब आप पोथी पत्रा ले लें और यदि लठा पाँडे जीतेंगे तो वह सब आपकी पुस्तकें ले लेंगे ।" इन्होंने कहा—हमें स्वीकार है आप लठा पाडे को लाइये ।" तब ग्रामवासी लठा पाँडे का पूर्ववत भेष बना लिवा लाये । आते ही लठा पाडे ने कहा 'नमस्कार, फमस्कार, ठमस्कार, गमस्कार ।" इसने कहा– नमस्कार, फमस्कार, ठमस्कार, गमस्कार वमस्कार।' बस प्रणाम होने के पश्चात् ही लठा पाडे ने कहा—"खरला दैया ।' इसने कहा—'क्या मूर्ख है, पहिले ही खरला दैया? पहिले जोते जोतैया, बवै बवैया, सिंचै सिंचैया, गोड़ै गोड़ैया कटै कटैया, मड़ै मड़ैया, उड़ै उड़ैया, पिसै पिसैया, पवै पवैया, तब पीछे भी खरला दैया।' बस, यह सुनते गाववालोंने फटाक्

फावडे करछुला" और झटपट उन्हों ने करछुले तपा कर दो पण्डित जी के मस्तक मे लगा दिये और फिर पूछा कि 'पंडित अब शुद्ध हो ?" पण्डित जी ने सोचा कि अब बोले तो ये मुख दो और लगावेंगे। ऐसा समझ पण्डित विचारे चुप रह गये। तब अहीरों ने कहा—"अब शुद्ध होगया।"

कोलाहले काककुलस्य जाते विराजते कोकिलकूजितं किम्।
परस्परं संवदतां खलानां मौनं विधेयं सततं सुधीभिः॥

एक भाषा कवि ने भी क्या ही अच्छा कहा है—

जाइयो तहां जहां संग न कुसंग होय कायर के संग शूर भागे पर भागे है। फूलन की वासना सुहास भरे वासन पै कामिनी के संग काम जागे पर जागे है॥ घर बसे घर पै बसो वर बैराग कहां काम क्रोध लोभ मोह पागे पर पागे है। काजर की कोठरी में लाखहु सयानो जाय काजर की एक रेख लागे पर लागे है॥

४५—मूर्ख उल्टा ही समझता है

एक वृद्ध पण्डित अपने पुत्र को पढाते थे कि—

मातृवत् परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत्।
आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पण्डितः॥

पिता—पढो बेटा पढो, मातृवत् परदारेषु।
पुत्र—तो इसका क्या अर्थ हुआ ?
पिता—पराई स्त्री को माता के समान जानना चाहिये।
पुत्र—तब तो पिता जी मेरी स्त्री भी आपकी माता होगी।
पिता—छि. छि. छि· क्या ऐसा कहना चाहिये ? पढो—परद्रव्येषु लोष्ठवत्।

पुत्र—इसका क्या अर्थ हुआ ?

पिता—पराई वस्तु को मिट्टी के ढेले के समान जानना चाहिये

पुत्र—तो अब दुष्ट हलवाई की मिठाई के दाम नहीं दूगा, क्योंकि बरफी पेडे आदि मिट्टी के ढेले के समान वस्तु के दाम ही क्या ?

पिता—ठीक मूर्ख ! अधिक समझ के पद आगे भावार्थ मे स्पष्ट हो जायगा। आगे को पद— 'आत्मवत्सर्वभूतेषु य पश्यति स पण्डित ।"

पुत्र—इसका क्या अर्थ है ?

पिता—जो अपने समान सब को देखता है, वह पण्डित है।

पुत्र—तब तो अच्छी बात है, पर क्या अपने ही समान समझेंगे पराई वस्तु और पराई स्त्री भी अपनी ही समझना चाहिये।

पिता—अरे जा मूर्ख के मूर्ख! इसी बुद्धि पर धर्मशास्त्र पढना स्वीकार किया है। इससे तो खोनचा रखना सीख लेता तो घर का पालन तो होता ?

पुत्र—हट ये मूर्ख पाजी।

पिता ने थप्पड मारा और पुत्र लडकों में खेलने भग गया।

एक नवयुवा स्त्री गगाजी को घडा लेकर जल भरने जाती थी। इतने में वह धर्मशास्त्र-शिक्षित बालक आया और उससे बोला कि—"अम्मा, अरी अम्मा !"

स्त्री बोली—क्यों बेटा, आ (मन ही मन) इस लडके की कैसी प्यारी बोली है !

बालक—क्यों री अम्मा चीज खाने को एक पैसा तो दे ?

स्त्री—बेटा, मैं तो आप दुखिया हू। पैसा कहा से लाऊ, घर घर पानी भर कर पेट पालती हू।

बालक—अरी रॉड, पैसा क्यो नही देती ? भला चाहती है तो जल्दी दे, नहीं तो पीटता हू।

स्त्री—यह कैसा बालक है जो गालियें देता है।

बालक—नहीं देती हरामजादी? (लात मारी और घड़ा फोड़ डाला।)

इतने में गङ्गा स्नान से लौट कर उस बालक का पिता घर को आता था, सो यह चरित्र देख कर बोला—"क्यों रे बदमाश पुत्र" पुत्र बोला— 'यह मेरी माँ है, जो माँ के साथ क्रिया करता हूं, सोई इसके साथ करता हूं, क्योंकि आपने सबेरे पढ़ाया ही था कि—"मातृवत्परदारेषु।" और स्त्री की तरफ देख कर बोला—"क्योंरी अम्मा, मेरे पिता को देख कर घूंघट नहीं काढ़ती? क्या तू मेरी माँ है जो मेरे बाप की भी माँ है"

आदमी आदमी में अन्तर। कोई हीरा कोई कंकर॥

४६-विषयाशक्ति में प्रेमभक्ती

एक राजा को गाना सुनने का बड़ा ही शौक था। जो कोई उनके पास आता या जिसे वह सुनता कि अमुक मनुष्य गाना गाता है तो उसे बुलाकर गाना सुनता था। एक बार एक चमार को बुला के कहा—"अरे झुन्नैया, कुछ गाना तो सुना?" चमार बोला— 'अरे सरकार, मैं गावबु बावबु का जानौं, मैं और जो सरकार का हुकुम होय सो गिजिमिति बनाय लावौं। सरकार मोहि का नाईं गाय आवति है।" राजा ने कहा– 'अबे गा, थोड़ा ही गाना।" चमार ने कहा—"महाराज मैं नाईं जानत हौं।" राजा ने कहा—"अबे साले कहना नहीं मानता? गा, गा।' चमार ने कहा—"गरीबपरवर, मैं नाईं जानत हौं।" राजा ने कहा—"अबे साले गावेगा या पिटेगा?" चमार गाता है— मोरे मालिक मथुरा गावानि हैं। मोर मालिक मथुरा गावानि है

इतने में उस चमार की स्त्री पहुची और वह भी गाकर अपने पति को समझाने लगी कि—

मनमा है चाँदि पिटावन को। मनमा है चाँदि पिटावन को॥

यह सुन चमार ने उत्तर दिया कि—

धौ ससुरा तो समझत नाहीं, तुइ ससुरी समझावति है।
मोय मारि मारि ससुर गवावति है॥

राजा गाना सुन बड़े प्रसन्न हुए और दोनों को इनाम दे कर विदा किया।

४७-जिन्हें मौं हना सिखाओ वही काटने दौड़ते हैं

एक गड़रिया किसी भारी अपराध में फंस गया था जिस में जज साहब उसे फांसी देनेवाले थे। गडेरिये ने व्याकुल हो एक वकील साहब के पास जा अपना सारा वृत्तान्त कह सुनाया। वकील साहब ने कहा—"अगर हम तुझे फांसी से बचा देंगे तो एक लाख रुपया लेंगे।" गडेरिये ने कहा—"आप जो चाहें वह ले लें पर मेरी जान बचाइये। जान के आगे एक लाख क्या चीज है। आप एक हो लाख ले लें, पर अब की बार बचा दीजिये।" वकील साहब ने कहा—"जब जब जज साहब तुझसे सवाल करें तब तब सिवाय 'में में में' के और कुछ न कहना।" अतः दूसरे दिन जब गडेरिये का अभियोग प्रविष्ट हुआ और जज साहब ने कहा—"क्यों रे गडेरिये, तूने अमुक अपराध किया?" गडेरिये ने जवाब दिया 'में'। जज साहब ने कहा—"अबे में करता है या जो हम पूछते हैं, वह बतलाता है। बोल तूने अपराध किया?" गडेरिये ने फिर भी कहा—'में'। जज साहब ने कहा—"वकील

साहब, क्या यह पागल है?" वकील साहब ने कहा—"हुजूर बिलकुल पागल मालूम देता है।' जज साहब ने गडेरिये से कहा—'अबे क्या तू पागल है?' गडेरिये ने फिर कहा—'मैं'। जज साहब ने कहा—'निकालो इसको यह पागल है।' गड़ेरिया प्रसन्न हो कचेहरी से निकल आया और वकील साहब ने भी प्रसन्न हो कचेहरी से निकल गडेरिये से कहा कि—लीजिये, अब तो तुम्हारी जान बच गई। अब मेहनताना दीजिये।' गडेरिये ने कहा—'मैं'। वकील साहब ने कहा—'अरे भाई, हम से भी मैं मैं, अरे ऐसा क्यों करते हो?' गड़ेरिये ने फिर कहा 'मैं' पुन वकील साहब ने बहुत कुछ कहा तो गडेरिये ने उत्तर दिया—'वकील साहब, क्या आप पागल हुए हैं? भला जिस 'मैं' ने मुझे फांसी से बचाया क्या वह मुझे एक लाख रुपये से न बचायेगी? इस लिए जाइये, आप अपना काम कीजिये, मेहनताने का ख्याल छोड दीजिये।'

उपाध्याये नटे धूर्ते कुट्टिन्याञ्च बहुश्रुते।
एषु माया न कर्त्तव्या म यातैरेव निर्मिता॥

४८--सत्य वचन महाराज

एक पण्डित जी सब को कथा सुनाया करते थे, परन्तु लोग जो कुछ पण्डित जी कहा करते थे हर बात में 'सत्य वचन महाराज' कह दिया करते थे। एक दिन पण्डित जी ने सोचा कि ये सब—'सत्य वचन महाराज' ही कह दिया करते हैं या कुछ संभव असभव का भी ख्याल करते हैं? यह सोच पण्डित जी बोले—'जो है सो एक समय के बीच में एक पर्वत में छिद्र होने से सहस्त्रों मक्खियां निकलती भईं।' लोगों ने कहा—'सत्य वचन महाराज।' पण्डित जी पुन बोले कि—'वह मक्खी जो हैं सो वहां से निकल करिके एक वैश्य की

दुकान पर एक एक गुड की भेली पर बैठ जाती भई।' लोगो ने कहा—'सत्य वचन महाराज।' पण्डित जी पुन बोले कि—'वह मक्खिया एक २ गुड की भेली को जिस २ पर बैठ रही थी ले ले कर उड जाती भई, श्री गोविन्दाय नमोनम' लोगो ने कहा—'सत्यवचन महाराज!' बस पण्डित जी ने यह सुन कर समझ लिया कि ये सब बुद्धि से शून्य निरे बुद्ध हैं।

यत्नैव वक्तव्य यथोक्त सफल भवेत्।
स्थायी भवति चात्यन्त राग शुक्लपटे यथा॥

४९--असंभव का संभव कर दिखाना

एक बुड्ढे काश्तकार ने जो अपने घर का अकेला ही था और घर में उसके एक घोडा और कुछ असबाब था अपना असबाब कोठरी में बन्द करके तीर्थ यात्रा करने का विचार किया और अपना घोड़ा एक वैश्य को सौंप कर तीर्थ यात्रा को चला गया। यहा वैश्य ने काश्तकार का घोडा बेंच रुपया अण्टी में किया। जब पान्च छै मास के बाद काश्तकार लौटा तो उसने सेठजी के पास जाकर कहा—'सेठजी हमारा घोडा कहा है? लाइये।" सेठजी ने कहा—"आपका घोडा मर गया काश्तकार चुप रह गया। परन्तु कुछ काल के बाद काश्तकार को पता लगा कि उसका घोडा मरा नहीं बल्कि साहूकारने बेंच लिया है, अतः काश्तकार ने पुन सेठ से कहा—"दिखाओ, हमारा घोडा कहां पड़ा है?" सेठ जी काश्तकार को ले कर बन में गये, वहां एक बैल मरा पडा था, उसे दिखला कर बोले—"देखिये, आप का घोडा यह पडा है।' इसने कहा कि— 'घोडे के सींग नहीं होते, इस के तो सींग हैं। घोडे के दांत तो दोनों ओर होते हैं, पर इसके तो एक ही ओर हैं।" सेठ जी ने कहा कि "यहां तो इसे बीमारी हो गई कि घोडे से बैल हो गया।"

असमर्थ हयगृहस्य जन्म तथापि गतो लुलुमे शृगाय।
प्राया समापन्न विपत्तिकाले धियापि पुंसां मलिनीभवति ॥

५०—बाप दादे से चली आती है

एक साहूकार का लडका खेलते खेलते एक कुए में गिर पडा। साहूकार लडके के कुए में गिरने की खबर पाकर अपने घर से एक रस्सा लेकर दौडा और कुए में रस्सा लटका कर बेटे से कहा—'बेटा, इस रस्से को अपनी कमर में मजबूत बांध दे।' बेटे ने रस्सा बांध दिया और बाप ने उसे कुए से खीच लिया। कुछ दिन के पश्चात् एक मनुष्य एक वृक्ष पर चढ गया परन्तु चढने को तो चढ गया पर उतरना उसे कठिन हो गया। अतः उसने हल्ला मचा लोगों को बुला कहा—'भाइयो मैं इस वृक्ष पर चढने को तो चढ गया हू पर उतरते नही बनता, उससे आप लोग कृपा करके कोई ऐसी युक्ति सोचें कि मुझे कष्ट न हो और वृक्ष से उतर आऊ।' लोगो ने अपनी अपनी युक्तियां बतलाई परन्तु वह युक्तियां उस मनुष्य के जो कि वृक्ष पर चढा था समझ में न आई, लेकिन वह साहूकार का लडका, जिसके बाप ने उसे रस्सा बांध कुए से निकाला था वहा पहुच गया और इसने कहा कि— एक लम्बा सन का रस्सा घर से मंगाइये मैं इसको अभी बिना परिश्रम के उतारे लेता हू।' लोगों ने इसे रस्सा मंगवा दिया। इस साहूकार के लडके ने रस्सा हाथ में ले ऊपर को फेंक उस पुरुष से कहा—'इसे पकड कर तुम अपनी कमर में बांधो।' वृक्षस्थ पुरुष ने रस्से को कमर में बाध लिया। अब तो साहूकार का बेटा दोनो हाथों से उस रस्से को पकड नीचे को खींचने लगा। वृक्षस्थ पुरुष ने कहा— 'यह क्या करते हो, मैं गिरा।' और उसने दोनो हाथों से

ऊपर न च की डाली पकड ली । और "महाराज मैं गिरा महाराज मैं गिरा" यह कर वह चिल्लाने लगा, परन्तु साहूकार के बेटे ने कहा कि—"आप निश्चय रखिये गिरोगे नहीं रस्से में बांध कर खींचना तो हमारे बाप दादे से चला आता है।" ऐसा कह वृक्ष से खींच लिया और वृक्षस्थ पुरुष नीचे गिरते ही मर गया । लोगों ने कहा—"आप तो कहते थे कि यह तो बाप दादे से चली आती है, यह क्या हुआ ? यह क्यों मर गया ?" कहा—'अब कलयुग आ गया है।"

यस्यास्ति सर्वत्र गतिः स कस्मात् स्वदेशरागेण हि याति नाशम् ।
तातस्य कूपोऽयमिति ब्रुवाणाः क्षारं जलं कापुरुषाः पिबन्ति ॥

५१—कलियुग

एक वैद्य जी बड़े ही योग्य और अपने ग्राम के चारों ओर प्रसिद्ध थे । वैद्यजी के एक पुत्र अत्यन्त ही रूपवान् और बड़ा ही चञ्चल था । वैद्यजी ने अपने पुत्र के पढ़ाने का बहुत कुछ प्रयत्न किया परन्तु उसने एक अक्षर भी न सीखा। कुछ काल के पश्चात् वैद्यराज का देवलोक हो गया, जिससे कि सारा व्यापार बन्द हो गया । अब तो वैद्यराज के पुत्र सोचने लगे कि इस प्रकार बैठे बैठे कैसे काम चलेगा, दादाजी वाला झोला अर्थात् औषधियों की पोटरी मौजूद ही है और गद्दी भी दादा जी वाली मौजूद और हाथ हमारे मौजूद फिर वैद्यक क्यों बन्द कर दी जाय ? यह विचार लोगों को औषधी देने लगे, परन्तु फल उल्टा होने लगा जहां वैद्यराज के समय में लोग औषधि से अच्छे हुआ करते थे, वहां इनकी औषधि से मरने लगे और यह होना ही था । तब तो लोगों ने वैद्यराज के पुत्र से कहा—"महाराज, आपके पिता के समय में तो लोग अच्छे

हो जाते थे, पर जब से आप औषधि करने लगे तब से जिस की आप औषधि करते हैं वही मर जाता है, यह क्या बात है वैद्यराज के पुत्र ने उत्तर दिया कि— 'भाई, झोला वही, नाड़ी वही लेकिन अब कलियुग है इस लिये लोग अधिक मरते हैं क्योंकि 'न काल योगितो व्यापिनो नित्यस्य सर्वसम्बन्धात्। परन्तु याद रहे कि काल सुख दुख का कारण है यदि काल कारण है तो उस काल में सब की एक दशा होनी चाहिये पर यह नहीं होती इससे निश्चय है कि काल सुख दुख का कारण नहीं

कलियुग नहीं करयुग है ये करके तजरुबा देखलो।
क्या खूब सौदा हो रहा, इस हाथ दो उस हाथ लो॥

५२—गुरु-सेवा

एक मौलवी साहब एक सेठ के लड़के को पढ़ाया करते थे। मौलवी साहब बच्चे से कहा करते थे-' अबे तू कभी कुछ लाता नहीं।" बच्चा उत्तर देता था कि—"मौल्वी साहब, लाऊँगा।" एक दिन उस सेठ के लड़के के यहाँ खीर बनाई गई और अचानक एक कुत्ते ने आकर वह खीर जुठार डाली. अत. जब सेठ जी का लड़का मौलवी साहब के यहाँ से पढ़ कर आया तो उस लड़के की माता सेठानी जी ने कहा— 'आज चाहो तो अपने मौलवी साहब को खीर दे आओ।" बच्चे ने कहा—'लाओ बहुत ही अच्छा है, मौलवी साहब को खीर दे आवें।" माता ने एक कूँडे में खीर परोस कर दे दी। बच्चा खीर लेकर मौलवी साहब के यहा पहुचा। मौलवी साहब खीर देख कर बहुत ही प्रसन्न हो गये और खाने के समय बोले कि— "बच्चा, क्या तुम्हारी माँ मेरे ऊपर आशिक हो गई जो ऐसी बढ़िया खीर भेजी?" बच्चा बोला कि "नहीं, यह बात नहीं बल्कि आज हमारे यहा यह खीर पकी थी परन्तु मेरी माँ कुछ

काम करने लगी इतने में कुत्ते ने आकर इस खीर को जुठार दिया, इसलिए मा ने कहा कि आज यह खीर मौलवी साहब को दे आओ।" यह सुन कर मौलवी साहब ने क्रोध में आ बच्चे का खीर वाला कुंडा इतने जोर से फेंका कि कूँडा फूट गया, तो बच्चा जोर जोर से रोने लगा। तब तो मौलवी साहब ने कहा—"अबे क्यों रोता है?" बच्चे ने कहा—"मेरी मा मारेगी।" मौलवी साहब ने कहा—'बच्चे हम तुझे कूँडा मगवा देंगे।' बच्चे ने कहा—"आप क्या मगवा देंगे हमारा भाई इसी में रोज पाखाने जाया करता था।" यह सुन मौलवी साहब बहुत शरमा गये।

गुरुशुश्रूषया त्वेव शपेया न तु मृदू कथा।

५३–टेढी खीर

विना जाने हितकारी वस्तु को छोड देना।

अहित हित विचार शून्य बुद्धेर्श्रुति समयैर्बहुभिस्तिरस्कृत य।
उदर भरण मात्र केवलेच्छो पुरुष पशु'श्च पशुश्च को विशेष॥

एक स्थान में एक अन्धा बैठा हुआ था। लोग उसके सामने खीर की बहुत कुछ प्रशसा किया करते थे। अन्धे ने कहा—"भाई खीर कैसी हुआ करती है?" लोगो ने उत्तर दिया कि—"सफेद सफेद।" अन्धे ने कहा—'सफेद सफेद कैसी?' लोगो ने कहा—"जैसे बगुला।" पुन अन्धे ने कहा—"बगुला कैसा होता है?" लोगों ने जिस प्रकार बगुले की टेढी गर्दन होती है वैसा ही हाथ कर दिया। पुन अन्धे ने कहा—"देखें कैसी खीर होती है।" जब अन्धे ने उसको टटोला तो कहा—'यह तो टेढी खीर है, यह हम कैसे खा सकेंगे? यह तो गले में हिलगेगी।"

५४—शेखचिल्ली

कर्त्तव्यरहित हो व्यर्थ मनोरथ शक्तिरहित हो।

एक शेखचिल्ली साहब एक स्टेशन पर रहा करते थे। एक दिन एक मियांजी रेल से एक राब की गगरी लेकर उतरे और शेखचिल्ली से कहा—"अबे, इस घडे को शहर ले चलेगा?" शेखचिल्ली ने कहा—'हां हुजूर।' मियां ने कहा—'दो पैसे मिलेंगे।' शेखचिल्ली ने कहा—'दोई देना।' मियां ने शेखचिल्ली के सिर पर घडा रखवा आगे आगे आप और पीछे पीछे शेखचिल्ली चले। अब शेखचिल्ली की मन्सूबेबाजी देखिये। शेखचिल्ली सोचता है कि इस घडे को शहर में रखआई मुझे दो पैसे मिलेंगे उन दो पैसों की एक मुर्गी लूंगा और जब मुर्गी के अण्डे बच्चे होंगे तो उन्हें बेच कर एक बकरी लूंगा और जब बकरी के अण्डे बच्चे होंगे तो उन्हें बेच कर एक गौ लूंगा, और जब गौ के अण्डे बच्चे होंगे तो उन्हें बेच कर एक भैंस लूंगा और जब भैंस के अण्डे बच्चे होंगे तो उन्हें बेच कर ब्याह करूंगा, फिर मेरे भी बाल बच्चे होंगे और वे बच्चे जब मुझ से कहेंगे कि दादा हमको फलां चीज ले दो तो हम कहेंगे—'धा बरबाद।' इस शब्द के जोर से कहने में सिर से घडा गिर गया और गिर कर फूट गया। यह देख मियांजी बोले—'अबे तूने यह क्या किया घडा क्यों फोड दिया?' शेखचिल्ली ने कहा है—अजी मियां, आपको तो घडे की पडी है, यहां तो कुनबा किया घर गया।'

५५—मूर्खता की छड़ी

एक बार एक राजा साहब के यहां एक महात्मा जी पहुंचे। राजा साहब ने उनकी बड़ी सेवा की और जब महात्मा जी चलने लगे तो राजा साहब ने महात्माजी को एक छड़ी देकर कहा—

महाराज, आप भ्रमण किया करते हैं, दुनिया में जो सब से अधिक मूर्ख आपको मिले, उसे ही यह मेरी छडी दे देना।' महात्माजी छडी लेकर चले गये। बहुत काल के पश्चात् जब राजा के मरण का समय आया तो वह महात्माजी राजा के यहां फिर आये और राजा साहब से पूछा कि- राजा साहब यह राज्य पाट क्या आपके साथ जायगा?' राजा ने कहा— 'नहीं।' महात्मा ने कहा—'यह महल अटारी आपके साथ जायेंगी?' राजा ने कहा—'नहीं।' महात्मा ने कहा—'धन सम्पत्ति, मणि मोती आपके साथ जायेंगे?' राजा ने कहा— 'नहीं।' महात्मा ने कहा—'यह फौज फांटा हाथी घोडे क्या आपके साथ जायेंगे।' राजा ने कहा— नहीं।' महात्मा ने कहा—'यह स्त्री भाई बन्धु क्या आपके साथ जायेंगे?' राजा ने कहा—'नहीं।' महात्मा ने कहा—'यह तेरा शरीर तेरे साथ जायगा?' राजा ने कहा-'नहीं।' महात्मा ने कहा- फिर तेरे साथ भी कोई जानेवाला है? क्या किसी साथी को तूने संसार से लिया है?' राजा ने कहा-'नहीं।' तब तो महात्माजी ने कहा- कि-'राजा साहब, यह अपनी छडी लीजिये, आप से अधिक मूर्ख और हमें नहीं मिल सकता।' किसी कवि का वाक्य है—

धनानि भूमौ पशवश्च गोष्ठे नारी गृहे बान्धवाः श्मशाने।
देहश्चितायां परलोक मार्गे धर्मानुगो गच्छति जीव एकः ॥

५६--ईश्वर विश्वासी पाप न करेगा

एक गुरु के पास दो मनुष्य चेला होने को आये। गुरु जी ने कहा—"हम तुम दोनो को एक एक खिलौना देते हैं, सो तुम खिलौने को लेकर ऐसी जगह से जहां कोई न हो तोड लाओ, तब हम तुमको अपना चेला बना लेवेंगे।" दोनो अपना

अपना खिलौना लेकर चले। एक चेले ने तो गुरुजी के मकान के पीछे जा चारों तरफ चकमक देखा कि अब कोई नहीं है और खिलौना तोड कर लाकर रख दिया और दूसरे ने खिलौने को लेकर सारा ससार ऊँची से ऊँची पहाड की चोटियाँ और गहरी से गहरी समुद्र की सतह और एकान्त से एकान्त अँधेरी कोठरिया तथा बड़े बड़े भयानक वन गोंद डाले परन्तु उसे कहीं ऐसा स्थान न मिला जहा खिलौना तोड़ता अत. दूसरे ने खिलौना वैसा ही लाकर रख दिया। गुरु ने दोनों से प्रश्न किया कि—"क्योंजी, आपको कहा ऐसा स्थान मिला जहा से खिलौना तोड लाये?" पहिले ने कहा—"गुरुजी मैं तो आपके मकान के पीछे गया, वहां कोई न था वस मैंने खिलौना तोड आपके आगे लाकर रख दिया।" दूसरे से कहा—"क्यों भाई तुम्हें कोई ऐसा स्थान नही मिला जहा से खिलौना तोड़ लाते? तुमने क्यों लाकर वैसा ही रख दिया" इस दूसरे ने उत्तर दिया कि—"महाराज, मैंने ऊंचे से ऊंचे पहाड़ों की चोटी गहरी से गहरी समुद्र की सतह, अंधेरी से अधेरी एकान्त कोठरियें और बडे बडे भयानक जंगल घूमे परन्तु मुझे कही ऐसा स्थान न मिला जहा दूसरा न होता। महाराज—

एको देव सर्वभूतेषु गूढ सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।
कर्माध्यक्ष सर्वभूताधिवास. साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च॥

एकोऽहमस्मीत्यात्मान यत्त्वं कल्याण मन्यसे।
नित्य हृदिवसत्येष पुण्य पापेक्षित मुनि.॥

इस लिये नहीं तोडा।" महात्मा ने इसे ही अपना चेला बनाया और दूसरे से कहा—"तू अभी इस योग्य नहीं।"

५७—व्यर्थ विवाद

एक ससुर दामाद दोनों किसी खेत में हल चला रहे थे। ससुर ने कहा—'अमुक ग्राम यहां से ४ कोस है।' दामाद ने कहा—'तीन कोस है'।' ससुर ने कहा—'नहीं, चार कोस। दामाद ने कहा—'नहीं, तीन कोस।' बस दोनों में युद्धकाड प्रारम्भ हो गया। युद्ध हो ही रहा था कि इतने में उसकी लड़की जो अपने दामाद से लड़ रहा था आई और बोली—'पिताजी, क्या है?' बाप बोला—'बेटी, अमुक ग्राम यहां से चार कोस है और यह कहता है तीन ही कोस है, एक कोस हमारा मुफ्त ही में लिये जाता है।' बेटी ने कहा—'पिताजी, आपने तो हमें हमारे ब्याह में बड़ी बड़ी चीजें दीं, अब क्या एक कोस भी न दोगे?' पिता बोला—'इस तरह एक कोस क्या चाहे चारों ले ले, पर यह तो मुफ्त में ही लिये जाता था।'

५८—व्यर्थ विवाद

एक बार दो काश्तकार अफीमचियों ने सलाह की कि यारो इस साल हम तुम दोनों साझे साझे ईख बोवेंगे। दोनों ने कहा—'बहुत अच्छा। उसमें से एक बोला कि— यार हम तो एक ईख उसमें से नित्य चूसा करेंगे।' दूसरे ने कहा—'यार हम दो नित्य चूसा करेंगे।' पहिले ने कहा—'हम तीन चूसेंगे।' दूसरे ने कहा-तो हम चार चूसेंगे।' पहिले ने कहा-'तो हम पांच रोज चूसेंगे।' उसने कहा-'हम ६ रोज।' उस ने कहा- साले, हम ५ रोज चूसेंगे, तू ६ क्यों चूसेगा?' उस ने कहा- साले, तूने क्यों कहा कि हम ५ रोज चूसेंगे?' इस प्रकार दोनों में खूब ही घोर युद्ध, खून खच्चर हुआ। अब अदालत में मुकदमा गया तो मैजिस्ट्रेट ने कहा—'तुम दोनों ने

हमारी जमीन में ईख बोकर खूब ही चूसीं, इस लिए बीस बीस रुपये लगान के दोनों दाखिल करो—

> शतं दद्यान्न विवदेत विज्ञस्य सम्मतम्।
> विना हेतुमहिद्वन्द्वमेतन्मूर्खस्य लक्षणम्॥

४९—मनुष्य पंच कैसे बन सकता है?

एक महानन्द नामक पुरुष कुछ थोड़ा ही पढ़ा लिखा और इतना दीन था कि उसके निज का मकान भी न था और एक शिवाले की कोठरी में किसी राज्य में जैपुर की ओर से रहा करता था। एक दिन उसके ग्राम में दो मनुष्यों में कुछ झगड़ा होरहा था। महानन्द बीच में कुछ बोल उठा। तब तो उन दोनों झगड़ालुओं ने महानन्द से कहा कि—"तू यहां का पंच है जो बीच में बोलता है?" यह सुन कर महानन्द ने सोचा कि पंच और बड़ी अच्छी चीज है बस यही से उस के हृदय में पञ्च बनने का ख्याल हुआ और यहां तक कि पञ्च बनने के लिए उसने खाना पीना सोना सब कुछ छोड़ दिया और उदासीन-वृत्ति से वह निशि दिन पञ्च बनने के उपाय सोचा करता था। महानन्द की स्त्री ने इस की यह दशा देख कहा कि—'स्वामिन्, आप भोजन न करने, जल न पीने या न सोने या दिन रात शोक में रहने से थोड़े ही पंच बन जायगे, इस लिए आप अच्छी तरह भोजन कीजिये और प्रसन्न रहते हुए आपको जो उपाय मैं बतलाऊं वह कीजिये, तब आप पञ्च बनेंगे।' महानंद तो इस फिकर में था ही इस लिए कहा—प्रिये, बतलाइये वह क्या उपाय है? स्त्री ने कहा—'आप अपने निज के कामों अर्थात् भोजन वस्त्र के उद्योग के इतर जितना समय आपको मिले, उस समय में आप बिना किसी अपने स्वार्थ के केवल पर-

ार्थ और संसार के उपकार के लिए सब का हित किया कीजिये और वह बचा हुआ समय ग्राम के लोगों के कार्य में व्यय कीजिये। बस, कुछ दिनों में आप देव बन जायगे।' हानन्द ने यह व्रत धारण कर लिया। भोजन वस्त्र के उद्योग से इतर जितना समय बचता उस में महानन्द गाँव में जिस किसी के यहां लडका लडकी का विवाह होता जाकर बिना कहे उनके काम करता। जो कुछ कमाने में द्रव्य बचता भूखों को दिया करता। किसी को बीमार सुनता तो उस के पास जा बैठता। उसके काम करता। कोई मर जाय तो उस के साथ जाता, आदि आदि परहित किया करता था। एक दिन ऐसा समय आया कि उसी ग्राम में एक सेठानी का बेटा था। अपने घर की करोडपती थी और उसके एक ही बेटा था, बहुत ही बीमार होगया। इस सेठानी के पुत्र के पास जितने पुरोहितादि रहते थे उन सब की यही नियत थी कि यह सेठानी का पुत्र मर जाय तो द्रव्य सब हमी लोगों को मिले। यह समाचार किसी प्रकार सेठानी को खबर हो गया। उस एक बुढिया से यह सब वृत्तान्त कहा। बुढिया ने कहा— इस ग्राम में एक महानन्द नामक पुरुष रहता है जो बड़ा ही परोपकारी है, यदि उसे मालूम होजाय तो वह आपके लडके के पास रहेगा और बड़ी अच्छी प्रकार औषधि आदि का प्रबन्ध करेगा।' सेठानी ने उसी बुढिया के द्वारा महानन्द को खबर पहुंचा दी। महानन्द आकर उस हर प्रकार से उस सेठानी के पुत्र की औषधि आदि की सेवा करने लगा। तब सेठानी ने सब पुरोहितादि सब को निकाल बाहर किया। कुछ दिन के बाद सेठानी का पुत्र अच्छा हो गया। तब तो उस के हृदय में यह ख्याल पैदा हुआ कि इसने हमारे पुत्र की बहुत कुछ सेवा की है, अब इसे कुछ देना चाहिये। यह सोच कर १० हजार रुपये महानन्द को देती रही, परन्तु महानन्द ने उसने बहुत

कुछ प्रार्थना करने पर भी न लिया। अब उसके पुत्र के हृदय में यह भाव उत्पन्न हुआ कि यदि महानन्द रुपया नहीं लेता, तो इस के उपकार का कुछ प्रत्युपकार करना चाहिये। यह इस उद्योग ही में था कि उस को मालूम हुआ कि महानन्द के हृदय में पञ्च बनने का ख़याल है। बस यह खत्रानी के करोड़ पती पुत्र ने अपने मन में यह ठहरा लिया कि मैं उसे पंच बनाऊँगा। खत्रानी का पुत्र राजा की सभा का मेम्बर था। अतएव अब जितने भी मामले इस खत्री के पुत्र के यहा आते, सब में महानन्द को मध्यस्थ किया करता, इस प्रकार महानन्द की तमाम बस्ती में शोहरत हो गई। अब की बार जब राज्य में पंचो का चुनाव हुआ तो महानन्द का नाम आया, परन्तु कुछ लोगो ने महानन्द के पंच बनने में विरोध किया, इस कारण वह पंच न बन सका। तब लोगों ने महानन्दजी से कहा कि 'अब आप पच बनने का उद्योग छोड दें, देखो आया अबाया नाम जब आप नही चुने गये,तो अब आप पच नहीं बन सकते।' महानन्द ने कहा—'जहा हमें कोई पूछता ही न था वहा हमारा नाम तो आया और इस साल यदि नाम आया तो आगे पंच भी बन जाऊँगा।' महानन्द उसी भाति अपने काम करता रहा। अगले वर्ष लोगों ने उसको पंच चुन लिया। परन्तु कुछ लोगों ने राजा के पास जाकर शिकायत पर शिकायत की कि 'महाराज, पंच की बडी जिम्मेदारी है, और लोगो ने एक महानन्द को, जिसके घर बार कुछ नहीं और जो महा कंगाल न कुछ पढा न लिखा, पच चुना है।' राजा यह सुन कर हैरान हुआ कि जब उसमें कोई बात नहीं फिर लोगोंने उसे पच क्यों चुना? अत. राजाने ग्रामके लोगो को बुलाकर पूछा कि 'जब महानन्द में न विद्या है, न धन है, न बल है फिर आप लोगों ने उसे पंच क्यों चुना है?' लोगो ने राजा को उत्तर दिया कि—'विद्या तो हम तब देखते

जब हमें उस से पढ़ना होता और बल हम तब देखते जब हमें उससे युद्ध करना होता और धन हम तब देखते जब हमें उस से कर्ज लेना होता, हमें तो ऐसा पंच चाहिये जिसमें प्रजा का हित हो अन्याय या जब्र किसी पर न हो सो ये गुण महानन्द के बराबर ग्राम भर में किसी में नही।" राजा साहब को महानन्द के गुण सुन के बड़ा ही प्रेम हुआ। राजा ने महानन्द को बुला बड़ी बड़ी सेवा की और १० मौजे जागीर काट दिये। पर महानन्द जी जैसे पहले अपनी टूटी फूटी झोपड़ी में रहते थे और ५) रु० माहवारी मे अपना निर्वाह करते थे उसी प्रकार करते रहे और जागीरवाले १० गावों में जो मुनाफा होता, उसे यह कह कर कि यह जागीर मुझे प्रजा-हित करने से मिली है, अत यह मेरी नहीं, किन्तु प्रजा हित की है प्रजा हित के कामो में लगा देते। महानन्द का ऐसा बर्ताव देख अगले वर्ष में सब लोगो तथा राजा ने महानद जी को पच क्या बल्कि सरपंच नियत किया।

पंचभिः सह गन्तव्य स्थातव्य पंचभि सह।
पंचभि सह वक्तव्य न विरोधे पंचभि सह ॥

६०—स्वार्थ और परसंताप

एक वैश्य जिनका नाम लाला स्वार्थीमल था, फसाद नामक ग्राम मे रहा करते थे। लाला स्वार्थीमल 'यथा नामा तथा गुणा' ही थे। इनकी एक कपडे की दूकान बीच बाजार में थी। इनका सदैव यही ख्याल रहा करता था कि यदि किसी का भला हो तो मेरा नाम हो और मेरा कपडा बिके। इनका काम यह था कि प्रात काल से जाकर दूकान पर विराज जाते और हाथ में एक माला ले 'राधेश्याम राधेश्याम' जपा करते

थे। जब देखते कि ग्राहक लोग जा रहे हैं तो बड़े उच्च स्वर से 'राधेश्याम' का महामंत्र उच्चारण करते जिससे साधारण ही ग्राहकों की दृष्टि लाला स्वार्थीमल की ओर जाती थी। जिस समय ग्राहकों की दृष्टि इनकी ओर पड़ती तो ये हाथ उठा अँगुलियों के सकेत से ग्राहकों को बुला लिया करते थे। जब ग्राहक पास आते तो ये पूछा करते कि—'कहाँ चले?' जो वे उत्तर देते—'कपड़ा लेने।' तब स्वार्थीमल कहते कि—'लीजिये यह तो आपके घर की दूकान है और बाजार भर में तुम्हें ऐसा सस्ता कपड़ा नहीं मिल सकता।' इस प्रकार से ग्राहकों को मूड़ते और जो ग्राहक दूसरी दूकानों से कपड़ा लेकर इनकी दूकान के सामने से निकला करते तो भी यह अपने महामंत्र 'राधेश्याम' को उच्च स्वर से उच्चारण करते। जब उनकी दृष्टि इनकी ओर पड़ती तो सकेत से ग्राहकों को बुला पूछते थे—'यह कपड़ा कितने गज़ लाये?' जब ग्राहक उत्तर देते कि इतने गज। तब लाला स्वार्थीमल बुरा मुँह बना चिचकाते थे। तब ग्राहक प्रश्न करते कि—'लालाजी, क्या है?' तो स्वार्थीमल उत्तर देते कि—भाई, तुम्हारी रुचि कि तुम यह कपड़ा चार आने गज ले आये। हमारे यहाँ से आप यह ≋)॥ में ले जाइये।' कपड़ा चाहे चार ही आने गज़ का हो, पर लाला स्वार्थीमल की यह युक्ति थी कि एक आध बार घाटा खाकर भी ग्राहक अपना बना लिया करते थे। इस प्रकार लाला स्वार्थीमल बड़े धनाढ्य हो गये। पर आप लोगों को याद रहे कि धर्मशास्त्र में लिखा है—

अन्यायोपार्जितं द्रव्यं दश वर्षाणि तिष्ठति।
प्राप्ते तु षोडशे वर्षे समूलं च विनश्यति॥

अधर्म से जोड़ा हुआ धन कभी ठहरता नहीं। 'पापी की जी कभी किसी को नहीं पचती है। अतः लाला स्वार्थीमल

के यहाँ कुछ तो चोरी हुई, कुछ राजाने डाँड लिया, कुछ पुलिस ने हाथ साफ किये, रहा सहाया अग्नि ने स्वाहा कर दिया। अन्त में यह दशा हुई कि लाला स्वार्थीमल दो दो पैसे की मजदूरी करने लगे। परन्तु लाला स्वार्थीमलजी "राधाकृष्ण के उपासक तो थे ही, एक बार राधाकृष्णजी प्रसन्न हो कर बोले कि—'लाला स्वार्थीमल, मांगो तुम, जो कुछ तुम्हारी इच्छा हो।' लाला स्वार्थीमल मांगने वाले तो यह थे कि—'महाराज, हम पड़ोसियों से सदैव दूने रहें।" पर मांग बैठे यह कि "हमसे पड़ोसी सदैव दूने रहें।" राधाकृष्ण ने स्वार्थीमलजी को एक घन्टा दे कर कहा कि—"जब तुम्हें जिस चीज की आवश्यकता पड़े यह घन्टा आपको सम्पूर्ण पदार्थ देगा और जितनी चीज तुम्हें देगा उस से दूनी पड़ोसियों को।" जब लाला स्वार्थीमल घन्टा ले रास्ते में आये तो ख्याल हुआ—'हाय! हम राधेश्याम से क्या माँग आये कि पड़ोसी हमसे सदैव दूने रहें और जो कुछ हुआ। लेकिन जब हम घंटा ही न बजायेंगे तो पड़ोसी कैसे दूने होंगे। चाहे हम जो दो दो पैसे की मजदूरी करते थे वही करते रहें पर पड़ोसी कैसे दूने हो जाय।' यह विचार घन्टा बाँध के कोठरी में बन्द कर दिया और अपनी स्त्री से कहा कि—"देख हम तो परदेश नौकरी के लिये जाते हैं पर तू कभी इस घंटे को न खोलना।" जब लाला स्वार्थीमल परदेश चले गये और लालाजी के यहा एक दिन खाने को कुछ न रहा स्त्री भी इस भांति दो मत हुई तो उसने सोचा कि और तो मेरे यहा कुछ है ही नहीं हो न हो आज जो यह घन्टा पड़ा हुआ है इसे ही बेंच लावें तो दो चार आने पैसे मिल जायेंगे जिससे एक आध दिन का निर्वाह होगा, फिर देखा जायगा। इस ख्याल को लेकर स्त्री ने घंटा खोला तो घंटा बज गया, बस घंटे के

थे। जब देखते कि ग्राहक लोग जा रहे हैं तो बड़े उच्च स्वर से 'राधेश्याम' का महामन्त्र उच्चारण करते जिससे साधारण ही ग्राहकों की दृष्टि लाला स्वार्थीमल की ओर जाती थी। जिस समय ग्राहकों की दृष्टि इनकी ओर पड़ती तो थे हाथ उठा अँगुलियों के सकेत से ग्राहकों को बुला लिया करते थे। जब ग्राहक पास आते तो ये पूछा करते कि—'कहां चले?' जो वे उत्तर देते—कपड़ा लेने।' तब स्वार्थीमल कहते कि—'लीजिये यह तो आपके घर की दूकान है और बाजार भर में तुम्हें ऐसा सस्ता कपड़ा नहीं मिल सकता।' इस प्रकार ये ग्राहकों को मूड़ते और जो ग्राहक दूसरी दूकानों से कपड़ा लेकर इनकी दूकान के सामने से निकला करते तो भी यह अपने महामन्त्र 'राधेश्याम' को उच्च स्वर से उच्चारण करते। जब उनकी दृष्टि इनकी ओर पड़ती तो सकेत से ग्राहकों को बुला पूछते थे—'यह कपड़ा कितने गज लाये?' जब ग्राहक उत्तर देते कि इतने गज। तब लाला स्वार्थीमल बुरा मुँह बना चिचकाते थे। तब ग्राहक प्रश्न करते कि—'लालाजी, क्या है?' तो स्वार्थीमल उत्तर देते कि—भाई, तुम्हारी रुचि कि तुम यह कपड़ा चार आने गज ले आये। हमारे यहां से आप यह ≶)॥ में ले जाइये।' कपड़ा चाहे चार ही आने गज का हो, पर लाला स्वार्थीमल की यह युक्ति थी कि एक आध चार धोखा खाकर भी ग्राहक अपना बना लिया करते थे। इस प्रकार लाला स्वार्थीमल बड़े धनाढ्य हो गये। पर आप लोगों को याद रहे कि धर्मशास्त्र में लिखा है—

अन्यायोपार्जित द्रव्य दश वर्षाणि तिष्ठति।
प्राप्तेतु षोडषे वर्षे समूल च विनश्यति ॥

अधर्म से जोड़ा हुआ धन कभी ठहरता नहीं। पापों की पूंजी कभी किसी को नहीं पचती है। अत लाला स्वार्थीम

कि यहां कुछ तो चोरी गई, कुछ राजा ने डांड लिया, कुछ पुलिस ने हाथ साफ किये, रहा सहा अग्नि ने स्वाहा कर दिया। अन्त में यह दशा हुई कि लाला स्वार्थीमल दो दो पैसे की मजूरी करने लगे। परन्तु लाला स्वार्थीमलजी "राधाकृष्ण के उपासक तो थे ही, एक बार राधाकृष्णजी प्रसन्न हो कर बोले कि—' लाला स्वार्थीमल, मांगो तुम, जो कुछ तुम्हारी इच्छा हो।" लाला स्वार्थीमल मांगने वाले तो यह थे कि—' महाराज, हम पड़ोसियों से सदैव दूने रहें।" पर मांग बैठे यह कि "हम से पड़ोसी सदैव दूने रहें।" राधाकृष्ण ने स्वार्थीमलजी को एक घन्टा दे कर कहा कि—"जब तुम्हे जिस चीज की आवश्यकता पड़े यह घन्टा आपको सम्पूर्ण पदार्थ देगा और जितनी चीज तुम्हें देगा उससे दूनी पड़ोसियों को।" जब लाला स्वार्थीमल घर के रास्ते में आये तो ख्याल हुआ—'हाय! हम राधेश्याम से क्या मांग आये कि पड़ोसी हमसे सदैव दूने रहें और जो कुछ हुआ। लेकिन जब हम घन्टा ही न बजायेंगे तो पड़ोसी कैसे दूने होंगे। चाहे हम जो दो दो पैसे की मजदूरी करते थे वही करते रहें पर पड़ोसी कैसे दूने हो जाय।" यह विचार घन्टा घाघ के कोठरी में बन्द कर दिया और अपनी स्त्री से कहा कि—"देख हम तो परदेश नौकरी के लिये जाते हैं पर तू कभी इस घंटे को न खोलना। जब लाला स्वार्थीमल परदेश चले गये और लालाजी के यहां एक दिन खाने को कुछ न रहा, स्त्री को इस भांति दो व्रत हुये तो उसने सोचा कि और तो मेरे यहां कुछ है ही नहीं हो न हो आज जो यह घंटा पड़ा हुआ है इसे ही बेंच लावें तो दो चार आने पैसे मिल जायेंगे जिससे एक आध दिन का निर्वाह होगा, फिर देखा जायगा। इस ख्याल को लेकर स्त्री ने घंटा खोला तो घंटा बज गया, बस घंटे के बजाते ही चार

आने इसे मिल गये और आठ २ आना पडोसियों को मिले। इस प्रकार जब स्त्री को दो चार दिन पैसे मिलते रहे तो उस ने समझ लिया कि यह घंटे ही में गुण है, अतः स्त्री पाँचवें दिन घंटा ले बैठी और बोली कि 'घंटेश्वर आज हम को दस ग्राम मिल जाय।" दस इसे मिले। इसने कहा-"या घंटेश्वर हमारा तिखण्डा मकान बन जाय।" इसका तिखण्डा और पडोसियों के सतखण्डे बन गये। इसने कहा-"या घंटेश्वर हमारे यहां इतनी फौज हो जाय।" जितनी इसके यहां हुई उस से दूनी पडोसियों के यहा होगई। इसने कहा-"या घंटेश्वर हमारे दर्वाजे इतने इतने घोडे हाथी हो जावें।" जितने इसके यहां हुये उसके दूने पडोसियों के यहां हुये। अब स्त्री ने सोचा कि जब घर में इतना ऐश्वर्य्य है तो मेरा पति क्यों दो दो पैसे की मजदूरी करे। अतः पति को पत्र लिखा कि-"स्वामिन आप के घर में सब कुछ मौजूद है आप नौकरी छोड चले आइये।" लाला स्वार्थीमल को पत्री पहुचते ही यह ख्याल हुआ कि जान पडता है कि इसने घन्टा बजा दिया। नहीं तो इतना ऐश्वर्य्य इतने दिन में कहां से आ गया? क्योंकि अपने घर की दशा लाला साहब भली भांति जानते थे परन्तु सोचा कि चलकर देखें क्या है। जब घर आये तो देखा कि हमारा तिखण्डा मकान बना है और पडोसियों का सतखण्डा, यह देख पत्थर में अपना सिर दे मारा और कहा "हा! हमारे देखते २ पडोसी दूने।" इस भांति अपने दस ग्राम और पडोसियों के बीस बीस देख कर फिर सिर पटकने लगे। इसी भांति हाथी घोडा फौज आदि पदार्थ पडोसियों के दूने देख स्वार्थीमल सिर पीटते रहे और स्त्री का बडा फजीता किया कि "तूने घंटा क्यों बजाया?" अन्त में अब लाला स्वार्थीमल इस विचार में पड़े कि इन पडोसियों का सत्यानाश किस प्रकार हो।

सोचते सोचते कुछ लाला स्वार्थीमल की समझ में आ गया और लाला स्वार्थीमल घंटा लेकर बैठे आग बोले कि—'या घंटेश्वर, हमारी एक आँख फूट जाय।' एक इनकी फूटी, पड़ोसियों की दोनों गई। इन्होंने कहा—'या घंटेश्वर, हमारा एक कान बहरा हो जाय।' इनका एक कान बहरा हुआ, पड़ोसियों के दोनों। इन्होंने कहा—'या घंटेश्वर, हमारी एक टाँग टूट जाय।' एक टूटी इनकी, दोनों गईं पड़ोसियों की। इन्होंने कहा—'या घंटेश्वर एक कुआ तो हमारे दरवाजे खुद जाय।' एक खुदा इनके दरवाजे, दो दो पड़ोसियों के दरवाज़े खुद गये। अब ज्यों ही प्रात काल हुआ तो लाला स्वार्थीमल एक काठ की टाँग तथा पत्थर की आँख लगवा कर चले कि पड़ोसियों की दशा तो देख आवें, कैसे साले आनन्द कर रहे थे। पड़ोसी बिचारे अन्धे, बहरे, लँगड़े घसिटते हुए जो दरवाज़े से पाखाने आदि को निकलते तो कुओं में जा धुम धुम गिरते थे। यह देख स्वार्थीमल की छाती ठंढी हुई। सच है, किसी जगह का वृत्तान्त है कि—

कस्त्वं भद्र खलेश्वरोऽहमिह किं घोरे वने स्थीयते।
शार्दूलादिभिरेव हिंस्रपशुभिः खाद्योऽहमित्याशया ॥
कस्मात् कष्टमिदं त्वया व्यवसितं मद्देहमांसाशिनः।
इत्युत्पन्नविकल्पजल्पमुखरैः तेघ्नन्तु सर्वान् इति ॥

६१—खुदगर्ज़ी से सर्वनाश

आप लोग भली भाँति जानते हैं कि परमेश्वर ने सारे ब्रह्माण्ड का नक्शा यह शरीर बना रक्खा है। अगर इस शरीर में एक अंग भी खुदगर्ज़ी करे तो शरीर भर का नाश हो जाय।

में मार्ग भूल गये। अब तो इन्हें बड़ा ही विस्मय हुआ। चारों ओर देखने लगे कि कोई मनुष्य हो तो मार्ग पूछें, पर कोई मनुष्य दृष्टि न आया तो इन्होंने सोचा कि देखें ऐसे अवसर के लिए हमारे शास्त्रों में क्या लिखा है। इन्हें याद आया कि— 'महाजनो येन गतः स पन्था' जिसमें महाजन लोग जायें वही पन्थ है। इतने में चार मनुष्य एक मुर्दा लिये हुए निकले। इन्होंने उनसे पूछा—"भाई, आप कौन लोग हैं?" उन्होंने कहा—'महाजन।' बस पण्डित लोग उन्हीं के पीछे पीछे चले और जाकर श्मशान भूमि में जहाँ वे मुर्दा ले गये थे पहुँचे। वहाँ पहुँच कर सोचने लगे कि अब हम लोगों का क्या कर्त्तव्य है? देखें ऐसे अवसर के लिए हमारे शास्त्रों में क्या लिखा है? उन्हें याद आया कि—'राजद्वारे श्मशाने च यो तिष्ठति स बान्धवः' राजा के दरवाजे और श्मशान भूमि में जो स्थित हो वह भाई है। इधर उधर देखा तो वहाँ एक गदहा चर रहा था, उसे दोनों पण्डितों ने पकड़ा और कहा कि यह अपना भाई है। फिर सोचने लगे कि अब देखें शास्त्रों में क्या लिखा है और हमारा क्या कर्त्तव्य है तो याद आया कि—'इष्टं धर्मेण योजयेत्' भाई को धर्म से लगा देना चाहिये। फिर सोचने लगे कि धर्म क्या है? तो उन्हें ख्याल आया कि— 'धर्मस्य तुरिता गतिः' धर्म की ऊँट की सी चाल होती है। दैवयोग से एक ऊँट भी वहीं चुग रहा था। बस इन दोनों ने ऊँट के गले में गधे को बाँध दिया। अब इधर तो गधा पैर फटफटा रहा था और 'हैंचों हैंचों' कर रहा था, उधर ऊँट अपनी गर्दन हिला हिला कर बलबला रहा था और ये दोनों पण्डित यह अपूर्व दृश्य अलग खड़े देख रहे थे। अन्य लोगों ने इन दोनों से पूछा— यह क्या आपने किया है?" ये बोले— भाई को धरम में लगाया है अब आप लोग पाण्डित्य देखिये।'

जिह्वायाश्छेदनं नास्ति न तालु पतनाद्भयम् ।
निरिशकेन वक्तव्यं नास्ति को न पण्डित ॥

६५—वर्तमान समय के श्रोता

एक जगह एक पण्डित कथा बाँच रहे थे बहुत से श्रोता सुन रहे थे, परन्तु उन्हीं श्रोताओं में एक लालाजी भी थे जो कौम के कायस्थ थे। पण्डितजी ने कहा कि 'मुखादग्निरजायत' ब्रह्म के मुख से आग उत्पन्न होती है। पर लालाजी ने समझा कि ब्राह्मण के मुख से आग उत्पन्न होती है। अब कुछ दिन बाद लालाजी अपने घर से एक दूसरे ग्राम को चले। लाला जी हुक्का बहुत पिया करते थे अतः इन्होंने तमाखू और चिलम तो ले ली, पर दियासलाई जो रक्खी इस लिये नहीं ली कि इन्होंने सुन रक्खा था कि ब्राह्मण के मुख से आग उत्पन्न होती है। इन्होंने सोचा कि दियासलाई लेकर क्या करें, जहां ब्राह्मण मिल जायगा वहां पी लेंगे। लाला जी चलते चलते दोपहर को एक कुएँ के पास पहुंचे। वहां एक और पुरुष को देख पूछा कि—आप कौन हैं?' उसने कहा—'ब्राह्मण।' बस, लालाजी ने निश्चय कर लिया कि अब आग मिल जायगी, हुक्के पानी की आराम है ऐसा सोच उतर पड़े। इन लाला जी से पण्डित जी ने भी पूछा कि—आप कौन लोग हैं?' इन्होंने कहा—मैं महाराज कायस्थ हूं। तब तनी पूछ पाछ होने पर ब्राह्मण जी तो सो गये क्योंकि ये भोजन भाजन कर चुके थे और लालाजी स्नान भोजन करने लगे। जब भोजन कर चुके तो लालाजी को हुक्के की आवश्यकता हुई। अब इन्होंने चिलम में तमाखू रख, एक लेकर ब्राह्मण के पास जा उसके मुख में लगा दिया। बड़ी देर तक लगाये रहे, पर आग न निकली। तब सोचा कि हम

मुह के बाहर लगाये हैं, इस लिये आग नहीं निकलती, ऐसा विचार अंडा ब्राह्मण के मुंह में घुसेड़ दिया। ब्राह्मण भरभरा उठ बैठा और लाला जी से पूछा—यह क्या करते हो?'-लाला जी ने कहा—'महाराज, हमने कथा में सुना है कि ब्राह्मण के मुंह में आग पैदा होती है सो आप के मुह से ले रहे थे क्योंकि उक्त हुक्का पीने वाले थे। ब्राह्मण भी दूसरा परशुराम था। उसने लट्ठ उठा लाला जी की खोपड़ी में दिया। लाला जी बोले—'हैं हैं यह क्या करते हो?' ब्राह्मण ने कहा—'तुम कायथ हो, इस लिये चटनी को कैथा तोड़ते हैं।' धन्य रे श्रोताओ! बुद्धि की बलिहारी है।

> यस्य नास्ति स्वयं प्रज्ञा शास्त्रं तस्य करोति किम्।
> लोचनाभ्यां विहीनस्य दर्पणः किं करिष्यति॥

६६—बे अवसर की बात

एक बार एक पुरुष कुछ बीमार था। उसने एक वैद्य के पास आकर अपना इलाज पूछा। वैद्यराज ने कहा कि—'तुम प्रथम जुलाब लो तब हम तुम्हारी दवा करेंगे।' जुलाब की दवा देकर वैद्यराज ने कहा कि—'खाने को खिचड़ी खाना।' यह मनुष्य बेचारा साधारण ही पढ़ा लिखा था इसने कहा—'वैद्यराज आपने खाने को क्या बतलाया?' वैद्यराज ने कहा—'खिचड़ी' यह जान वह बीमार पुरुष वैद्यराज को प्रणाम कर अपने घर को चल दिया, लेकिन थोड़ी दूर चल कर खिचड़ी भूल गया, फिर लौट कर वैद्यराज से पूछा—वैद्यराज आपने खाने को हमें क्या बताया था?' वैद्यराज ने कहा—'खिचड़ी।' अब वह पुरुष 'खिचड़ी' शब्द को रटता हुआ घर को चल दिया और शीघ्र शीघ्र 'खिचड़ी खिचड़ी' कहते जा रहा था। परन्तु

शीघ्र शीघ्र खिचड़ी खिचड़ी कहने में वह पुरुष खिचड़ी के स्थान में 'खाचिड़ी' रटने लगा। यह 'खाचिड़ी खाचिड़ी' रटता हुआ जा रहा था कि मार्ग में एक काश्तकार ने जो अपने खेत से चिड़िया उड़ा रहा था इसके मुख से 'खा चिड़ी खा चिड़ी' शब्द सुन इसे खूब ही पीटा और कहा कि—'मैं तो चिड़िया उड़ा रहा हूं और तू कहता है 'खा चिड़ी खा चिड़ी' ?' इसने कहा—'तो फिर हम क्या कहैं ?' काश्तकार ने कहा—'कहो उड़ चिड़ी उड़ चिड़ी।' अब यह पुरुष 'उड़ चिड़ी उड़ चिड़ी' रटता हुआ आगे को चला। कुछ दूर पर एक बहेलिया चिड़िया पकड़ रहा था। यह पुरुष उधर ही से 'उड़ चिड़ी उड़ चिड़ी' कहते हुए जा निकला। बहेलिये ने क्रोध में आ कर कहा—देखो तो इस बदमाश को, हम तो पकड़ रहे हैं और मुश्किल से एक एक चिड़िया पकड़े मिलती है, पर यह कहता है कि उड़ चिड़ी उड़।' उसने भी इसे खूब ही पीटा। इसने रोते रोते बहेलिये से पूछा कि—भाई, फिर क्या कहैं ?' बहेलिये ने बतलाया कि कहो—'आवत जाव फँसि फँसि जाव, आवत जाव फँसि फँसि जाव।' अब यही रटते हुए यह पुरुष आगे चला कि एक स्थान में चोर चोरी कर रहे थे कि इतने में यह जा निकला और यह रटता था कि—आवत जाव फँसि फँसि जाव, आवत जाव फँसि फँसि जाव।' चोरों ने कहा यह बड़ा ही पाजी है, देखो हम लोगों ने तो बड़ी कठिनता से सेंध लगा पाई है और यह कहता है कि—'आवत जाव फँसि फँसि जाव, आवत जाव फँसि फँसि जाव।' उन्होंने इसे बहुत पीटा, यह बिचारा फिर रोने लगा और चोरों से पूछा—'अच्छा, हम अब क्या कहैं ?' चोरों ने कहा—'कहो लै लै जाव धरि धरि जाव, लै लै जाव धरि धरि जाव।' अब इसे ही रटता हुआ यह पुरुष आगे चला तो चार मनुष्य एक मुर्दा लिये

हुए जा रहे थे। यह अपनी ध्वनि में रट रहा था कि-'लै लै जाव धरि धरि आव, लै लै जाव धरि धरि आव।' यह शब्द सुनते ही उन चारों पुरुषों ने मुर्दे को रख के इसे खूब ही दुरुस्त किया और कहा-'अबे उल्लू, हमारा तो नाश हो गया और तू कहता है कि— लै लै जाव धरि धरि आव, लै लै जाव धरि धरि आव।' इस पुरुष ने रोते हुए उन चारों से पूछा—'तो महाराज, फिर हम क्या कहें ?' उन्होंने कहा कि-तुम कहो—'राम करै ऐसा दिन कबहू न होय, राम करै ऐसा दिन कबहू न होय।' अब यही रटते हुए यह एक राजा के ग्राम में जा निकला। वहां तमाम उमर में राजा साहब के पहले ही लड़का हुआ था जिसकी प्रसन्नता में कहीं बाजे गाजे बज रहे थे, कहीं बन्दूकें तोपें छुट रही थीं, कहीं यज्ञ होम हो रहे थे, ऐसे समय में वह पुरुष यह कहते हुए कि 'राम करै ऐसा दिन कबहू न होय, राम करै ऐसा दिन कबहू न होय।' निकला और ये शब्द राजा के कान तक पहुंच गये। राजा साहब ने इसकी हड्डी हड्डी ढीली करवा दी और कहा— क्यों रे मक्कार, तमाम उमर में हमारे लड़का हुआ तमाम गाँव प्रसन्नता मनावे और तू कहता है कि-राम करै ऐसा दिन कबहू न होय?' इस पुरुष ने रोते हुए फिर राजा से पूछा-'अच्छा महाराज, तो हम क्या कहें?' राजा साहब ने बतलाया कि-'राम करै ऐसा दिन नित उठि होय, राम करै ऐसा दिन नित उठि होय।' अब इसी को रटते हुए यह पुरुष चला कि एक गाँव में आग लगी हुई थी, गाँववाले सभी बिचारे आपत्ति में थे और यह पुरुष यह कहते हुये कि—'राम करै ऐसा दिन नित उठि होय, राम करै ऐसा दिन नित उठि होय' जा निकला। लोगों ने इसे खूब मारा। गरज इस प्रकार जहां यह गया, वहां इसकी दुर्दशा हुई। किसी कवि ने सत्य कहा है—

अमात काले वचन वृहस्पति रपि ब्रुवन् ।
लभते बहू यज्ञानं म्रियमान च पुष्कलम् ॥
अनवसर च यदुक्त तस्य भवति हास्य ।
रहसि प्रौढ वधूना रति समये वेदपाठ स्व ॥

६७—शठ बिना शठता के नहीं मानता

एक बाबा जी के पास कुछ सुवर्ण की अशरफियाँ एक लोहे के सोटे में बन्द थी। बाबाजी ने कहीं तीर्थयात्रा करने का विचार किया इस कारण बाबाजी एक सेठजी के पास जाकर बोले कि—'सेठजी, जरा हमारा सोटा जबतक हम तीर्थयात्रा करके न लौटें रक्खे रहिये।' सेठजी बोले—'महाराज, यहा सोटा औंधा रखने की जगह नहीं।' परन्तु जब बाबाजी ने बहुत कुछ कहा तो सेठ जी ने कहा—'अच्छा महाराज, जाओ उस कोने में रख दो, जब आना तब उठा लेना।' साधुजी सोटा रख के चले गये। परन्तु यहां सेठानी और सेठ रोज उस सोटे को उठा उठा देखने रहे और आपस में कहते थे कि सोटा भारी बहुत है, जाने क्या बात है।' सोटे के ऊपर एक फुल्ली जड़ी हुई थी। सेठानी ने कहा—'मालूम देता है कि इस सोटे के भीतर कुछ भरा है, हो न हो यह फुल्ली उखाड कर देखना चाहिये कि इसके भीतर क्या है।' सेठ ने ऐसा ही किया। जब फुल्ली उखाडी तो उससे पीली पीली अशरफिया गिर पडीं। सेठ ने अशरफिया घर में रख सोटा फेंक दिया। जब कुछ काल के पश्चात् साधुजी लौटे और सेठ जी के पास आ सोटा मांगा तो पहले तो सेठजी ने साधुजी को पहिचाना ही नहीं, जब पहिचाना तो बोले कि—'आपका सोटा तो छछुन्दर खा गई।' साधुजी चुप रह गये

और सेठजी के पास से चले गये। थोड़े दिन बाद साधूजी आकर उसी गांव में अध्य पकी का काम करने लगे। बहुत से गांव के लड़के साधूजी के पास आने लगे और उन सेठजी का लड़का भी आने लगा जिन्होंने सेठा छछुन्दरी को मिला दिया था। कुछ दिन के बाद साधूजी ने उस सेठ के लड़के से कहा कि—'देख, आज जब तुझे छुट्टी दें तो अमुक स्थान से लौट आना, अगर न लौटा और तू घर चला गया तो समझ लेना कि तेरी खाल खींच दूंगा।' सेठ का लड़का बेचारा भय से लौट आया। साधूजी ने उस लड़के को एक कोठरी के अन्दर बन्द कर दिया और उस में कुछ खाने को रख दिया एवं लड़के से कहा कि—'अगर तू बोला तो समझ लेना कि तू था ही नहीं।' थोड़ी देर में, जब समय अधिक व्यतीत हुआ और लड़का घर न आया तो सेठजी ने अपने लड़के की तलाश की। जब लड़का न मिला तो सेठ ने आकर साधूजी से पूछा। साधूजी बोले—'भाई, सब लड़कों से पूछ लो, हमने तो उसे छुट्टी दे दी, पर हम नहीं जानते कि आपका लड़का कहां गया?' जब सेठजी ने लड़कों से पूछा तो लड़कों ने कहा कि—'हमारे साथ फलाँ स्थान तक गया, फिर हम नहीं जानते कि कहाँ गया?' सेठजी फिर इधर उधर घूम कर साधूजी के पास आये और बोले कि—साधूजी लड़का नहीं मिलता, न जाने कहाँ गया?' साधूजी ने कहा—'यहां से तो हमने लड़के को छुट्टी दे दी थी परन्तु हाँ एक लड़के को एक गिद्ध उसकी चोटी पकड़े हुये ऊपर को लिये जा रहा था।' सेठजी ने पुलिस में रिपोर्ट की। थानेदार ने आकर पूछा कि—'साधूजी' सेठ का लड़का कहाँ गया?' साधूजी ने कहा—'हमने तो यहां से छुट्टी दे दी है आप सब लड़कों से पूछ लें।' जब थानेदार ने लड़कों से पूछा तो लड़कों ने साफ कह दिया कि—"हजूर हमारे साथ फ

गला स्थान तक गया है, फिर हम नहीं जानते।' पुन साधू जी बोले कि—'थानेदार साहब, हां एक बात हमने देखी थी कि एक गिद्ध एक लडके की चोटी पकडे ऊपर को लिये जाता था।' थानेदार ने कहा—'कहीं गिद्ध लडके की चोटी पकड के उडा ले जा सकता है?' तब तो साधूजी ने कहा—

शठस्य शाठ्य शठ एव वेत्ति नैव। शठो वेत्ति शठस्य शाठ्याम्।
छुन्दरी खादति लोहदण्ड कथन्न गृद्धेन हतः कुमारः॥

महाराज! 'शठ प्रति शठे कुर्यात् सादरम् प्रति आदरम्' इस कहावत के अनुसार जब तक शठ के साथ शठता न की जाय तब तक शठ नहीं मानता। महाराज, हम तीर्थ यात्रा जाते समय इनके पास एक सोटा रख गये थे जिसमे इतनी अशरफिया थी, जब हमने आकर इनसे सोटा मागा तो सेठ जी बोले कि 'लोहे का डण्डा तो छछुन्दरी खा गई' सो हुजूर अगर छछुन्दरी लोहे का डण्डा उगिल दे तो गिद्ध भी सेठ का लडका डाल देवे। यह सुन सेठ ने सम्पूर्ण अशरफिया मए डण्डे के साधूजी के भेंट कीं और साधूजी ने सेठ का लडका कोठरी से निकाल दिया। सच है, किसी कवि ने कहा है—

यस्मिन् यथा वर्त्तते यो मनुष्यस्तस्मिन् तथा वर्तितव्यं स धर्मः।
मायाचारो माययावर्तितव्य. साध्वाचार साधुना प्रत्युपेय॥

६८—श्राद्ध करना तो सहज है पर सीधा देना कठिन है

एक अहीर ने एक बार श्राद्ध करनी चाही, अत. सब सामान तैयार कर एक पण्डित को बुलाया। पण्डित जी ने

कहा कि—'चौधरी साहब, जैसा हम तुमसे कहैं वैसा करते जाना।' चौधरी साहब ने कहा—'बहुत अच्छा' पण्डित जी ने कहा—'लेव चिरुआ में जल।' चौधरी साहब ने लेकर कहा—'लेव चिरुआ में जल।' पण्डित जी बोले—हम तुम से कहते हैं।' चौधरी साहब ने कहा—'हम तुमसे कहते हैं।' पण्डित जी ने कहा—'अबे सुनता नहीं।' चौधरी साहब ने कहा—'अबे सुनता नहीं।' पण्डितजी ने गुस्सा में आ एक थप्पड़ चौधरी साहब के मार दिया और कहा कि—'चिरुआ में जल लेकर आचमन कर।' चौधरी साहब ने पण्डितजी को उठाकर दे मारा और एक थप्पड़ लगा कर कहा—'चिरुआ में जल लेकर आचमन कर।' अब तो पण्डित जी को और क्रोध आ गया और के—

लात घूसा कमर मध्ये चपकनं मुख भञ्जनम् ।
चरणदासी शीश मध्ये बार बार बड़ाधड़म् ॥

यह श्लोक पढ़ अहीर को पीटने लगे। अहीर ने मारते मारते पण्डित की हड्डियाँ ढीली कर दो। इस प्रकार दो घंटे श्राद्ध हुआ। पश्चात् पण्डित जी काखते कूँखते अपने घर पहुंचे। पण्डितानी जी रास्ता देख रही थीं कि पण्डितजी श्राद्ध कराने गयेहैं कुछ लिये आते होंगे। पण्डितजी की यह दशा देख पण्डितानी ने हाल पूछा। पण्डित जी ने सब हाल बताया। यहा चौधरीजी अपने घर आये तो चौधराइन ने पूछा कि—'श्राद्ध हो गया?' चौधरी ने कहा— हां हो गया।' चौधराइन ने कहा कि—'पण्डित जी को सीधा नहीं दिया?' चौधरी बोले—'क्या बतावें श्राद्ध तो दो घंटे तक होता रहा, पर सीधा देने का ख्याल नहीं रहा अच्छा, अब तुम जाकर पण्डित को सीधा दे आओ।' चौधराइन आटा दाल घी लेकर ज्योंही पंडित के मकान पर पहुंची तो वहा पंडित और पंडितान दोनो क्रोध में जल रहे थे, तब दोनोंने मिलकर चौध-

राइन को खूब पीटा, पर चौधराइन जु इस लिये न बोलीं कि जाने सीधा शायद इसी प्रकार दिया जाता हो। जब चौधराइन पिट पिटा के घर आईं तो चौधरी से बोलीं कि-चौधरी! श्राद्ध करना तो सहज है, पर सीधा देना बड़ा कठिन है, अगर तुम सीधा देने जाते तो मालूम होता।'

६९—मार टोरि श्राद्ध करना

एक पण्डित केवल श्राद्ध ही पढ़े हुए थे और जहां कहीं ब्याह, जनेऊ, मुण्डन, कर्णछेद या भागवत आदि बाचने जाते वह। वैचारे और तो कुछ जानते होते न थे वहीं अपनी श्राद्ध की पोथी खोल कर बैठ जाते। एक जगह सत्यनारायण की कथा लगी। वहां से बुलावा आया तो पण्डित जी अपनी श्राद्ध की पोथी ले जा विराजे। वहां जब सत्यनारायण की कथा के स्थान में श्राद्ध का पाठ करने लगे तो एक जगह निकला कि अपसव्य लोगों ने कहा—'महाराज यह सत्यनारायण की कथा में अपसव्य' कैसा?' तो पण्डित जी ने कहा कि-'यह अध्याय को समाप्त है, बोलो राधाकृष्ण की जै। इति प्रथमोऽध्याय।'

७०—अन्ध-परम्परा

एक बार एक सेठजी के घर में ब्याह होकर बरनौती यानी मढ़वा हो रहा था। लड़का लड़की गाँठ जोरे तथा सब लोग सेठजी के आँगन में बैठे हुए थे कि इतने में सेठजी के घर में एक बिल्ली मर गई। अब सेठजी ने सोचा कि ऐसे समय में मरी बिल्ली समिट्वा कर बाहर भेजना अनुचित है, इससे सेठानी जी ने उस मरी बिल्ली को एक झाँवे के नीचे मूँद दिया। यह सम्पूर्ण चरित्र सेठजी की लड़की अपने आँगन में

बैठी बैठी देखती रही। जब वह लडकी अपने सासुरे पहुँची और बहुत दिन के पश्चात् उसके सासुर में जब उसकी ननंद का व्याह हुआ और जब बरनावन होने लगी और सब लोग आगन में आये तो उसने अपनी सास से कहा—'अम्मा, एक बिल्ली तो लाओ।' पूछा—'क्यों?' कहा—हमारे यहा मार के झौवे के नीचे इस मौके पर मूँदी जाती है।' सास ने बिल्ली मँगा दी। बहू ने सोटा ले बिल्ली को मारना प्रारम्भ किया। अब वहा शोर मचा। इसी भांति हमारे बहुत से भाई बिना समझे बूझे बहुत सी बातो को सनातन समझ बैठते हैं।

दानाय लक्ष्मी सुकृताय विद्या चिन्ता परब्रह्म विचारणाय।
परोपकाराय वचांसि यस्य धन्यस्त्रिलोकी तिलकः स एव॥

७१—क्या से किसे मान बैठे

एक ब्राह्मण की लडकी जन्म से ही बडी साध्वी और भक्त थी। निशि दिन भजन, ईश्वर में वृत्ति, गीता का पाठ और इस महामंत्र का जाप किया करती थी कि—

राम कृष्ण गोपाल दमोदर हरि माधव मधुसूदन नाम।
कालीमर्दन कंसनिकन्दन देवकिनन्दन, त्व शरणम्॥
चक्रपाणि बाराह महीपति जलशायक मंगल करणम्।
ऐसे नाम जपो निशि वासर जन्म जन्म के भय हरणम्॥

परन्तु जब यह लडकी कुछ बडी हुई तो इसका व्याह हुआ और जिस पुरुष के साथ इसका व्याह हुआ उसका नाम भी 'देवकीनन्दन' था और लौकिक प्रथा यह है कि स्त्री पति का नाम नहीं लेती है, इसलिए इस लडकी का जिस तारीख को व्याह हुआ, उसके उस महामंत्र के भजन में विघ्न पड़ गया

क्योंकि उसके महामन्त्र में यह शब्द आता था कि 'देवकिनदन त्वं शरणम्' और यही नाम उनके पति का था, इस कारण इसने इस महामन्त्र का भजन ही छोड दिया। परन्तु कुछ काल के पश्चात् देवकीनन्दन की स्त्री के एक लडकी उत्पन्न हुई। उसका नाम उस लडकी, देवकीनन्दन की स्त्री, ने 'चंपो' रखवाया। बस उसी तारीख से देवकीनन्दन की स्त्री का महामन्त्र बिना पति का नाम उच्चारण किये ही बन गया। जहां वह प्रथम कहा करती थी कि—

राम कृष्ण गोपाल दमोदर हरिमाधव मधुसूदन नाम्।
कालीमर्दन कंसनिकन्दन देवकिनन्दन त्व शरणम्॥

अब ऐसा कहने लगी कि—

राम कृष्ण गोपाल दमोदर हरिमाधव मधसूदन नाम्।
कालीमर्दन कंसनिकन्दन चंपो के चाचा त्व शरणम्॥

मित्रो भजन तो बन गया पर उसे यह परिज्ञान न हुआ कि प्रथम में किन देवकीनन्दन का भजन करती थी और चंपो के चाचा कौन हैं? यानी कृष्ण भगवान् के ख्यालमें चंपो के चाचा के भजन होनेलगे। बस, समझ लो कि हम क्या से क्या मान बैठे?

७२–खुशामदियों से दुर्दशा

एक राजा के यहा बहुत से खुशामदिये रहा करते थे। खुशामदियों की बहुत दिनों से कोई दग्गी नहीं जमी थी अत एव ये लोग आपस में सम्मति करके कि राजा साहब से अब कुछ लेना चाहिये। राजा साहब के पास पहुचे और उन से बोले कि—"राजा साहब, और तो आपने दुनियामें आ कर सम्पूर्ण ऐश आराम कर लिये, पर कभी आपने इन्द्र की पोशाक भी पहरी है?" राजा ने कहा—"नहीं, क्या इन्द्र की पोशाक

खाली हाथ डाल फिर कहा-"राजा साहब, यह कमीज पहिनिये।" फिर सबों ने कहा-"वाह वाह! क्या ही अच्छी कमीज है।" फिर खुशामदिये बोले-"राजा साहब यह वास्कट पहिनिये।" फिर सभा के लोगों ने वाह वाह की। खुशामदियों ने कहा कि-"राजा साहब लीजिये यह पजामा पहिनिये।" फिर सब लोगों ने वाह वाह की। इस भांति संपूर्ण पोशाक पहिना राजा साहब से कहा-'अब आप शहर की हवा खा आइये। राजा साहब फिटन पर सवार हो नङ्गे शहर घूमने निकले परन्तु शहर में राजा साहब की यह शकल देख लोग कहते थे कि-"राजा क्या आज पागल हो गया है जो शहर में नङ्गा घूम रहा है?" जब राजा ने सुना कि शहरवाले हमें नङ्गा कह रहे हैं तो राजा ने कहा कि-"ये सब दोगले हैं। जब राजा साहब शहर घूम आये तो खुशामदियों ने कहा कि—"राजा साहब जरा महलों में भी हो आइये ताकि इन्द्र की पोशाक सब रानियां भी देख लें। राजा साहब जब महल में पहुंचे तो रानियां राजा को नङ्गा देख सब इधर उधर भगने लगीं। राजा ने कहा कि-'तुम सब क्यों भगती हो?" रानियों ने कहा-महाराज आज आपको क्या हो गया है जो नङ्गे फिर रहे हो?" राजा बोले "कि तुम सब दोगली हो। हम इन्द्र की पोशाक पहिर रहे हैं सो यह असलों को ही दीखती है दोगलों को नहीं।" रानियों ने हाथ जोड़ राजा साहब से प्रार्थना की कि-'महाराज आप चाहे और सम्पूर्ण पोशाक इन्द्र की ही पहिनिये परन्तु धोती केवल अपने देश की ही रखिये।" ऐसी ही दुर्दशा आज कल के खुशामदिये हमारे भोलेभाले भाइयों की कर रहे हैं—

सचिव वैद्य गुरु तीन जो, प्रिय बोलें भय आस।
तेहि राजा कर अवशि ही, होत वेग ही नास॥

किसी प्रकार मिल भी सकती है।" खुशामदियों ने कहा- 'हाँ सरकार मिल तो सकती है पर उसमें खर्च ज्यादा है और कठिनता से मिल सकती है।" राजा ने कहा—"इसकी कुछ परवाह नहीं, तुम बताओ तो सही कि इन्द्र की पोशाक किस प्रकार मिल सकती है।" खुशामदियों ने कहा—"महाराज दस हजार रुपया हमें खजाने से दिया जाय तो हम लोग जा कर छै मास में लेकर लौट सकते हैं।" राजा ने उसी समय दस हजार रुपये का हुक्म कर करा दिया। खुशामदियों ने दस हजार रुपया तो लाकर घर में रक्खा और आप ६ मास इधर उधर बने रहे। जब ६ मास व्यतीत हुए तो खुशामदिये दो ताले बन्द खाली सन्दूक लेकर राजा की सभा में आ विराजे। राजा उनको देख बड़े ही प्रसन्न हुए और बोले कि—"कहो। तुम लोग इन्द्र की पोशाक ले आये ?" खुशामदियों ने उत्तर दिया कि "हां सरकार, इन्द्र की पोशाक तो ले आये परन्तु महाराज इन्द्र ने यह कह दिया है कि पोशाक असली को दीख जायगी दोगलों को कभी दीख नहीं सकती।" राजा ने कहा—"और अब आप इसे गो लिये।" खुशामदियों ने कहा कि—"प्रथम आप अपने पुराने कपड़े सब के सब उतार दीजिये।" राजा ने वैसा ही किया। अब खुशामदियों ने खाली सन्दूक खोल, खाली हाथ सन्दूक में डाल और खाली ही निकाल बोले कि 'राजा साहब, ये लीजिये इन्द्र की धोती, इसे पहिनिये और इस पुरानी धोती को भी उतार दीजिये।" राजा पुरानी धोती भी खोल नङ्गे हो गये। सभा के लोग बोले—"वाह वाह! क्या ही अच्छी इन्द्र की कामदार धोती है।" क्योंकि सब डरते थे कि अगर यह कह दिया कि धोती वोती कुछ नहीं है राजा साहब आप तो नङ्गे हैं तो हमारी असलियत में फर्क लग जायगा और दोगले कहे जाँयगे। इसी प्रकार खुशामदियों ने

७२—धर्मध्वजी

एक पण्डित बडे ही भक्त और शुद्धाचारी यानी नित प्रात काल उठ के शौच दन्तधावन स्नान दुर्गापाठ आदि कर्म किया करते थे। परन्तु पण्डितजी को केवल मांस खाने की आदत थी। एक दिन पण्डितजी महाराज को कहीं मांस न मिला और पण्डितजी स्नान करने जाते थे कि इतने में एक छोटी बकरी जो पण्डितजी के पडोसी की थी उनके घर आ गई। पण्डित जी गँडसा ले उसे यमपुर पहुंचा, उधेड़, काट छांट कर पण्डितानी से बोले कि—"तुम तब तक इसे बनाओ, मैं स्नान कर पाठ करने जाता हूं।" पण्डित जी स्नान कर पाठ करने लगे और वह बकरी थाल में कटी रक्खी थी और पण्डितानी मसाला चाट रही थीं कि इतने में पडोसिन कि जिसकी कि वह बकरी थी पण्डित के घर आग लेने आई। पण्डित दुर्गापाठ कर रहे थे। पण्डितजी पडोसिन को देख पाठ करते हुए प्रवाह में पण्डितानी से बोले—

या देवी सर्व भूतेषु चेतनेत्यभिधीयते।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः॥

पुनः इसी प्रवाह में बोले—

झापनियां झापनिया जिनकी हम मारी मेमनियां सो तो ठाढ़ी आगनिया नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनम

पण्डितानी जी कुछ पढी हुई थीं, यह पाठ सुनते ही उन्होंने मांस ढक दिया।

मित्रो! अब इस हिंसा-कर्म को छोड़ अहिंसक बनो और बंचकता छोड पूरे साधु बनो।

७४--गुरु चेला

एक क्षत्रिय एक बार एक पण्डित के चेला होने गये।
क्षत्री जी लोटा, धोती, खडाऊं आदि २ सामान भेंट कर पण्डित
जी से 'नमो भगवते वासुदेवाय नमः' यह मन्त्र सुन चेला हुए।
परन्तु पण्डित जी ने सुन रक्खा था कि इन कुंवर जी की स्त्री
बड़ी ही सुन्दर है अतः पण्डित जी अपने नये चेले से बोले
कि—"आपको सपत्नीक चेला होना चाहिये. अभी तो आप
आधे चेला हुए हैं।' क्षत्री बेचारे सीधे सादे थे। उन्हों ने
कहा—'तो पण्डितजी अब क्या हो अब तो हम चेला हो
चुके।" पण्डित जी ने कहा—"सो अभी क्या हुआ, तुम अपनी
स्त्री को ले आओ, उसको हम फिर मन्त्र सुना देंगे।" कुंवर जी
ने क्षत्राणी को ले आकर पण्डितजी से कहा- 'गुरुजी महाराज,
अब आप इसे भी मंत्र सुनायें।" गुरुजी ने कहा—"स्त्रियों को
मंत्रोपदेश इस प्रकार नहीं किया जाता। इन का मन्त्र कोई
मनुष्य न सुन सकेगा, इस लिए इन्हें एकान्त में मंत्रोपदेश
करेंगे।" कुंवरजी ने यह गुरु आज्ञा पा अपनी स्त्री को गुरुजी
के साथ एक कोठरी में एकान्त कर दिया और कहा कि—
अब आप इसे मन्त्रोपदेश कर दें।" परन्तु क्षत्राणी और भर्ता
दोनों कुछ संस्कृत पढे हुए थे और यह बात गुरुजी को मालूम
न थी। गुरु जी कोठरी में क्षत्राणी जी से बोले कि—"इमं
भूमिं गोकुलं मानय" इस भूमि को गोकुल मानो। पुनः बोले
कि— "अहं कृष्णं मन्ये" और हमको कृष्ण मानो। पुनः बोले
कि—'त्वं आत्मानं राधां मन्यस्व' और तुम अपने को राधा
मानो। पुनः बोले-'विहारं कुरु" और भोग विलास करो।
परन्तु यह सब वार्ता कुंवरजी सुनते जाते थे। पण्डित तो
समझते थे कि कुंवर यहां नहीं हैं क्योंकि कह दिया था कि

स्त्रियों का मंत्रोपदेश आपको नहीं सुनना चाहिये, पर कुँवर को पण्डित जी के वर्त्ताव से कुछ शशय होगया था, इसलिए वे कोठरी के पास ही सुन रहे थे, बस इतना सुनते ही कुँवर जी किवाडों में धक्का मार जा कूदे और बोले कि—

'अहमृयमलोकसमागतोहं इभयमदण्डं विद्धि अनेनदुष्टादन्या।

अर्थात् मैं यमलोक से आया हू और यह यमदण्ड है, सो इससे यम की आज्ञा है कि ऐसे ऐसे दुष्टों का नाश करो।

७५--चेले का इस्तीफा

एक पण्डित जी को एक वैश्य ने अपना गुरु किया था और उनसे एक कंठी ली थी और चेला बन भक्ति किया करता था, परन्तु पण्डितजी को जहां कहीं जो कुछ सामान मिलता, चेले पर हो लदवाते थे। इस प्रकार धीरे२ चेले के पास बोझा अधिक हो गया था। चेला बोझे से हैरान था परन्तु पण्डित जी ने अपनी ध्वनि न छोडी। एक दिन चलते २ गुरु चेला दोनों एक कुएँ पर जा उतरे। चेले की कमर बोझे से टूट रही थी, जब तक पण्डित जी को किसी ने उसी कुए पर आकर और एक लोटा धोती दिया। गुरुजी बोले–' चेला, ले इसे और रख ले।" चेले ने दाहिने हाथ से कंठी तोड गुरु से कहा कि–' यह लीजिये, इसे लेकर आप किसी ऊंट के बांधिये जो आपका बोझा ढोवे, हम से यह बोझा नहीं चलता।"

७६--भारवाही

एक साधूजी बिलकुल मूर्ख थे, लेकिन कुछ सन्यासी महात्माओं का उपदेश श्रवण करने से उनके हृदय में यह भाव उत्पन्न हुआ कि गीता पढना चाहिये। एक दिन एक राजा साहब

भाते टमटम पर हवा खाने निकले। साधूजी ने राजा साहब को जा घेरा और हाथ जोड खडे होगये। राजा साहब ने कहा—'कहिये आप क्या चाहते हैं? क्यों आप इतनी तकलीफ उठा रहे हैं? कहिये।' साधूजी ने कहा—'महाराज हमें एक गीता की पोथी ले दो।' राजा साहब ने कामदारों को आज्ञा दी कि—"इस साधू को एक गीता की पुस्तक ले दो।' दूसरे दिन साधू कामदारों के पास गया तो उन्होंने बडी उत्तम सुर्ख जिल्द बंधी हुई गीता की एक पुस्तक उसे ले दी। यह साधू सुर्ख जिल्द गीता को पाकर कूदने लगा और बोल—"गीता गाता गाता, हम री गीता।" और बार बार उस जिल्द को अपनी छाती में लगाता और कहता था कि—गीता, बडी अच्छी गीता, मेरी गीता।' कभी उसे चूमता और कहता—गीता।" गीता ले जब वह माग में आया तो कहा कि—इस में बाधने के लिये कोई बसना यानी बस्ता होना चाहिये, नहीं तो इसकी जिल्द बिगड जायगी।' निदान साधू ने कपडा खरीद उसमें गीता लपेट कर रात को अपनी कुटी में रक्खा परन्तु रात में चूहे आकर उस की गीता खुतर गये। जब प्रभात हुआ तो साधू जी ने ज्यों ही अपनी गीता को देखा तो देखते क्या हैं कि उसे चूहे काट गये। अब तो महात्माजी को बडा ही कष्ट हुआ। दूसरे दिन साधूजी ने गीता की पोथी यद्यपि बडी सावधानी से रक्खी, पर चूहे उसे फिर खुतर गये। अब तो तीसरे दिन महात्माजी देखकर बडे दुखी हुए। लोगों से पूछा—"भाई क्या करें, हमारी गीता की पोथी नित्य चूहे खुतर जाते हैं।" लोगों ने कहा—'महाराज एक बिल्ली पालिये ताकि चूहे आप की पोथी न खुतरें।' महात्माजी ने एक बिल्ली भी पाली, परन्तु चूहों का काटना न बन्द हुआ। एक दिन उस बिल्ली ने चूहे तोडे किन्तु जब वह भूखों मरने लगी तो उसने चूहों का तोड़ना बंद कर दिया। महात्मा ने

फिर लोगो से पूछा— 'क्यो भाई लोगों, अब तो बिल्ली भी चूहा नहीं तोडती।" लोगों ने कहा महात्माजी, बिल्ली चूहे कैसे तोडे कुछ खाने को भी पाती है? बिल्ली को आप गाय का दूध पिलाया करें फिर देखें कि वह कैसे चूहा नहीं तोडती?' अब तो महात्माजी ने बिल्ली के दूध पिलाने के लिए एक गाय मोल ली। महात्मा ने गाय इसलिए ली कि बिल्ली गाय का दूध पीकर पुष्ट हो और चूहे तोडे ताकि चूहे गीता की पुस्तक न काटें। परन्तु गाय भी दो रोज दूध दे, तीसरे दिन लातें फेंकने लगी। महात्माजी लोगों से बोले-"भाइयो अब तो गाय भी दूध नहीं देती कि जो बिल्ली पिये और चूहे तोडे ताकि गीता बचे।" लोगों ने कहा—'गाय को कुछ खिलाते भी हो कि दूध ही दे। इसे हरी घास खिलाया करो। अब महात्मा जी को फिकर हुई कि अगर एक आदमी मिल जाय तो हरी हरी घास लाया करे। इतने में एक स्त्री अति दीन, जिस की अवस्था चौबीस पच्चीस वर्ष की थी, महात्मा के पास भीख मागने आई। महात्मा ने कहा—"अरी तू हमारे यहा रह कर इस गैया को हरी घास रोज एक गट्ठा छील लाया कर हम तोय खाने भर को भोजन दिया करेंगे।' स्त्री ने स्वीकार कर लिया और रोज गाय को हरी हरी घास डाल लाती और गाय की सेवा किया करती थी। अब तो महात्माजी की गाय खूब दूध देने लगी जिससे कि बिल्ली तो दूध पीती ही थी और महात्मा भी खूब रबडी उडाया करते थे और बचा बचाया स्त्री भी खा लेती थी परन्तु आप जानते हैं कि महाराज भर्तृहरि ने कहा है कि—

> भिक्षाऽशनं तदपि नीरसमेक वार,
> शय्या च भू परिजनो निजदेह मात्रम्।
> वस्त्र च जीर्ण शतखण्ड मलीनकन्था,

हाहा तथापि विषया न परित्यजन्ति ॥

भिक्षा ही जिनकी वृत्ति हो और निरस भोजन दिन भर में एक बार मिलता हो और पृथ्वी ही जिनकी शय्या हो और अत्यन्त पुराने हजारों टुकडों की जुडी हुई गुदडी पहिरे हुए हो, ऐसी अवस्था में भी यह विषय-वासना नही छोडती।

और भी कहा है—

कृश· काण खज श्रवणरहित पुच्छविकलो,
व्रणी पूति क्लिन्न कृमिकुलशतैरावृततनु ।
क्षुधाक्षामी· जीर्णा· पिठरजकपालार्पितगल,
शुनीमन्वेति श्वा हतमपि च हन्त्येव मदन ॥

अर्थ—महा दुबला, एक आँख फुटी देह भर में खाजिस, पूँछ कटी हुई, देह में बड़े बड़े फोडे जिनमें कीडों के परिवार के परिवार घुसे, क्षुधा से पीडित, घडे का घेरा गले में, ऐसा कुत्ता भी जब कुतियों के पीछे दौडता है, तो रवडी खानेवाले की तो बात ही क्या ? बस, महात्माजी उस घसियारी से फँस गये। पुन. कुछ काल में उसी घसियारी से महात्माजी के एक लड़का और एक लडकी उत्पन्न हुई। कुछ दिन के बाद एक दिन महात्माजी एक लडका इस कन्धे पर और एक लडकी उस कन्धे पर, गीता की पुस्तक बगल में, पीछे पीछे स्त्री और उसके पीछे गाय और साथ ही साथ बिल्ली आदि अपने सारे सामान से चले आ रहे थे और उधर से उन्हीं राजा साहब की सवारी जिन्होंने महात्मा को गीता ले दी थी आ रही थी। जब राजा साहब बराबर पर आये तो उन्होंने महात्मा को पहिचान और उनकी यह दशा देख सवारी खड़ी कर उनसे पूछा—'कहो महाराज, गीता कितनी पढ़ी ?' महात्मा बोले—'महाराज, १८ अध्याय में केवल ५ अध्याय हुए

है।' दाहिने कन्धे का इशारा करके कि एक अध्याय य बायें की तरफ इशारा करके कि दूसरा अध्याय यह, पीछे तरफ इशारा करके कि तीसरा यह, उससे पीछे की तर इशारा करके कि चौथा यह और बिल्ली की ओर इशारा कर कि पाँचवा यह। राजा यह सुन चले गये।

७७-अविद्या की हठ

शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्व विघ्नोपशान्तये॥

इस श्लोक के अर्थ में एक पंडितजी ने एक राजा साहब को 'रुपया बतलाया और इस प्रकार अर्थ किया कि 'शुक्लाम्बरधर' यानी रुपया सफेद सफेद होता है, 'विष्णु' जो चर अचर में व्यापक हो वह विष्णु कहावे, रुपये के बिना किसी का काम नहीं चलता इससे व्यापक है, और 'शशिवर्ण' गोल गोल चन्द्रमा सा होता है, 'चतुर्भुज' चार चवन्नी होती हैं इस लिये चतुर्भुज भी है, प्रसन्न वदन' और वह चमचमाता भी है, 'ध्यायेत्' उस रुपये के धारण करने से सम्पूर्ण विघ्न शान्त हो जाते हैं। उस दिन से जो पण्डित इन राजा साहब के पास आता तो उससे राजा साहिब यही श्लोक पूछा करते थे और जब पंडित इसको विष्णु की स्तुति में ले जाता यानी ठीक ठीक अर्थ करता तो राजा साहब कहते कि यह अर्थ गलत है और अपने को तथा अपने गुरू को बहुत कुछ धन्यवाद दिया करते थे। बहुत काल के बाद एक पंडित राजा के पास आये। उनके आते ही राजा ने वही प्रश्न किया। पंडितजी ने राजा का रुपये वाला अर्थ जान लिया था, इसलिये राजा के पूछते ही कह

दिया कि–महाराज, इसका अर्थ रुपया है।' राजा बड़ा प्रसन्न हुआ और कहा—'इतने दिन पर हमारे गुरु के बाद दूसरे पंडित आप ही मिले हो।' तब तो इन दूसरे पण्डित ने कहा–'महाराज, इसका एक अर्थ हम और आपको बतावें।' जो कोई न जानता हो।' राजा साहब ने कहा— बताइये।' पंडितजी ने कहा कि—'इसका अर्थ 'दहीवडा' भी हो सकता है? देखो 'शुक्लाम्बरधरं' दहीवडा सफेद सफेद होता है, 'विष्णु' व्यापक है ही यानी सब कोई खाता है 'शशिवर्ण' गोल गोल होता ही है, 'चतुर्भुज' चतुरों के खाने योग्य अर्थात् चतुर ही इसे खाते हैं, 'प्रसन्नवदन' फूला हुआ होना ही है और इसके धारण अर्थात् खाने से सम्पूर्ण विघ्न शान्त हो जाते हैं। राजा यह अर्थ सुन बड़ा ही प्रसन्न हुआ और पण्डित को बहुत कुछ दक्षिणा दे विदा किया। परन्तु यह बड़े का अर्थ करने वाला पण्डित विद्वान् था, उसके हृदय में यह शोक हुआ कि देखो यह राजा कैसी मूर्खता में फँसा है, अतः इससे इसे निकालना चाहिये। ऐसा विचार राजा के यहां ठहर कर राजा साहब को पढ़ाने लगा। थोड़े काल में राजा साहब को अष्टाध्यायी महाभाष्य और कुछ काव्य पढ़ा कर एक दिन राजा साहब से कहा कि—

'शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्व विघ्नोपशान्तये॥

इसका क्या अर्थ है? रुपया या दहीवड़ा?' राजा साहब ने कहा— महाराज, इसका असली अर्थ तो इन दोनों में एक भी नहीं।' पण्डितजी ने कहा कि—'हम प्रथम यदि इसका और अर्थ बतलाते तो क्या आप कभी मानते?'

७८—कृतघ्नता

एक ग्राम में दो पुरुष पास ही पास रहते थे, उनमें एक का नाम मिट्ठनलाल और दूसरे का दीपचन्द था। इनमें मिट्ठन लाल की स्त्री पढी लिखी, बडी ही चतुर और सुशीला थी और दीपचन्द की स्त्री यद्यपि कुछ कम पढी थी पर चालाकी और चतुराई में कम न थी। दीपचन्द की स्त्री मिट्ठनलाल की स्त्री से हर बात को इस प्रकार चतुराई से पूछती थी कि इस से सीख तो लेऊं ही पर इसे यह न मालूम पडे कि यह सीखती है और हर बात के पूछने पर जब वह बतला देती तो यह कह दिया करती कि 'यह तो हमें पहिले ही से मालूम था।' मिट्ठनलाल की बिचारी सीधी स्त्री यह तो जान ही लेती थी कि यह चतुराई करती है पर कुछ कहती नहीं थी। इस प्रकार बहुत काल तक दीपचन्द की स्त्री मिट्ठनलाल की स्त्री से धूर्तता करती रही। परन्तु एक दिन मिट्ठनलाल की स्त्री को क्रोध आया और उसने कहा कि दीपचन्द की स्त्री मुझी से सीख जाती है और मानती नही इस लिये इसे इस की कृतघ्नता का फल देना चाहिये। मिट्ठनलाल की स्त्री यह सोच ही रही थी कि इतने मे दीपचन्द की स्त्री आ पहुंची, तब तो मिट्ठनलाल की स्त्री बोली—'बहिन, कल अमुक त्योहार है, इस लिये कल पूरनपूरी हुआ करती हैं, सो तुम भी अपने करना।' दीपचन्द की स्त्री ने पूछा—'बहिन, पूरनपूरी किस तरह हुआ करती हैं? उसके बनाने की क्या विधि है?' मिट्ठनलाल की स्त्री ने कहा—'बहिन, जिस दिन पूरनपूरी करना हो सुबह से उठ के झाडे जंगल हो, नाई से सब बाल घनघटाले और फिर कोयला पीस कर सारी देह में लगावे और जूतियों की माला बना के पहिरे, फिर नंगे होकर नंगी नंगी दूध में कुछ घी डाल के आटा माड़े, फिर नंगे नंगी ही

करे और किसी से बोले नहीं।' दीपचन्द की स्त्री बोली–यह तो मैं पहले से जानती थी।' मिट्ठनलाल की स्त्री ने मन में कहा कि–'जा रांड, तुझे 'यह तो मैं पहले ही से जानती थी' का फल कल मिलेगा।' अब दीपचन्द की स्त्री ने घर में आकर अपने पति से कहा–'कल हमारे यहां अमुक त्योहार है, सो मुझे अमुक अमुक वस्तु ला दो और दुपहर तक घर न आना क्योंकि मैं पूरनपूरी करूंगी।' दीपचन्द ने सामान ला दिया और प्रातःकाल से वे अपने काम में चले गये। यहां इनकी स्त्री ने झाड़ू जंगल हो, नाई को बुला सब सिर घुटा दिया, फिर नहा कर कोयला पीस सारे शरीर में लगाया, पुन जूतियों की माला पहिन नङ्गी हो दूध में आटा सान नङ्गी नङ्गी पूड़ियां बना रही थी कि इतने में इसे सुबह से तीन बज गये और इस का पति आ गया। यह घर के किवाड़ बन्द किये पूरनपूरियां बना रही थी। पति ने दरवाजे से कई बार बुलाया, पर इसने किवाड़ न खोले। इसे संदेह हुआ कि न जाने मेरी स्त्री मर गई या उसे सर्प ने काटा या कोई अन्य पुरुष मेरे घर में है, मेरी स्त्री आज किवाड़े क्यों नहीं खोलती? ऐसा सोच एक पड़ोसी के मकान से होकर जिसकी कि छत इसकी छत से मिली थी अपने घर पहुंचा तो देखता क्या है कि यह नङ्गी, सिर मुंडाये, सारे शरीर में कोयला लगाये, जूतियों का हार पहने पूरनपूड़ी कर रही है। प्रथम तो पति को देखते ही यह चुप रही पुन पति ने कहा— अरी चुडैल, यह क्या शकल बनाई है?' किन्तु यह पूरनपूरी के ध्यान में मग्न थी, इस कारण न बोली। पति ने कोड़ा ले इसकी खाल खींच दी। तब तो बोली कि 'मुझे यह सब मिट्ठनलाल की स्त्री ने बतलाया था।'

अब आप सोचें कि कृतघ्नता ने क्या क्या दुर्दशा कराई अन्त में यह खुल ही गया कि मैं मिट्ठनलाल की स्त्री से सीख आई थी।

७९--अमल के बिना लोग पीछे नहीं चलते

एक नदी के तट पर एक अन्धा और एक लङ्गड़ा बैठे हुये थे। एक पथिक नदी के समीप पहुँचे और अन्धे से पूछा कि "नदी कितनी है ?" अन्धे ने कहा-"मोटी जाघ से।" पथिक ने कहा- 'तुमने देखी ?' कहा-' मैं तो अन्धा हूं, मैं कैसे देखता' लङ्गड़े से पूछा-"नदी कितनी है ?" लंगड़ा बोला-"कमर से। पथिक ने पूछा-"तुमने मँझाई ?" इसने कहा-' मैं तो लङ्गड़ा हूं, कैसे मंझाता।' यह सुन पथिक संशय में था कि नदी के पार कैसे जाऊँ ? जाने नदी कितनी गहरी, कहां से कैसा रास्ता हो ? पथिक यह विचार ही रहा था कि इतने मे एक ऐसा पुरुष जो नदी के समीप ही रहता था तथा उसकी आखें और पैर दोनो थे और कई बार उसको नदी मझाई हुई थी आया और चेडर नदी मँझाने लगा। और उस पुरुष से जो संशय में खड़ा था कहा कि-"तुम भी मेरे पीछे चेडर चले आओ।" संशयात्मा पुरुष उसके पीछे चल पड़ा और नदी को पार कर गया।

इसी प्रकार जिनके बुद्धिरूप चक्षु हैं और काम करने की शक्तिरूप पैर हैं और आचरण के द्वारा नदीरूप वेदों को जिन्हों ने मँझाया है उन्ही के पीछे मनुष्य चल सकते हैं और जिन्होंने केवल सुना ही है और बुद्धिरूप नेत्रों से अन्धे हैं उनकी बात कोई नहीं मान सकता; और न उन्ही की बात कोई मान सकता है जिन्होंने बुद्धिरूप चक्षुओं से देखा तो है पर जो कर्म करने रूप पगों से लङ्गड़े आचरण-शून्य एव भ्रष्टाचारी हैं। इसलिये अगर हम दुनिया को सुधारना या अच्छे आचरणों पर लाना चाहते हैं तो आवश्यकता है कि प्रथम हम सुधरें और हम अपने आचरणों को अच्छा बनावें।

विदुषो मनता शृणुते कलति शपि नाचार्यं वि'ववत् कुरुते।

कलिपीडित भारत दुःख विनष्टि रथो भविता कथ'मत्यनघे ॥

८०--मेल से लाभ

एक पुरुष के चार बेटे थे। जब वह मरने लगा तो उसने अपने चारो बच्चों को बुला एक रस्सी दी और एक एक बेटे से पृथक पृथक कहा कि तुम इसे तोडो, पर वह किसी से न टूट सकी। फिर पिता ने कहा कि तुम चारों मिल कर इसको तोडो। पर वह फिर भी न टूट सकी। फिर उसने कहा अब इस रस्सी को उधेड डालो और इसकी एक एक लर को तोडो। बच्चों ने ज़रा ही देर में रस्सी के टुकडे टुकड़े कर दिये। तब पिता ने कहा कि देखो एक तिनका तुम्हें वर्षा में पानी से नहीं बचा सकता परन्तु जब तुम बहुत सा फूस इकट्ठा करके छप्पर छा लेते हो तो वह बडी बडी जल-वृष्टि से भी बचाता है। इसी प्रकार जब तक तुम आपस में मिले रहोगे तब तक कोई तुम्हारा कुछ नहीं कर सकता पर जहा तुम अलग हुए वहा रस्सी की तरह टुकडे टुकडे कर दिये जाओगे। किसी कवि ने कहा है—

अल्पानामपि वस्तूनां संहति कार्यसाधिका ।
तृणैर्गुणत्वमापन्नैर्बध्यन्ते मत्त दन्तिनः ॥
बहूनां चैव सत्वानां समवायेऽपि दुर्जयः ।
वर्षं धाराधरो मेघस्तृणैरपि निवार्यते ॥

८१-अदालत से नाश

एक बार दो बिल्लिया कहीं से चार रोटी की लोइया उठा लाई परन्तु उनके परस्पर बाँटने में झगडा हुआ, तब दोनो निश्चय कर एक बन्दर के पास आ कहा कि—'आप चल

७९--अमल के बिना लोग पीछे नहीं चलते

एक नदी के तट पर एक अन्धा और एक लङ्गडा बैठे हुये थे। एक पथिक नदी के समीप पहुँचे और अन्धे से पूछा कि "नदी कितनी है?" अन्धे ने कहा—"मोटी जाघ से।" पथिक ने कहा- 'तुमने देखी?' कहा—' मैं तो अन्धा हू, मैं कैसे देखता?' लङ्गडे से पूछा—"नदी कितनी है?" लगडा बोला—"कमर से। पथिक ने पूछा—"तुमने मँझाई?" इसने कहा—' मैं तो लङ्गडा हूँ, कैसे मंझाता।' यह सुन पथिक सशय में था कि नदी के पार कैसे जाऊँ? जाने नदी कितनी गहरी, कहां से कैसा रास्ता हो? पथिक यह विचार हो रहा था कि इतने मे एक ऐसा पुरुष जो नदी के समीप ही रहता था तथा उसकी आखें और पैर दोनो थे और कई बार उसको नदी मंझाई हुई थी आया और वेडर नदी मँझाने लगा और उस पुरुष से जो सशय में खडा था कहा कि—"तुम भी मेरे पीछे वेडर चले आओ।' सशयात्मा पुरुष उसके पीछे चल पडा और नदी को पार कर गया।

इसी प्रकार जिनके बुद्धिरूप चक्षु हैं और काम करने की शक्तिरूप पैर हैं और आचरण के द्वारा नदीरूप वेदों को जिन्हों ने मंझाया है उन्हीं के पीछे मनुष्य चल सकते हैं और जिन्होंने केवल सुना ही है और बुद्धिरूप नेत्रों से अन्धे हैं उनकी बात कोई नहीं मान सकता, और न उन्हीं की बात कोई मान सकता है जिन्होंने बुद्धिरूप चक्षुओं से देखा तो है पर जो कर्म करने रूप पगों से लङ्गडे आचरण-शून्य एव भ्रष्टाचारी हैं। इसलिये अगर हम दुनिया को सुधारना या अच्छे आचरणों पर लाना चाहते हैं तो आवश्यकता है कि प्रथम हम सुधरें और हम अपने आचरणों को अच्छा बनावें।

विद्वांसो जनता शृणुते कथति अपि नाचारं विधिवत् कुरुते।"

कलिर्पाति भारत दु:ख विनष्टि रथो भविता कथमत्यनघे ॥

८०--मेल से लाभ

एक पुरुष के चार बेटे थे। जब वह मरने लगा तो उसने अपने चारों बच्चों को बुला एक रस्सो दी और एक एक बेटे से प्रथक प्रथक कहा कि तुम इसे तोडो, पर वह किसी से न टूट सकी। फिर पिता ने कहा कि तुम चारों मिल कर इस को तोडो। पर वह फिर भी न टूट सकी। फिर उसने कहा अब इस रस्सा को उधेड डालो और इसकी एक एक लर को तोडो। बच्चों ने जरा ही देर में रस्सो के टुकडे टुकड़े कर दिये। तब पिता ने कहा कि देखो एक तिनका तुम्हें वर्षा में पानी से नहीं बचा सकता परन्तु जब तुम बहुत सा फूस इकट्ठा करके छप्पर छा लेते हो तो वह बडी भारी जल-वृष्टि से भी बचाता है। इसी प्रकार जब तक तुम आपस में मिले रहोगे तब तक कोई तुम्हारा कुछ नहीं कर सकता पर जहा तुम अलग हुए वहां रस्सो की तरह टुकडे टुकडे कर दिये जाओगे। किसी कवि ने कहा है—

अल्पानामपि वस्तूनां संहतिः कार्यसाधिका।
तृणैर्गुणत्वमापन्नैर्बध्यन्ते मत्त दन्तिनः ॥
बहूनां चैव सत्वानां समवायोऽपि दुर्जय।
वर्षं धाराधरो मेघस्तृणैरपि निवार्यते ॥

८१-अदालत से नाश

एक बार दो चिड़िया कहीं से चार खोये की लीइया उठा लाई परन्तु उनके परस्पर बाँटने में झगडा हुआ, अत दोनों ने निश्चय कर एक बन्दर के पास जा कहा कि—'आप चल

कर हमारी खोये की लोई बाँट दें।' बन्दर ने कहा—'अच्छा तुम कहीं से तराजू ले आओ।' जब बिल्लियां तराजू ले आई तो बन्दर ने दो लोइयां एक तराजू के पलड़े पर रक्खी और दो लोइया दूसरे पलड़े पर रक्खीं। परन्तु एक पलड़े की लोइया बनिस्बत दूसरे पलडे की लोइयो के कुछ भारी थी, इस कारण जब बन्दर ने तराजू उठाई तो भारी लोइयो वाला पलडा नीचे को लचक गया। बन्दर उसमें एक हौकला मार खा गया बिल्लियो ने कहा—'यह तू क्या करता है, खाता क्यों है?' बन्दर ने कहा कि—'यह कोटफीस है।' जब बन्दर ने फिर तराजू उठाई तो अब वह पलडा जिसमें हौकला नही लगाया था नीचा हो गया। बस बन्दर ने फौरन ही उसमें भी एक हौकला लगाया। बिल्लियो ने कहा—'यह क्या करता है।' बन्दर ने कहा कि—'यह तलबाना है।' अब पहलेवाला पलडा फिर नीचा हो गया, तो बन्दर पुन उसमें हौकला मार खा गया। बिल्लियो ने कहा कि—'तू यह बार बार क्या करता है?' बन्दर ने कहा—'यह हर्जाना है।' अब एक पलडा तो बिलकुल साफ हो गया और दूसरे में कुछ खोया रह गया। बन्दर ने अब की बार बिना ही तराजू उठाये वह शेष खोया भी खा लिया। बिल्लियो ने कहा—'यह क्या?' बन्दर ने कहा—'यह शुकराना है।'

बस यारो समझ लो कि अदालत सबका सभी साफ कर देती है, वहा दोनो के दोनो नाश ही जाते हैं। इसलिए आप लोगों के यहा जैसी पुरानी प्रथा थी कि गाँव में पञ्च नियत थे और वही सब न्याय किया करते थे वैसे ही पञ्च नियत कर अपने झगडे घर के घर ही में निपटा लिया करो, कभी भूल कर भी अदालत में न जाओ।

८२—भेड़िया धसानी

एक महात्मा के पास कुछ तांबे के बर्तन थे। महात्मा जब बाहर भ्रमण को जाने लगे तो सोचा कि ये वर्तन कहां लादे २ फिरेंगे, इस लिये इन्हें कहीं रख दें। यह सोच महात्माने बर्तन जंगल में एक स्थान पर गाड़ दिये और उसके ऊपर एक कूरी बांध रहे थे जिसमें चिन्ह बना रहे और लौट कर वे अपने बर्तन खाल लें कि इतने में गांव के कुछ लोगों ने महात्मा को जंगल में कूरी बनाते देखा। महात्मा तो बाहर भ्रमण को चले गये और गांववालो ने यह निश्चय किया कि गांव से जो कोई बाहर जाय वह फला फला जंगल में एक कूरी अवश्य बना आय इससे बड़ी सिद्धी प्राप्त होती है। बस, गांव से जब कोई कहीं जाता तो वहीं जहां कि महात्मा कूरी बना गये थे, एक कूरी बना देता। इस प्रकार थोड़े ही दिनों में वहां तमाम कूरी ही कूरी हो गई। कुछ काल के बाद जब महात्मा जी लौटे और अपने बर्तन खोदने के लिये उस जंगल में गये तो वहां देखते क्या हैं कि तमाम कूरी ही कूरी बनी हैं। महात्मा यह लखि देख बोले कि—

गतानुगतिको लोको न लोकः पारमार्थिकः।
पश्य लोकस्य मूर्खत्वं हतं मे ताम्र भाजनम्॥

अर्थ—लोक बड़ा ही गतानुगतिक अर्थात भेड़ियाधसान है लोग परमार्थ नहीं विचारते कि क्या है? लोक की मूर्खता तो देखो कि हमारे बर्तन ही ले डाले। अब क्या जान पड़े कि कौन सी कूरी के नीचे हमारे बर्तन हैं।

८३—संखेश्वर

एक ब्रह्म[illegible]रे बड़े ही सीधे सादे, ईश्वर भक्त, नित्य

पूजा पाठ किया करते थे। उनके मकान के पीछे एक धोबी का मकान था, अत. पण्डित जी जब दिन में पूजा किया करते और अपना संख बजाते तो साथ ही उनके मकान के पीछे जिस धोबी का घर था उसका गधा भी इन पण्डितजी के संख के साथ ही नित्य बोला करता था। पण्डितजी ने गधे को नित्य अपने संख के साथ बोलते देख सोचा कि यह कोई पूर्व जन्म का महात्मा जीव है इस कारण पण्डितजी ने उस गधे का नाम 'संखेश्वर' रख छोड़ा था। एक दिन अनायास महाराज संखेश्वर का देवलोक हो गया। जब पण्डितजी ने उस दिन दोपहर की पूजा की और संखेश्वर साथ न बोले तो उ कर धोबी से पूछा कि-"आज महात्मा संखेश्वर कहा गये?" पण्डितजी को पता लगा कि संखेश्वर का देवलोक हो गया पण्डितजी ने सोचा कि खैर यदि हम से कुछ नहीं हो सक तो लाओ महात्मा संखेश्वर के शोक में बाल ही बनवा डालें बस पण्डितजी अपनी मूंछ दाढ़ी सिर सब घुटवा स्नान क बनिये की दूकान पर कुछ सौदा लेने पहुचे। बनिये ने पूछा 'महाराज, आज बाल कैसे बनवाये हो।" पण्डितजी ने उ दिया कि-"एक महात्मा संखेश्वर थे, उनका स्वर्गलोक होग तो हमने कहा कि महात्माओं के शोक में यदि और कुछ न हो सकता तो बाल ही बनवा डालें इस लिये बाल बनव हैं।" बनिये ने कहा 'तो महाराज, कहिये तो महात्मा के श मे हम भी बाल बनवा डालें?" पण्डितजी ने कहा—"इ उत्तम क्या बात है?" बस सेठजी भी घुटा बैठे। दूसरे बाजार के लोगों ने सेठजी से पूछा कि-' सेठजी आपने कैसे बनवाये?" सेठजी ने कहा कि-"एक महात्मा संखेश्व उनका देवलोक हो गया तो हमने सोचा कि अगर महात्म शोक में हम से और कुछ नहीं हो सकता तो बाल ही ब

डालें।' बाज़ारवालों ने सेठ से कहा कि—'तो लाओ हम सब लोग भी महात्मा के शोक में बाल बनवा डालें।' सेठजी ने कहा—'बड़ी अच्छी बात है।' अब तो सब बाज़ार की बाज़ार घुट गई। तीसरे दिन पल्टन के लोग बाज़ार में रसद लेने आये। उन्होंने बाज़ारवालों से पूछा कि—'क्यों भाई आज तुम सब लोग बाल कैसे बनवाये हो?' बाज़ारवालों ने जवाब दिया कि—'एक महात्मा का, जिनका नाम सखेश्वर था, देवलोक हो गया है, हम लोगों ने सोचा कि महात्माजी के शोक में हम लोगों से और कुछ नहीं हो सकता तो बाल ही बनवा डालें।' पल्टनवालों ने कहा कि 'अगर हम लोग भी महात्माजी के शोक में बाल बनवा डालें तो क्या बुरा है?' बाज़ारवालों ने कहा—'वाह वाह महाराज बुरा कि बहुत ही अच्छा है?' बस उन लोगों ने जाकर अपनी पल्टन भर में यह खबर कर दी। फिर क्या था पल्टन की पल्टन सिर घुटा बैठी। चौथे दिन जब कप्तान साहब कवायद लेने आये तो पल्टन की यह शकल देख पल्टन के लोगों से पूछा—'वेल टुम लोगों ने क्या किया! क्यों एकदम सब लोगों ने अपना २ बाल बनवा डिया?' लोगों ने जवाब दिया कि—'हुज़ूर, यहां एक महात्मा सखेश्वर रहते थे, वह मर गये, इस लिये हम लोगों ने उनके रञ्ज में बाल बनवाये हैं।' कप्तान साहब ने पूछा—'अच्छा, वह महात्मा कहाँ रहटा ठा और कौन ठा।' लोगों ने कहा—'हुज़ूर, हम नहीं जानते? हम लोगों ने बाज़ार में सुना।' कप्तान ने झिड़क कर कहा—'वेल, टुम लोग बड़ा बेवकूफ हैं, जब टुम उसे जानटा नहीं फिर क्यों बाल बनवाया? अच्छा चलो, हम टुम्हारे साथ बाज़ार चलेगा।' जब कप्तान साहब बाज़ार पहुंचे तो बाज़ारवालों से कहा कि—'टुम लोगों ने जो हमारी पल्टन के लोगों से कहा है वह सखेश्वर महात्मा कौन है और कहां रहटा ठा?' बाज़ारवालों ने कहा—'हुज़ूर,

हम से इस बनिये ने कहा।' कप्तान साहब उस बनिये के पास पहुचे और उस से पूछा कि—'तुमने जो बाल बनवाया है और सब लोगो से कहा है, तुम जानटा है कि मखेश्वर महात्मा कौन है?' बनिये ने कहा—'हुजूर, हमने अमुक पण्डित से सुना है।' कप्तान बोला—'आइयो डैमफूल, तुमने बिना जाने बाल क्यों बनवाया और दूसरों से क्यों कहा?' निदान कप्तान साहब उस पण्डित के पास पहुंचे और पूछने पर मालूम हुआ कि महात्मा मखेश्वर एक धोबी का गधा था। कप्तान बड़ा गुस्सा हो बोला—'आइयो काला, डैम फूल, तुम लोग बिलकुल उल्लू है।' अब तो सब के सब बिलकुल शर्मिन्दा हो गये।

भाइयो, अब तो यह भेड़ियाधसानी छोड़ो। हम अब भी देखते हैं कि जहा रेल में एक किवाडी खुली उसी में सब घुसते चले जाते हैं, चाहे पास ही दूसरा डब्बा खाली क्यों न पड़ा हो।

८४—मालिन का देवता

एक बार एक स्थान में बड़ा भारी मेला लगा हुआ था मेले का प्रबन्ध हमारी गवर्नमेंट ने पुलिस वगैरा भेज कर बहुत उत्तम कर रक्खा था। कही भी चोरी बदमाशी न होने पाती थी। स्थान २ पर पुलीसमैन मौजूद थे। सडकों पर कोई पाखाना पेशाब मेले के अन्दर नहीं करने पाता था, परन्तु एक मालिन जो मेले के अन्दर ही एक जगह अपनी फूलों की दूकान रक्खे थी, उसे सुबह को ऐसा जोर पाखाना लगा कि वा सडक पर अपनी दूकान के पास ही पाखाना फिरने लगी यह चरित्र देख पुलिस के सिपाही मालिन को पकडने दौडे मालिन ने देखा कि मुझे पुलिस के सिपाही पकड़ने आते हैं उसने झट एक टोकरा फूलों का ले अपने पाखाने पर डाल

दिया और उसकी तरफ अपने हाथ जोड़ कर बैठ गई। जब पुलिस के सिपाही उसके पास पहुंचे और उससे पूछा कि–'तू यहाँ क्या करती थी ?' उसने कहा कि–'यहा एक बड़े भारी देवता रहते हैं इनकी पूजा करने से इनसे जिस प्रकार का फल चाहो, पुत्र, पौत्र, धन, दल, विद्या सम्पूर्ण मनोकामना ये थे पूरी करते हैं।' यह सुन कर पुलिस के सिपाहियो ने भी मालिन से एक२ पैसे के फूल और हलवाई की दुकान से कुछ बताशे लिया कुछ पैसे चढा किसी ने स्त्री, किसी ने लड़का, किसी ने नौकरी मांगी। इस प्रकार पुलिसवालों को ढंग मेले के और लोगों ने, और औरो को देख और लोगो ने गरज कि तमाम लोगों ने वहा खोडी, बताशे पैसे और फूलों के ढेर कर दिये। यह दशा देख हिन्दू बोले कि हमारा देवता है, मुसलमान बोले कि यह हमारा देवता है। जब दोनों मे बड़ा झगड़ा हुआ तो राजा के पास यह न्याय पहुंचा। राजा ने कहा—'वहा चल कर देखो, अगर वहा कुछ पत्थर वगैरा रक्खा है तब तो यह हिन्दुओं का देवता है और लम्बी लम्बी कबर मालूम हो, तो मुसलमानो का देवता।' राजा ने दोनों दलों को साथ ले मौके पर पहुंच कर कहा-इसके ऊपर से सब ये फूल, बताशे, खोडी हटाओ।' लोगो ने हटाना शुरू किया। हटाते २ वहा जो कुछ असली माल था वह निकल आया। यह देख सब शरमा गये और दोनो ने इकरार किया कि हमारा देवता नही।

८५—सुभाई का स्वभाव

एक राजा साहब को गाली देने की बड़ी आदत थी। एक बार राजा साहब एक बड़ी भारी सोसाइटी [सभा] के प्रधान बनाये गये और उनसे कहा गया कि–'राजा साहब! आप मे

आप इस सभा के प्रधान बनाये जाते हो, इस लिये अब किसी को गाली न देना।' राजा साहब ने कहा—'आज से, हम किसी 'साले' को गाली नहीं देंगे?'

८६--नीच की नीचता

य स्वभावोहि यस्यास्ते स एव दुरतिक्रमः।
श्वा यदि क्रियते राजा किं नाश्नत्युपानहम्॥

एक बार एक चमार के धनिक होने के कारण एक पंडित जी से यहां तक दोस्ती होगई कि दिन रात दोनों हमेशा साथ ही रहा करते थे। एक बार एक क्षत्री के यहां से उन पंडित जी के यहा निमन्त्रण आया। पंडित जी उस चमार को भी अपने साथ क्षत्री जी के यहा भोजन कराने ले गये और यह नहीं बतलाया कि वह चमार है, पर मौका ऐसा आय कि सब से पहले पैर धो क्षत्री जी के आँगन में वही पहुंचा और आसन पर बिठा दिया गया। अब इस के पीछे जितने पैर धुला अन्दर जाते थे, यह चमार जिस पुरुष को आते देखता था सखिलता जाता था क्योंकि उस को यह आदत पड़ी हुई थी। यहां तक सकिलता रहा कि सखिलते २ नर्दबीन पर पहुंच गया। जब लोगों ने इसे बहुत ज्यादा सखिलते देखा लोग बोले-''तुम कैसे चमार की तरह सखिलते जाते हो। यह शब्द सुन चमार पंडित से बोला कि- पंडितजू ई जानिगे। तब तो लोगों को ज्ञान हुआ कि यह असल में चमार है। क्षत्री जी ने उस की पूरी खबर ले बाहर निकाला।

८७--जाति कभी नहीं छिपती

जिस समय शिवाजी महाराज का मुसलमानों से युद्ध

रहा था तो शिवाजी ने अपने सरदारों और सिपाहियों को यह हुक्म दिया कि 'जहां मुसलमान देखो मार दो।' यह खबर पा बहुत से मुसलमानों ने चन्दन टीका पाटा जनेऊ भी पहिर लिये थे। एक बार एक मुसलमान शिवाजी के सामने पड़ा। शिवाजी ने पूछा—'तू कौन है?' उसने कहा—'बरेहमन।' पूछा—'कौन बरेहमन?' कहा—गौड़।' शिवाजी ने पूछा—'कौन गौड़?' वह बोला—या अल्ला गौड़ों में भी और?' शिवाजी ने कहा—'अरे मार मार, यह बरेहमन नहीं तुरक है।

सुचिर हि चान्नित्य सत्र मस्य म बुद्धिवान्।
द्वीपि चर्म परिच्छिन्नो प्राग्द पाद् गर्दभो हत ॥

७८-ठनगन (तक्ल्लुफ)

दो मुसलमान साहब कहीं जा रहे थे, अत स्टेशन पर टिकट ले प्लेटफारम पर दोनो साहब गाडी आने की वाट देखने लगे। जिस समय प्लेटफारम पर गाड़ी आई और चढ़ने का समय आया तो एक साहब ने कहा—'चलिये, आप सवार हूजिये।' दूसरे ने कहा-'चलिये चलिये, आप सवार हूजिये।' पहले ने कहा—अजी वाह इसमें क्या आप सवार हो जाइये।' दूसरे ने कहा—'किबला, आप सवार हूजिये।' बस इतने में गाड़ी सीटी दे चल पड़ी, ये दोनो साहब किबला में ही रह गये किसी शायर ने क्या ही सच कहा है—

है यार तकल्लुफ़ में तकल्लुफ सरासर।
आराम से वे है जो तकल्लुफ़ नहीं करते ॥

८९--दिल्लगी मखौल

एक मुतलक जाहिल मुसलमान साहब एक मौलवी साहब

से मिलने गये। मौलवी साहब इन के पहुंचते ही उठ कर खड़े हो गये और कहा—'वालेकुम सलाम, आइये क़िबला' और इन्हें मोढे पर बिठाल के इनके तथा और जो मौलवी लोग मौलवी साहब के पास बैठे थे उनके लिये पान लेने घर गये। इतने में दूसरे मौलवियों ने मखोल से इस मुतलक़ जाहिल से कहा कि–'अभी जो मौलवी साहब ने आप से कहा था कि 'आइये क़िबला' आप इसके माने भी समझे?' इन्हों ने कहा– हम ससुर माने क्या जाने, माने वाने आप जानते होंगे। भला, क्या माने हैं?' उन्होंने कहा कि–'क़िबला माने बदबोदार।' अब तो ज्योंही मौलवी साहब पान लेकर घर से निकले, बस इस मुतलक़ जाहिल ने कहा कि– मौलवी साहब, आपने आज तो क़िबला कहा, अगर दूसरे रोज क़िबला कहो गे तो मारे लट्ठों के सिर फोड़ दूंगा और क़िबला तू और तेरी मा किबिलिया और तेरा बाप किबिलया।' मौलवी साहब ने कहा– 'भाइ, आप किबला लफ्ज के माने क्या समझे? किबला लफ्ज़ के माने तो बड़े हैं।'

यह दशा देख और मौलवी हस रहे थे। इस मुतलक़ जाहिल ने कहा– बस, अब बात न बनाइये। तुम अपने दरवाजे मुझे चाहे कुछ किबला बिबला कह लो, जनाब देखूंगा।' यह कह कर चल दिया।

९०--कष्ट भय मे ऐश्वर्य-निन्दा

एक गाव में एक ऐसा दरिद्री रहता था कि जिसके घर मे सिवाय एक मूसल के और कुछ न था। एक बार अनायास समय ऐसा आया कि उस गाव में आग लग गई। अब तो यह दरिद्री अपना मूसल ले घरसे निकल रास्ते रास्ते नाचने लगा

और बोला कि—'आज दलिद्दर कामे आओ, आज दलिद्दर कामे आओ।' यह गाता हुआ कूदने लगा।

ऐसों को ही मूसरचन्द कहा करते हैं कि आग के भय से सामान ही न जोड़े। पाखाने की दिक्कत से भोजन ही न करे क्या यह अक्लमन्दी की बात है ?

नाप्नोति निर्मलत्वं स्व शोधं रोगपयानन्तरेण।

११—विद्या की निन्दा

एक सन्त जी एक पण्डित जी के द्वार पर भिक्षा मांगने आये। पण्डित जी ने कहा—'कहो सन्तजी, कुछ पढ़े लिखे हो ?' सन्त जी ने कहा— अरे बच्चे पठितव्य तदपि मर्तव्य पठितव्यं तदपि मर्तव्य, फिर दन्त कटाकटेति किं कर्तव्यं ?" तो पण्डितजी ने कहा कि— यदि यही माना जाय तो 'खातव्य तदपि मर्तव्यं न खातव्य तदपि मर्तव्य फिर अन्न भसाभसेति किं कर्तव्य ?" सन्तजी क्रोधित होकर चल दिये।

१२—विद्या-दम्भ

विद्यादम्भ क्षणस्थायी धनदम्भ दिनत्रयम्।

एक साहब केवल दो शब्द सीख आये थे, एक 'बले' दूसरा 'नमे गोयम्' बस अब जो इनसे जो कोई बोलता था ये अपने इन्हीं दो शब्दों का इस्तेमाल किया करते थे और अपने गाँव में इन्हीं दो शब्दों की बदौलत मौलाना साहब बन रहे थे। एक दिन एक अरब के रहनेवाले मौलाना साहब का ऊँट खो गया था और वह अपना ऊंट ढूंढते ढूंढते इन दुलफ्जी पास मौलाना के गांव से आ निकले और अरब के मौलाना साहब ने इन दुलफ्जी पास मौलाना से पूछा कि—'शुतुर मे

दीद = मेरा ऊँट देखा है ?' इन्होंने कहा—'वल्ले = हां देखा है।' अरब के मौलाना ने कहा— 'फुना रफ्त ? = किधर गया ?' इन्होंने कहा—'नमे गोयम् = न बताऊंगा।' तब अरब वाले मौलाना ने कहा—'जब तूने देखा है तो क्यों नहीं बतावेगा ?' और अरब के मौलाना को बड़ा गुस्सा आ गया कि देखा है और कहता है, नहीं बताऊंगा। बस गुस्से में आ अरब के मौलाना ने दुल्हनी मौलाना को खूब पीटा और यह वही लफ्ज मार खाने में भी रटते जाते थे 'वल्ले नमे गोयम् वल्ले नमे गोयम् = देखा है, नहीं बतावेंगे, देखा है नहीं बतावेंगे।' तब अरब के मौलाना ने जान लिया कि यह दोही लफ्ज जानता है।

९३—एक आर्य और उसकी पौराणिक भावज की वार्त्ता

एक आर्य पुरुष किसी ग्राम में रहते थे। दैवगति उनके जेठे भाई का देवलोक हुआ। इनकी भावज अर्थात् उस जेठे भाई की स्त्री, जिसका को देवलोक हुआ था, पौराणिका थी। इन्होंने कहा—'हम भाई की अन्त्येष्टि वैदिक रीति से करेंगे।' पर भावज ने गरुडपुराण सुन रक्खी थी, उसने कहा—'ग

शा उस अङ्गुष्ठ प्रमाणवाले शरीर के अनुसार भाईजी के छोटे छोटे हाथों में इतनी मोटी पूंछ कैसे पकड़ी जायगी ?

पुनः जब दशगावादि के बाद एकादश का दिन आया तो भावज ने सम्पूर्ण वस्त्र अङ्गा, कुरता, धोती, साफा, रजाई गद्दा, पलङ्ग, बर्तन, हाथी घोड़ा सब कुछ महापात्र को देने को निश्चय किया। भाई ने अपनी भावज से कहा कि-'जब अङ्गुष्ठ प्रमाण जीव का शरीर गरुणपुराण में लिखा है तो इसके लिए आपने यह साढ़े तीन हाथ की चारपाई क्यों दी ? इस पर वह अङ्गुष्ठ प्रमाण कहां लोटा २ फिरेगा ? और यह पांच हाथ की रजाई गद्दा क्यों दिया ? इसमें तो अङ्गुष्ठ प्रमाण शरीर उब जायगा और निकल भी नहीं सकेगा। जिस दिन जहां यह ओढ कर पड़ेगा वहीं दबा पड़ा रहेगा और इसे उठा कर उसके साथ कौन चलेगा ? कुली कितने दास किये जो रथ पर उठा उठा रक्खें और फिर सिर भी गोल मटर जितना होगा, फिर वे दस गज़ का साफा कैसे बांधेंगे ? और पैर भी छोटे छोटे होंगे फिर यह तेरह अंगुल का जूता वह कैसे पहिनेंगे ? वह तो सारे शरीर से जूते के पञ्जे ही में पड़े रहेंगे।'

भावज ने कहा-'भाई, हमसे बहस न करो, हमें करने दो।'

पुनः भाई ने अपनी भावज से कहा कि— ये रथ, हाथी, घोड़े बर्तन, वस्त्र और भोजन जो आपने महापात्र को कराये, ये तो सब भाई जी को पहुंचेंगे ही परन्तु हमारे भाई जी अफीम भी खाते थे सो आध पाव अफीम भी इन महाराज महापात्र जी को घोल कर पिलाओ जिससे उन्हें अफीम भी पहुंच जाय क्योंकि बिना अफीम के उन्हें बड़ा कष्ट होगा, यहां तक कि उन से तो उठा बैठा न जायगा।' भावज ने कहा—'यह तो ठीक है।' उसने आध पाव अफीम मंगा कर महापात्र से कहा-'महाराज,

इसे खाइये क्योंकि इसके बिना मेरे पति को बडा कष्ट होगा, नही तो मैंने जो कुछ दिया है सब फेर लूंगी।' पुन भाई ने कहा—'भौजाई, तुम तो भाई जी को बहुत प्यारी थी, यहां तक कि तुम एक क्षण भी भाई जी से अलाहिदा हो जाती थीं तो भाई जी को बडा कष्ट होता था, इसलिए तुम भी महापात्र के साथ जाओ, जिसमें उन्हें स्त्री भी मिल जाय, क्योंकि स्त्री के बिना भाई जी को बडा कष्ट होगा।'

बस, भावज की समझ में यह सब आडम्बर आगया और उसने महापात्र से सब वापिस लिया।

६४--एक आर्य्य बहू

एक आर्य्य बहू एक पौराणिक महाशय के घर व्याह कर गई तो पौराणिक महाशय के यहा पौराणिक प्रथा के अनुसार (जैसे कि अब भी देवियों में प्राय प्रत्येक स्थानों पर परछन होती है) परछन होनी थी, अत. उस बहू की सास मुहल्ला की स्त्रियो को बुलावा दे अपने बेटे और बहू की गाँठ जोर सम्पूर्ण स्त्रियों के सहित गाते बजाते हुये बेटे बहू को लेकर देवी के मन्दिर में पहुची। परन्तु देवी का मन्दिर विचित्र बना हुआ था, यानी देवी के मन्दिर के आगे दो पत्थर की बिल्लियो की तसवीरे अत्यन्त ही खूबसूरत बनी हुई थीं। ऐसा मालूम होता था कि मानों दोनो आपस में लड रही हैं। उससे कुछ ही दूर पर दो पत्थर के कुत्तों की तसवीरें उनसे भी अनोखी बनी थी। और ऐसा ज्ञान पडता था कि मानो कुत्ते अभी काटने को दौड उठते हैं। उससे कुछ ही पीछे दो पत्थर ही के शेरों की तसवीरें सब से निराली और बडी ही मनोहर बनी हुई थीं। शेर पूछ ऊपर को उठाये हुये इस भाति खडे थे मानों टूट कर आदमियों को अभी भक्षण किये लेते हैं। उस मन्दिर के

बाहर बिल्लियों की तसवीरों के पास ज्यों ही यह आर्य्य बहू पहुंची तो अपने पति का डुपट्टा जिसमें कि इसकी गाँठ जुड़ी थी पकड़ कर खड़ी हो गई और भयभीत होकर अपनी सास से बोली कि—'हूं हू अम्मा, बिल्लियां खा जांयगी।' यह सुन सास ने उत्तर दिया कि—'बहू तू कैसा लड़कपन करती है, पत्थर की बिल्लिया कहीं काटती हैं?' बहू चुप हो कुछ आगे बढ़ी त्योंही उसे दो कुत्तों की तसवीरें नजर आईं। बस बहू फिर गाठ जुरे डुपट्टे को पकड कर खडी हो गई और पहले से भी विशेष डरकर सास से बोली– अरी अम्मा, कुत्ते फाड खायगे।' सास ने कहा—'बहू, क्या तू पगली है, भला कहीं पत्थर के कुत्ते भी काटा करते हैं?' यह सुन चुप की हो कुछ आगे बढी कि कुछ हो दूर पर उसे दो शेरों की तसवीरें दृष्टि पड़ीं, अत बहू पुन अपने पति का गाठवाला डुपट्टा पकड़ कर खड़ी हो डर कर ओर और रोने लगी और अपनी सास से कहा कि–'अरी अम्मा, ये शेर मुझे खा जायगे।' इस पर सास ने बहू को डाटा और कहा कि– तू बड़ी पागल है, मैं दो बेर कह चुकी कि पत्थर की तसवीरें हैं, यह काट नहीं सकतीं और न ये शेर खा सकते हैं।' सास बहू में झक्झट होते हुआते बहू जब मन्दिर के भीतर देवियों के पास पहुंची तो उसकी सास ने देवियों की पूजा कर अपने बेटे और बहू से कहा कि–'इन देवियों के पैरों गिरो, यही तुम्हें बेटा देंगी।' यह सुन कर आर्य्य बहू से न रहा गया और यह अपनी सास से बोली कि–'माँ जब कि पत्थर की बिल्लियों ने मुझे बिल्ली बन कर नहीं काटा, और पत्थर के कुत्तों ने कुत्ते बन कर नहीं काटा और न पत्थर के शेरों ने शेर हो बन कर खाया तो यह पत्थर की देवी मुझे कैसे बेटा देगी जो हम इनके पैरों गिरें?' ठीक है—

जटिल्लों पिलिलों ने ऐसा किया ।
कि मक्खी को मलमल के भैसा किया ॥

९५—अल्लामियां अकेले

एक बार एक पण्डित जी एक मुसलमान साहब को अपनी कथा वार्त्ता सुना कर उससे बोले कि-'चलो यार, तुम्हें हम वैकुण्ठ का तमाशा दिखा लावें।' मुसलमान साहब ने कहा-'चलिये।' तब तो पण्डितजी ने मुसलमान साहब से कहा—'मीचो अपनी आँख' और पण्डितजी भी आंख मीच कुछ जपते रहे कि थोड़ी ही देर में पण्डितजी साहब मये उस मुसलमान भाई के वैकुण्ठ पहुचे । ये दोनों वैकुण्ठ में एक स्थान पर खड़े थे कि थोड़ी देर के बाद वहा से एक सवारी करोड़ो आदमियों के साथ बड़े धूम धाम से निकली एक पुरुष सिंहासन पर बैठा हुआ था, ऊपर चँवरें हिल रही थीं, बाजे गाजे घटा घड़ियाल आदि साथ बजते चले जाते थे। मुसलमान साहब ने कहा—'यह क्या है।' ये कौन साहब गये ?' पंडित जी ने कहा—'यह रामचन्द्र जी महाराज हैं।' पुनः थोड़ी ही देर के बाद एक और सवारी निकली। इसके साथ भी लाखों आदमी थे और कई आदमी बीच में तख्त पर सेहरा डाले मुथन्ना पहिरे हुए बैठे थे, ऊपर से चँवरें हिल रही थीं। यह देख मुसलमान साहब ने पूछा—'पण्डितजी, यह कौन हैं ?' पण्डितजी ने कहा—'यह आपके हजरत मोहम्मद साहब और गाजीमियां हज़रत मूसा वगैरा हैं।' पुनः थोड़ी ही देर के बाद एक और सवारी निकली और इसके साथ भी हज़ारों आदमी थे। यह भी एक तख्त पर सवार, चँवरें हिलती हुई चले गये। मुसलमान साहब ने कहा-'पण्डितजी, ये कौन हैं?'

पण्डितजी ने कहा—'यह हजरत ईसा मसीह हैं।' इसके बाद एक बुड्ढा सा मनुष्य दाढ़ी रखाये हुए एक मरी हुई दुबली घुडिया पर सवार अकेला निकला। जब यह भी निकल गया तो मुसलमान साहब ने पूछा—'पण्डितजी साहब यह कौन थे?' पण्डितजी ने उत्तर दिया—'अल्ला मियां थे।' मुसलमान साहब ने कहा—'यह कैसा कि रामचन्द्र के साथ इतने आदमी और हजरत मोहम्मद साहब के साथ इतने और हजरत ईसा मसीह के साथ इतने और अल्लामियां अकेले?' पण्डितजी ने उत्तर दिया—'भाई साहब, दुनिया मर्दुम परस्त हो गई है दुनिया के जितने आदमी थे वे सब उनके साथ हो गये, इस लिए अल्लामियां अकेले रह गये।'

*मर्दुम परस्तों के कारण परमेश्वर की इबादत या प्रार्थना या परमेश्वर को सबों ने भुला दिया।

१६—तत्त्वपदार्थ की पुडिया

एक पण्डित १६ वर्ष काशी में अध्ययन करते रहे। एक दिन पण्डितजी एक वैद्यराज के पास पहुंचे और कुछ देर बैठे रहे तो बैठे बैठे क्या देखते रहे कि वैद्यराज के पास जितने रोगी आते हैं, वैद्यराज प्रथम सभी को जुलाब दिया करते हैं। पण्डित जी ने सोचा कि अगर संसार में कोई तत्त्व पदार्थ है तो यही जुलाब है। बस पण्डित जी वैद्यराज से दो तीन जुलाब कोई सनाय का, कोई अण्डी के तेल का, कोई जमाल-गोटे का सीख अपने घर को चले आये। इनके गांव में आते ही यह हल्ला मच गया कि अमुक पण्डित १६ वर्ष काशी में पढ़ कर लौटा है और इधर पण्डितजी ने भी ग्रामवालों से यह कह दिया कि हम एक ऐसी तत्त्व पदार्थ की पुडिया सीख आये

यह सोच शत्रु के अफसरों ने एक अपना जासूस इस राजा की यह नई कवायद देखने को भेजा। जासूस ने आकर देखा कि सबों ने जुल्लाब ले रक्खा है और सबों को दस्त आ रहे हैं। जासूस ने जाकर अपने दल में ज्योंही यह वृत्तान्त कहा त्योंही उस सेना ने चढ़कर इसका विजय किया।

सच है, अन्ध विश्वास से नाश होता है। हमारे यहा भी, सोमनाथ पट्टन को विदेशियो ने तत्त्वपदार्थ की पुडिया के ही निश्चय से तोड़ा! किसी कवि ने सच कहा है—

न भूत पूर्वं न कदापि दृष्टा न श्रूयते हेममयी कुरंगी।

तथाऽपितृष्णा रघुनंदनस्य विनाशकाले विपरीत बुद्धि ॥

१७—परिहास से दुर्दशा

एक ब्राह्मण अपने घर में तीन भाई थे। उनमें जेठा भाई कुछ पढ़ा लिखा था, इस लिये कचेहरी का काम किया करता था, और दो भाई कुछ पढ़े लिखे न थे इससे वे काश्तकारी का काम किया करते थे। एकदिन इन मूर्ख दोनों भाइयों ने परस्पर सलाह की कि— भाईजी बड़े चालाक हैं, आप तो दिन भर कचेहरी का काम करते, छाया में रहते हैं और हम से तुम से खेतो का काम लेते हैं। अब कल से हम तुम कचेहरी चलं करेंगे और भाई साहब से कहेंगे कि तुम हल जोतने जाओ।' जब सायंकाल को ये दोनो मूर्ख जङ्गल से आये और बड़ा भाई कचेहरी से आया तो दोनों ने बड़े भाई से कहा—भाई साहब कल आप हल ले जाय और कल से हम में से एक कचेहरी जायगा। बड़े भाई ने बहुत कुछ समझाया और कहा कि—'तुम एक अक्षर पढे नही, कचेहरी जाकर क्या करोगे?' इन्होंने कहा,— 'कुछ हो, हम में से कल से एक कचेहरी जायगा।' बड़े भाई

ने बहुत समझाया पर ये दोनों दूसरे दिन हल न ले गये। जब बड़े भाई ने बैल बंधे देखे तो वह बेचारा बैल जोत हल चलाने चला गया। अब इन दोनों में से मंझला भाई आज अपने बड़े भाई की पोशाक पहिन कचेहरी पहुंचा। वहाँ बादशाह मुसलमान था और उस समय बादशाह साहब बाल बनवा रहे थे। यह मूर्ख बादशाह को देख खूब ही खिलखिला कर हँसने लगा। बादशाह ने अपने आदमियों से कहा—'यह कौन शख्स है? इसको यहां लाओ।' और बादशाह ने उससे पूछा—तुम एकाएक क्यों हँसे?', इसने कहा कि— हमें तुम्हारा कलींदा सा सिर देख यह ख्याल हुआ कि अगर आपका कोई सिर काट डाले तो क्या पकड़ के उठावें, क्योंकि आपके चोटी चोटी तो है ही नहीं।' बादशाह ने यह गुस्ताखी देख उसे उसी समय जेल भेज दिया और कहा इसका मुकद्दमा दूसरे दिन करूंगा। परन्तु दूसरे दिन उस मूर्ख का छोटा भाई भी पहुंचा। जब यह पहुंचा तो बादशाह ने पूछा—'तुम कौन हो? इसने कहा—'हुजूर हम उसके भाई हैं जिसको आपने कल कैद किया है।' तब तो बादशाह ने कहा—'क्यों जी तुम्हारा भाई बड़ा ही बेवकूफ है, मैं कल हजामत बनवा रहा था कि इतने में तुम्हारा भाई आया और एकाएक खड़ा होकर हँसने लगा। हमने उसे बुलवा कर पूछा कि तुम क्यों हँसे? उसने जवाब दिया कि मैं इस लिये हँसा कि अगर आप का कोई सिर काट डाले तो चोटी तो आप के है ही नहीं, क्या पकड़ के उठावें।' यह सुन यह दूसरा मूर्ख बोला कि– हुजूर वह था मूर्ख, अगर सिर में चोटी नहीं तो मुंह में लाठी घुसेड़ के उठा ले? बादशाह ने इस बेवकूफ को भी उसी के साथ जेल भेज दिया। अब तो तीसरे दिन उन दोनों मूर्खों का बड़ा भाई जो रोज कचेहरी में जाया करता था पहुंचा और बादशाह को सलाम

करके और बात चीत कर के मौका पा बोला कि–'हुजूर, आपके यहा हमारे ही दो बैल कैद हैं, जिन से दो हल बन्द है। बादशाह ने कहा कि—आज, क्या आप भी पागल हो गये है, कैसी बातें करते हो ? कही दो बैलों से दो हल बन्द हुआ करते हैं?' इन्होने कहा—'हुजुर, वह इसी किस्म के बैल है।' तब तो इन्हो ने उनकी मूर्खता का सारा समाचार वर्णन किया कि इस इस तरह उन दोनों मूर्खोंने मुझे हल जोतने को भेजा और उन दोनो ने आपकी खिदमत में आकर यह गुस्ताखी की। बादशाह ने उन्हें मूर्ख जान छोड दिया।

मूरख का मुख वम्ब है, निकसत वचन भुअग।
ताकी औषधि मौन है, विष नहिं व्यापत अग॥

८६--बहुत चालाकी से सर्वस्व नाश

एक स्थान से चार आदमी वाहर व्यापार के लिये निकले। कुछ दिन वाहर रह कर चारों ने अच्छा धनोपार्जन किया। जिस समय वे चारो घर को लौटे तो मार्ग में एक स्थान पर वे रात में ठहर गये। अब जिस समय भोजन भाजन की फिक्र हुई तो चारों की यह सम्मति पडी कि दो आदमी जाकर भोजन ले आवें। अत उनमें से दो आदमी भोजन लेने गये और दो स्थान पर असवाब ताकने में रहे। परन्तु अब वहा यह दशा हुई कि जो दो आदमी भोजन लेने गये उन्होंने तो यह सम्मति की कि—'यार ऐसा भोजन ले चलो कि जिस में उस भोजन को खाकर वे दोनों आदमी मर जाय और उनका द्रव्य हम तुम आधा आधा वाट लें!' यह सोच विष के लड्डू ले आये और इन [illegible] ने यह सम्मति की कि—'' ज्योंही भोजन [illegible] नों को जान से मार दो

दोनों का द्रव्य हम तुम दोनों बाट लें।' निदान उन दोनों के आते ही इन स्थानिक दोनो ने उन्हें तलवार से मार दिया और उनका द्रव्य ले चलने की तैयारी की। जब चलने लगे तो सोचा कि यार यह भोजन जो वे दोनो लाये थे रक्खा है, इस लिये आओ प्रथम भोजन कर लें फिर चलें। परन्तु भोजन में तो वहां विष के लड्डू थे। ज्योंही उन दोनो ने वे लड्डू खाये कि कुछ देर के बाद दोनो सो गये।

अब आप सोच लें कि चालाकी से क्या परिणाम निकला?

९९--अभ्यास

एक गडेरिये के पास दो बडे शिकारी कुत्ते थे। गडेरिया रोज उन्हें दो चार कोस दौडाता था और खाने को उन्हें साधारण ही बेभड की रोटी और मट्ठा दिया करता था। एक साहब बहादुर के पास भी दो कुत्ते थे जिनको कि साहब बहादुर रोज कलिया मगा मगा खिलाया करते थे और उनको बडी सजावट के साथ रक्खा करते थे। एक दिन गडेरिये के कुत्तों की प्रशंसा सुन कर कि वे बडे शिकारी हैं, साहब ने गडेरिये को बुला कर कहा'-शिकार खेलने मे टुम अपने कुट्टे हमारे कुट्टों के साठ छोडोगे?" गडेरिये ने कहा हाँ और अपने कुत्ते ला साहब बहादुर के साथ छोडे। गडेरिये के कुत्ते साहब बहादुर के कुत्तों से आगे निकल गये। यह देख साहब बहादुर बड़े शरमाये और गडेरिये से बोले कि- वल गडेरिया, टुम अपने कुट्टों को क्या खिलाटा है?" गडेरिये ने जवाब दिया कि बेभड की रोटी और मट्ठा" साहब बहादुर ने जाच कर के देखा तो गडेरिया वास्तविक में बेभड की रोटी और मट्ठा ही खिलाता था। साहब बहादुर ने गडेरिये से कहा कि— 'टुम अपने कुट्टे हमको देडे।' गडेरिये ने कहा- हम अपने कुत्ते

हुजूर रो कभी नही द सकते ।' तब साहब बहादुर ने कहा—'अच्छा' अगर तुम डोनों कुट्टे नहीं देटा टो एक कुट्टा हमारे कुट्टे के साट बडल टो ।' गडेरिये ने एक कुत्ता बदल दिया। साहब का ख्याल था कि यह कुत्ता जब गडेरिये के यहाँ केवल वेफड की रोटी और मट्ठा पाता है, तब तो इतना शिकारी है और जब रोज़ कलिया पायेगा तो बडा शिकारी हो जायगा । बस, साहब बहादुर कुत्ते को ले जाकर कलिया खिलाने लगे, लेकिन कुत्ता साहब बहादुर के यहा जंजीर में बंधा रहता था और गडेरिया साहब बहादुर के कुत्ते को अपने कुत्तों के साथ रोज दो चार कोस दौडाना और शिकार को तोड़ना सिखलाता रहा । कुछ अरसे के बाद साहब बहादुर ने गडेरिये से कहा कि—'अब टुम हमारे कुट्टों के साठ अपने कुट्टे डो ।' गडेरिये ने कुत्ते छोडे तो गडेरिये के कुत्ते फिर आगे निकल गये । साहब फिर भी बडे शरमिन्दा हुये और गडेरिये को कुछ देकर उसका दूसरा कुत्ता भी उन्हीं ने ले लिया और दोनों कुत्तों को खूब कलिया वगैरा खिला तैयार किया । लेकिन गडेरिया साहब के कुत्ता को ले रोज दौडाना और शिकार को दबोचना सिखाता रहा । कुछ दिन में साहब ने गडेरिये को बुला कर कहा कि— अच्छा टुम अब अपने कुट्टों को हमारे कुट्टों के साठ छोडो। परन्तु फिर भी गडेरिये ने ज्योंही अपने कुत्ते छोडे, तो उसके कुत्ते आगे निकल गये । सच है—

अभ्यास सदृशं नैव लोकेऽस्मिन्हितसाधनम् ।
अतः स एक कर्तव्यः सर्वदा साधु वर्त्मना ॥

१००—यथा राजा तथा प्रजा

एक राजा के यहाँ एक दिन एक पण्डित कहीं से पधारे

राजा ने पंडितजी से पूछा कि—'महाराज, इस समय हमारी एक घोडी और गाय दोनों गर्भिणी हैं, आप बतावें कि दोनों क्या ब्यायेंगी ?' पंडित ने उत्तर दिया कि—'महाराज, गाय बछड़ा और घोडी बछेडा ब्यायेगी। पंडित उनके ब्याने के समय तक राजा के ही यहाँ ठहरे रहे। जिस समय वे दोनों ब्यायीं तो राजा के कर्मचारियों ने बछेडे को उठा कर गौ के नीचे और बछडे को उठा कर घोडी के नीचे कर दिया और राजा साहब को खबर दी कि—'महाराज, आपकी गाय बछेडा और घोडी बछडा ब्यायी है, आप चल कर देख लें।' राजा ने जाकर देखा तो गाय के नीचे बछेडा और घोडी के नीचे बछडा था। राजा ने कहा— पण्डितजी आप तो कहते थे कि गाय बछडा और घोडी बछेडा ब्यायेगी किन्तु यहा तो उलटा हुआ। अतः अब आप को एक कौडी भी नहीं दी जायगी और आप अब हमारे राज्य से निकल जाइये।' पण्डितजी ने सोचा कि आखिर तो अब हम राज्य से जाते ही हैं लाओ हमारे कपड़े बहुत मैले हो गये हैं, उन्हें तो धुलालें। अतः उन्हों ने अपने कपड़े धोबी के यहाँ धुलने को डाले। धोबी कई दिन तक कपडा ही देने न आया। जब पंडितजी उस धोबी के यहा अपने कपड़े मागने गये तो उसने कहा— महाराज, वे कपडे तो मैं नदी में धोने गया था सो पानी में आग लगने से जल गये।' यह सुन पंडित ने राजा के यहा फरियाद की। राजा ने धोबी को बुला कर कहा—'क्योंरे, तू पंडित जी के कपडे क्यों नहीं देता ?' धोबी ने कहा—'सरकार, मैं पंडित के कपडे नदी में धोने ले गया था सो नदी के पानी में आग लगने के कारण कपडे जल गये।' राजा ने कहा—'क्योंरे, कहीं पानी में भी आग लगती है ?' तब तो धोबी ने कहा—

अश्वन्या जायते वन्छा कामधेनु तुरंगमा ।
नद्या जायते वन्हिः यथा राजा तथा प्रजा ॥

"महाराज, अगर घोड़ी बछड़ा ब्या सकती है और गौ बछेड़ा ब्या सकती है तो नदी में भी आग लग सकती है।"

बस, राजा ने समझ कर पण्डित को प्रतिष्ठापूर्वक विदा किया और धोबी ने उन के कपड़े भी देदिये।

१०१—आशा में निराशा

एक पुरुष सन के वृक्षों को बड़ा सोहावना और उनके पुष्पों को सुवर्ण-कान्ति देख इस प्रयोजन से उनकी सेवा करने लगा कि जब ये वृक्ष इतने खूबसूरत हैं और इनके पुष्पों की कान्ति सुवर्ण के समान है तो जाने इनके फल कैसे होंगे? परन्तु वहाँ जब सन के वृक्षों के फल पुष्ट हुये तो हवा चलने पर वे छुनछुनाने लगे। यह देख उस पुरुष ने कहा—

सुवर्ण सदृश पुष्प फले रत्नं भाविष्यति ।
आशया सेवते वृक्ष पश्चात् छुनछुनायते ॥

१०२—बुद्धि और भाग्य

एक बार बुद्धि और भाग्य में झगड़ा हुआ। बुद्धि कहती थी मैं बड़ी और भाग्य कहता था मैं बड़ा। बुद्धि ने भाग्य से कहा कि—'यदि तू बड़ा है तो यह गड़ेरिया जो वन में भेड़ें चरा रहा है, इसे बिना मेरी सहायता के तू बादशाह बना दे तो मैं मान लूँगी कि तू बड़ा है।' यह सुन भाग्य ने उसको बादशाह बनाने का प्रयत्न प्रारम्भ किया। भाग्य ने एक बहुमूल्य खड़ाऊँ का जोड़ा जिसमें लाखों रुपये के जवाहिरात जड़े हुये थे लाकर गड़रिये के आगे रख दिया। गड़रिया उस को पहिन कर फिरने

लगा। फिर भाग्य ने एक सौदागर को वहां पहुंचा दिया। सौदागर उन खड़ाउओं को देख चकित हो गया और गड़रिये से बोला कि— "तुम खड़ाऊँ का जोड़ा बेचोगे ?" गड़रिये ने कहा—"ले लो।" सौदागर ने कहा—"क्या दाम लोगे ?" गड़रिये ने कहा—"और दाम क्या बताऊँ मुझे रोज रोटी खाने के लिए गांव में जाना पड़ता है अगर तुम दो मन भुने चने इस खड़ाऊँ के जोड़े की कीमत दे दो तो मैं उन्हें चबा कर भेड़ों का दूध पी लिया करूँगा और गाँव जाने के श्रम से छूट जाऊँगा।" अभिप्राय यह है कि इस दुर्बुद्धि गड़रिये ने ऐसी बहुमूल्य खड़ाऊँ जिसमें एक एक हीरा लाखों रुपये का था दो मन भुने चनों में बेच डाली। यह देख कर भाग्य ने और बल दिया, उस सौदागर को एक बादशाह के दर्बार में पहुंचा दिया जिस समय वहाँ सौदागर ने खड़ाऊ बादशाह के आगे रक्खी बादशाह देख कर चकित हो गया और उसने सौदागर से पूछा कि—"तुमने यह खड़ाऊ का जोड़ा कहां से लिया ?" सौदागर ने जवाब दिया कि—"एक बादशाह मेरा मित्र है उसने ये खड़ाऊ मुझे दी हैं।" बादशाह ने पूछा—"क्या उस बादशाह के पास ऐसी और खड़ाऊं हैं।" सौदागर ने उत्तर दिया कि—"हां हैं।" बादशाह ने पूछा—"क्या उस बादशाह के कोई लड़का भी है ?" सौदागर ने कहा—"हां उसके लड़का भी है।" यह सुन कर बादशाह ने कहा—"जनाब मेरी लड़की की सगाई उस बादशाह के लड़के से करा दो।" यह सब बातें तो भाग्य के बल से हुई किन्तु सौदागर को बादशाह की पिछली बात सुन कर बड़ा आश्चर्य हुआ, क्योंकि उसे ज्ञात था कि खड़ाऊँ का जोड़ा तो मैंने गड़रिये से लिया है न कोई बादशाह है, न बादशाह का लड़का। परन्तु इस झूठ बात के मुंह से निकल जाने से उसने सोचा कि अगर इस समय मैं अपने

झूठ का भेद खोलता हूं तो बादशाह न मालूम क्या दण्ड देवेगा। यह ख्याल कर उसने विचार किया कि जिस तरह हो सके बादशाह के शहर से निकल चलना चाहिये। अत उसने बादशाह से कहा कि— 'मैं आपकी लड़की की सगाई करने के लिए जाता हूं।' यह कह जिस ओर से वह आया था उसी ओर को पुन. रवाना हुआ। जब वह उस स्थान पर पहुंचा जहां उसने गडरिये को देखा था तो क्या देखता है कि वह गडरिया उससे विशेष मूल्य का खड़ाऊं का जोड़ा पहिन रहा है सौदागर यह देख हैरान हो गया। उसने सोचा कि यह कोई सिद्ध पुरुष है जिसको इस प्रकार की वस्तुयें कुदरत से प्राप्त हो जाती हैं। उसने सोचा कि यहां ठहर कर इस का हाल मालूम कर लेना चाहिये। यह सोच कर उसने वहां डेरे लगा दिये। उसके पास तांबा लदा हुआ था, उसे उतार कर उसने वृक्ष के नीचे एक ओर रख दिया। जब दोपहर हुआ तो गड़रिया धूप का मारा उस वृक्ष के नीचे आया जहां तांबे के ढेर पड़े हुए थे वह उन ढेर के सहारे अपना सिर लगा कर सो गया। उस के तकिया लगाने से भाग्य ने उस तांबे को सोना कर दिया जब सौदागर ने यह देखा तब उसे ख्याल आया कि जिस मनुष्य के सिर लगाने से तांबा सोना हो जाता है उसको बादशाह बनाना कौन बड़ी बात है। यह सोचकर सौदागरने कुछ गांव मोल ले लिये और उन गावों में दुर्ग बनाना प्रारम्भ कर दिया और कुछ सेना भी रख ली। जब सब सामान तैयार हो गया तब उस गडरिये को पकड़ कर दुर्ग में ले गया और उसे अच्छे बादशाही कपड़े पहना दिये। मन्त्री सेवक आदि सभी रख दिये। पुनः उस बादशाह को चिट्ठी लिखी कि—"हमारे बादशाह ने आपकी लड़की की सगाई स्वीकार कर ली है जो तिथि आप नियत करें बरात उसी दिन पहुंच जाय।' बादशाह

ने नियत तिथि कर लिख भेजा। इधर व्याह की तैयारिया होने लगीं। एक दिन जब दर्बार लगा हुआ था सारे मन्त्री आदि बैठे हुये थे गडरिया बादशाही तख्त पर तकिया लगाये बादशाह बना बैठा था उस समय गडरिये ने सौदागर से कहा कि 'तुम मुझे छोड दो देखो मेरी भेंडे किसी के खेत मे चली जायगी तो वह मुझे पीटेगा।' यह सुन कर सब लोग हंस पडे और सौदागर दिल में सोचने लगा, इसका क्या इलाज किया जाय। कहीं उस बादशाह से इसने ऐसा कह दिया तो मैं बे प्रयोजन मारा जाऊगा। पुन सौदागर ने उस गडरिये से कहा कि–' अगर तुम फिर कभी ऐसे शब्द कहोगे तो तुम्हें तलवार से मार दूगा, जो कुछ कहना हो मेरे कान मे कहना। निदान व्याह की तिथी समीप आगई। सौदागर बरात लेकर रवाना हुआ। जब बादशाह के शहर के समीप आ गया और उधर से बादशाह का मंत्री बहुत से कामदारों और सेना के सहित अगवानी(पेशवाई) को आया तो उन्हें देख कर गडरिये को खयाल आया कि शायद मेरी भेडें उनके खेत में जा पडीं और ये मेरे पकड़ने को आये हैं परन्तु बात कान में कहे जाने के कारण किसी को विदित न हुई और लोगों ने सौदागर से पूछा कि– 'शहजादे साहब क्या कहते हैं?' सौदागरने जवाब दिया-"जितने मनुष्य अगवानी को आये हैं सबको पाच पाच लाख रुपया दिया जाय।' और सबको पाँच पाच लाख रुपया दिया गया। शहर में प्रसिद्ध होगया कि एक बडे भारी बादशाह का लडका व्याह के लिए आया है जो प्रत्येक पुरुष को लाखो रुपये इनाम देता है सैकडो हजारो का नाम ही नहीं जानता। बादशाह भी डरा कि मैंने बडे भारी बादशाह से सम्बन्ध जोड लिया है परमेश्वर प्रतिष्ठा रक्खे। उस गडरिये का व्याह बादशाह की लडकी से हो गया।

यहां तक तो बुद्धिमान सौदागर के सिलसिले से भाग्य कृतकार्य हुई। परन्तु रात को जब गड़ेरिया अकेला बादशाही महल में सोया और वहां झाड फानूस लैम्प जलते देखे तो इसको ख्याल आया कि जंगल में जो भूतों की आग सुनी थी वह यही है। मैं इसमें जल कर मर जाऊंगा। वह गडेरिया यह सोच ही रहा था कि इतने में बादशाह की लड़की गडेरिये की तरफ आई और जब उसने जेवरों की आवाज सुनी तो उसे ख्याल आया कि कोई चुडैल मेरे मारने के वास्ते आ रही है। यह सोच कर वह झटपट एक दर्वाज़े की ओट में छिप गया। शाहजादी ने देखा कि शाहज़ादा यहा नहीं है, वह दूसरे कमरे में चली गई। उसके जाते ही इसे ख्याल आया कि अभी एक चुडैल से बचा हूं न मालूम यहाँ कितनी २ और चुडैलें आवें, इस लिये यहा से भाग चलना चाहिये। यह सोच ही रहा था कि उसे एक जीना ऊपर की तरफ देख पडा। वह झट ऊपर चढ गया और उसने एक तरफ़ छज्जे को हाथ डाल कर नीचे कूद कर भागने का इरादा किया। उस समय अक्ल ने भाग्य से कहा कि—'देख, तेरे बनाने से यह बादशाह न बना बल्कि अब गिर कर मरेगा।'

समाने हस्त पादादौ दैवाऽधीने च वैभवे।
यो निन्दा विन्दते नित्य समूर्ख इति कथ्यते॥

१०३—नाक की ओट में परमेश्वर

दक्षिण देश की ओर प्रथम राजाओ के यहा नाक, कान, हस्त पादादि छेदन का दण्ड दिया जाया करता था इसी प्रथा के अनुसार एक बार वहा के एक अपराधी को नासिक छेदन का दण्ड दिया गया। वह अपराधी राजा के फाटक से निकलते

ही कूद कूद कर नाचने और तालियां पीट पीट बड़ा ही प्रसन्न होने लगा। लोगों ने पूछा—'तू इतना प्रसन्न क्यों होता है?' उसने कहा कि—"नाक की ओट में परमेश्वर था, सो मुझे तो नाक कटने से परमेश्वर दीखने लगा।" इस प्रकार नाच २ कर इसने नाक कटाने पर कई मनुष्यों को तैयार किया। इसने कहा 'जिस समय तुम नाक कटा लोगे तुम्हें परमेश्वर दीखेगा।' लोगों ने विश्वास पर आ नाकें कटा लीं। इस एक नकटे नाच नेवाले ने उन लोगों से कहा कि—"आखिर तो अब आप लोगों की नाकें कट ही गईं इस लिए तुम भी नाचने लगो और कह दो कि हमें भी परमेश्वर दीखने लगा नहीं तो लोक में बड़ी निन्दा होगी।' यह सुन वे कई मनुष्य नाचने और यह कहने लगे कि हमें भी नाक कटने से परमेश्वर दीखने लगा। इस प्रकार होते २ चार हजार नकटे मनुष्यों का समुदाय बन गया एक बार वे नकटे नाचते २ एक राज्य में पहुंचे तो राजा को खबर मिली कि चार हजार नकटों का झुण्ड इस भांति नाचता फिरता है और वे कहते हैं कि नाक की ओट में परमेश्वर था सो अब दीखने लगा है अतः राजा ने उन सब को बुलाया और पूछा—तो वे सब राजा के सामने भी वैसे ही नाचने लगे और बोले कि-"महाराज हमें परमेश्वर दीखता है।' राजा ने कहा 'अगर ऐसा है तो हम भी नाक कटावेंगे।' अपने ज्योतिषी जी से राजा बोला कि—'ज्योतिषी जी, आप पत्रा मे देखिये कि हमारे नाक कटाने का मुहूर्त कब बनता है?' ज्योतिषी जी ने पत्रा निकाला और मीन मेख कर कहा—'आपके नाक कटाने को माघ बदी द्वीज को प्रात काल बहुत ही अच्छा है।' धन्य ज्योतिषी जी, आपके पत्रे में नाक कटाने का भी मुहूर्त निकला। इसके बाद वे नकटे चले गये। राजा के दीवान ने घर जा यह बात अपने बाप से कही। उसकी उमर अस्सी

वर्ष के करीब थी और वह ४० वर्ष तक राजा के यहां दीवान भी रह चुका था। बुड्ढा यह सुन दूसरे दिन राजा के यहां जाकर राजा को अभिवादन कर नाक कटाने का सम्पूर्ण वृत्तान्त पूछ बोला कि—"अन्नदाता, मैंने आपका नमक पानी तमाम उमर खाया है और मैं बुड्ढा भी हूं इसलिए आप प्रथम मुझे नाक कटा कर देख लेने दीजिये, अगर मुझे नाक कटाने पर परमेश्वर दीखे तो आप नाक कटाव नहीं तो आप न कटावें।" राजा के यह बात मन आ गई, अतः उसने ज्योतिषी जी से कहा कि—'ज्योतिषी जी, अब आप हमारे पुराने दीवानजी के नाक कटाने का मुहूर्त्त देखिये। ज्योतिषी जी ने पुनः पत्रा निकाल मीन, मेष, वृष, मिथुन कहा कि—'पुराने दीवानजी के नाक कान कटाने का मुहूर्त पौष सुदी पूर्णिमा को अच्छा है। राजा ने पौष सुदी पूर्णिमा को नकटों को बुला एकत्र किया और दीवान जी को बुलवा उसने कहा—'लो, इनका नाक काटो और परमेश्वर दिखाओ।' उनमें से एक ने बहुत तीक्ष्ण छुरा ले दीवानजी की नाक काट ली। दीवान जी बिचारे को बड़ा ही कष्ट हुआ। दीवान हाथ से कटी नाक पकड़ के रह गये। पुनः नकटों ने दीवान जी की नाक काट उनके कान में कहा कि—'अब आपकी नाक तो कट ही गई है इस लिये तुम भी नाचने कूदने लगो और यह कहने लगो कि हमें परमेश्वर दीखता है नहीं तो लोक में बड़ी निन्दा होगी।' दीवान जी ने राजा से साफ कह दिया कि—'ये सब बड़े ही धूर्त्त हैं, इन्होंने हजारों आदमियों की व्यर्थ नाकें काट डालीं, नाक कटने पर परमेश्वर परमेश्वर कुछ खाक नहीं दीखता बल्कि अभी नाक काट कर हमारे कान में इन्होंने ऐसा ऐसा कहा। राजा ने यह भेद जान उन सब को पकड़वा २ उचित दण्ड दे उस गिरोह को तोड़ा।

आप लोग दुनिया का प्रवाह देखिये कि कैसे कैसे मतों ने भी प्रचार पाया।

हरित भूमि तृण संकुलित, समुझि परै नहिं पन्थ।
जिमि पाखण्ड विवाद से, लुप्त होत सद्‌ ग्रन्थ॥

१०४—प्रकृति ही परमेश्वर के प्राप्त कराने में साधन है

एक बार एक ब्राह्मण के पचीस वर्ष की उम्र में लड़का पैदा हुआ, परन्तु लड़का पैदा होने के दूसरे ही दिन ब्राह्मण धनार्थ विदेश चला गया और पचीस वर्ष पर्यन्त वह ब्राह्मण विदेश में रहा, जब तक वहां इसका पुत्र पूर्ण युवा हो गया, उसके दाढ़ी मूछें सभी निकल आई। लड़के की बाप की चिट्ठी पत्री यद्यपि आया करती थी पर वह अपने बाप को पहिचानता नहीं था, क्योंकि इसके जन्म के दूसरे ही दिन बाप विदेश चला गया था और न बाप ही इसे पहिचानता था। एक दिन वह युवा लड़का अपने किसी कार्य्य के लिए किसी गाँव को गया और जब उस कार्य्य को करके लौटा तो दूर होने के कारण रात को किसी गाव में एक वैश्य के घर पर ठहर रहा। इतने में इसका बाप भी, जो पचीस वर्ष बाहर रहा था आकर उसी वैश्य के घर पर ठहर गया और रात भर ये पिता पुत्र एक ही साथ लेटे रहे, परन्तु एक दूसरे को न पहिचान सके। लड़का प्रातःकाल उठ कर घर चला आया और बाप झाड़े जङ्गल कुल्ला दन्तधावन करके कुछ देर में चला, इस कारण लड़के से कुछ देर बाद में आया। लड़का मकान के अन्दर पड़ा था। लड़के ने इसे देख कहा—'यह कौन, हमारे घर में घुसा आता है?' माता ने पुत्र से कहा—'बेटा, यह तो तुम्हारे

पिता हैं।' पुत्र ने यह सुन पिता को प्रणाम किया और कहा—'माँ, हम और पिताजी तो रात भर एक ही स्थान पर लेटे रहे, पर एक दूसरे को न पहिचान सके, आपके बतलाने से अब जाना है।' और यही शब्द बाप ने कहे।

इसका दार्ष्टान्त यह है कि इस जीवात्मा रूप पुत्र के जन्मते ही पिता परमात्मा अलग हो जाते हैं और यह सांसारिक प्रयत्नों में फँसा रहता है, परन्तु जिस प्रकार माता ने पुत्र को पिता का ज्ञान कराया था, इसी भाँति जब प्रकृति माता पुत्र जीवात्मा को पिता परमात्मा का बोध कराती है तो यह तुरन्त उसे पहिचान लेता है जिसके लिए उपनिषद् तथा शास्त्रों में कहा है—

अनित्ये द्रव्यैः नाप्तवानस्मि नित्य मपितापुत्रादुभयो दृष्टत्वात्।

१०४—कलियुग में अधर्म ही फलता है

एक शहर में एक वैश्य की दूकान थी। वैश्य बेचारा बड़ा ही धर्मात्मा, सीधा और सच्चा तथा ईश्वरभक्त था। प्रातःकाल से उठ अपने नियम धर्म का पालन, सत्य बोलना, धर्म से जीविका करनी आदि आदि सेठजी में विचित्र गुण थे, परन्तु इस प्रकार के व्यवहार से सेठ जी की पैदा तो बहुत थोड़ी थी लेकिन सेठजी अपनी सद्वृत्ति और सतोष से सुखी रहा करते थे। कुछ काल के पश्चात् एक अहीर ने आकर सेठजी की दूकान के सामने जो एक दूसरी दुकान गिरी हुई पड़ी थी उसे किराय में ले ली। अहीर के पास उस समय केवल १॥) की कुल पूंजी थी। अहीर उसी दिन दो चार पैसे के बरतन भांडे कुम्हार के यहा से ला १।) रुपये का दूध लाकर उसमें उतना ही पानी मिला दूध बेचने लगा। इस प्रकार चौधरी साहब के तो उसी दिन दूने हुए। तीसरे दिन चौधरी साहब ने २॥) रु० का

दूध ला उतना ही पानी मिला दूध बेच डाला। अब तो चौधरी साहब के फिर भी दूने हुये। इस भांति कुछ ही दिन में चौधरी साहब मालामाल हो गये और थोड़े ही दिन पहले जहां चौधरी एक लंगोटी लगाये फिरते थे वहां अब उनके ठाठ ही निराले हो गये, यहां तक कि उस गिरी हुई दुकान को मोल ले चौधरी जी ने तिखण्डा खड़ा कर दिया और उनके बहुत से नौकर चाकर भी रहने लगे। सेठ जी यह दृश्य देख बड़े ही विस्मय को प्राप्त हुये और मन में कहने लगे कि लोग जो कहा करते हैं; क्या सचमुच कलियुग में अधर्म ही करने से सुख मिलता है? सेठ जी इन संकल्प विकल्पों ही में थे कि इतने में एक बड़े विद्वान् महात्मा उस ग्राम में पधारे। सेठ जी ने जब सुना कि यहां एक बड़े विद्वान् महात्मा आये हुये हैं तो सेठ जी ने महात्मा की शरण में आ उनको दण्ड प्रणाम कर कहा कि— महाराज, क्या कलियुग में अधर्म ही करने से सुख मिलता है? देखो हम नित्य प्रात काल उठ कर शौच दन्तधावन पञ्चयज्ञ का सेवन कभी किसी जीव को दुःख न देना, सत्य बोलना आदि आदि नेम धर्मों में ही दिन व्यतीत करते हैं सो हमें तो खाने भर को भी कठिनता से पैदा होता है और एक अहीर ने हमारी दूकान के आगे अभी थोड़े ही दिन से दूकान रक्खी है जिस समय उसने दूकान रक्खी थी, उसके पास कुल १।।) था, लेकिन ज्योंही उसने दूध में आधा पानी मिला मिला बेचना प्रारम्भ किया कि लाखों रुपये का धनी हो गया। इससे ज्ञात होता है कि आज कल अधर्म से ही उन्नति होती है।' महात्मा ने कहा—'सेठ जी हम इसका उत्तर तुम्हें आठ रोज के बाद देंगे।' और महात्मा ने सेठ जी से आठ हाथ का गहरा गढ़ा खोदवा कर सेठजी को उसके भीतर खड़ा किया और लोगों से कहा कि तुम लोग

कुये से पानी भर भर कर जरा इस गढे मे तो डालो' जिस समय जल सेठ जी के गाठों तक आया तो महात्मा ने पूछा—'कहो सेठ जी, आपको कुछ कष्ट तो नहीं मालूम होता।' सेठ जी ने कहा—'महाराज, अभी तो कोइ कष्ट नही मालूम देता।' पुन. महात्मा ने उस गढे मे दस बीस घडे पानी और छुडाये जब जल सेठ जी के कमर तक आया तो महात्मा ने सेठजी से कहा—'कहो सेठ जी, आपको कोई कष्ट तो नहीं ?' सेठ जी ने कहा—'कोई कष्ट नहीं ?' पुनः महात्मा ने फिर गढे मे और जल छुडवाया। जब जल सेठ की छाती तक आया तो फिर उनसे पूछा, पर सेठ ने फिर भी यही उत्तर दिया कि—'कोई कष्ट नहीं।' महात्मा ने फिर कुछ जल छुडवाया। जब सेठजी के कण्ठ तक जल आया तो महात्मा ने पूछा कि—'सेठ जी अब कहिये कोई कष्ट तो नहीं ?' सेठ जी ने कहा—'महाराज, कोई कष्ट नहीं।' अब आप लोग विचार लें कि कण्ठ तक जल से डूबा सेठ खडा है और कहता है कि—'कोई कष्ट नहीं।' परन्तु अबकी बार महात्मा ने ज्योंही दस बीस घडे गढे में और डलवाये कि त्योंही सेठ डूबने लगे और ऊवासांसी ले बोले—'महात्माजी, हमें शीघ्र इस गढे से निकालो नहीं तो दम निकलती है। महात्माजी ने सेठजी को निकाल कर उनसे कहा कि—"आप अपने प्रश्न का उत्तर समझ गये ?' सेठजी ने कहा "महाराज, नहीं समझे।' महात्माजी ने कहा—"जब आपको गाठों तक पानी आया और मैंने पूछा तो आपने कहा कि मुझे कोई कष्ट नहीं, पुन जब आपका कमर तक जल आया और मैंने पूछा तो आपने कहा 'मुझे कोई कष्ट नहीं' यहां तक कि आपके कण्ठ तक जल आ गया और १० ही घडे की कमी थी कि आप डूब जाते, पर आपने कहा मुझे कोई कष्ट नहीं।' इसी भांति उस शरीर के अब कण्ठ तक पाप भर आये हैं।

अब इसमें भी कमी नहीं, परन्तु तुमको वह सुखी मालूम पड़ता है और उसे भी नहीं जान पड़ता है।' किसी कविने क्या ही सत्य कहा है—

> अन्यायोपार्जित द्रव्य दशवर्षाणि तिष्ठति ।
> प्राप्ते एकादशे वर्षे समूलंच विनश्यति ॥
> अधर्मेणैधते तावत् ततो भद्राणि पश्यति ।
> ततः सपत्नान् जयति समूलस्तु विनश्यति ॥ मनु० ॥

१०६--खूबसूरती और बुद्धि

एक तहसीलदार बड़े ही बुद्धिमान थे यहां तक कि उनसे बड़े बड़े अफसर बड़े बड़े मामलों में राय लिया करते थे, लेकिन वे कुछ बदसूरत थे। यह देख साहब कलक्टर ने उनसे एक दिन मखौल किया कि—'क्यों तहसीलदार साहब, जिस समय खुदा के यहां खूबसूरती बंट रही थी तब आप कहां थे?' तहसीलदार ने उत्तर दिया— उस समय जहां बुद्धि बंट रही थी वहां था।' यह सुन कलेक्टर शरमिन्दा हो गये।

१०७--बच्चों को हमीं बुरा बनाते हैं

पैदा होने के समय सम्पूर्ण बच्चों की आत्मायें शुद्ध और पवित्र हुआ करती हैं, माँ बाप ही चाहे बच्चों को सत्यवक्ता बना दें चाहे चोर, चाहे साहु, चाहे व्यभिचारी, चाहे ब्रह्मचारी बना दें। यथा—

एक मनुष्य को कुछ झूठ बोलने तथा चाल से बात करने की बान थी, अतः उसके बच्चे की भी आदत वैसी ही पड़ने लगी। बाप ने सोचा कि बच्चा भी हमारा वैसा ही हुआ जाता है इस भय से उसने उसे उसकी ननसाल भेज दिया। जब कुछ

दिन के बाद यह पुरुष अपनी ससुराल बच्चों के पास गया तो इसने सोचा कि भला बच्चे की परीक्षा तो लें कि इसका झूठ बोलना कहा तक छूटा है? अत इसने कहा कि- बेटा आज गंगाजी में एक बडी भारी पहाडी फट गिरी।' बच्चा बोला कि—'दादा, छींटें तो मेरे ऊपर भी आई थीं।'

१०८--काठ का उल्लू

एक सेठने एक लोधे के हाथ अपना गाडी बैल अपने लडके की सवारी के लिए किसी गाँव को भेजा। वह गाँव सेठ के गाव से २० कोस की दूरी पर था और रास्ता १० कोस कच्चा और १० कोस पक्का था। गाडी बहुत दिन से ऊगी हुई न थी, इस कारण बोलती थी। पक्की सडक पर तो गाडी चर्र चर्र बोलती चली गई परन्तु कच्चे पर पहुची तो गाडी का बोलना बन्द हो गया। यह देख लोधे ने गाडी फौरन ही खडी कर दी और गाडी का बांस पकड कर रोने लगा, बोला- हाय तुमका का होइगा? अबही तक तो तुम ब्वालति बतलात अच्छी भली चली आइउ, अब न जाने तुम का का होइगा।' अतएव लोधे ने गाव के लोगो से पूछा कि-'क्यो भाई, कोई वैद्य भी इस गाव में रहता है?' लोगो ने कहा'- हाँ उस तरफ रहते हैं।' यह जाकर वैद्यराज के पास रोने लगा और बोला कि-'महाराज, मैं फलाने गाव से गाडी लैकै चलो सो १० कोस पक्की सडक सड़क तो नीके बोलति बतलात चली आई पर अब न जाने का होइगा जो वाहिका बचन बन्द होइगा।' वैद्यराज ने कहा कि-'नाडिका दिखाई भी कुछ है?' उसने कहा- महाराज, मोरे पास तो गाडी बैलवा छोडि और कुछ नहीं है।' तब वैद्यराज बोले कि-'अच्छा यदि हमने नाडिका भी देख दी तो जब तेरे पास पैसा नहीं है तो दवा काहे से करेगा?

इसमें एक तू बैल अपना बेच डाल कि जिसमें दवा के लिए भी दाम हो जाय और हमारा नजराना भी हो जाय।' इस प्रकार एक बैल तो वैद्यराज ने बेचवा डाला और गाडी के पास जाकर कहा कि आपकी गाडी मर गई। सो कुछ गोदान वैतरणी कराके लिया और थोडा सा फूस नीचे रख गाडी की भस्मक्रिया कराई। पुन वहा के पण्डितों ने दूसरा भी बैल बिकवा कर दशगात्र एकादशाह कराकर सब ले लिया और लोधाजी तेरहीं का दुपट्टा सिर में बाध आ बिराजे। उसे देख सेठजी ने पूछा—'गाडी बैल कहा छोडा ?' लोधा बोला—लालाजी, मैं यहा से गाडी लैके चल्यों सो १० कोस पक्की भर नौ नीके चालत बतलात उइ चली गई जो न घो पर पहुच्यौं सोई उनका वचन बन्द होइगा सोई वैद का लइके देखायउ, सो एक बैल बेचि के तौ गाडी की दवादारू औ वे के नज राने माँ दीन्हीं औ दूसरे से गाडी की भस्मक्रिया के दशगात्र एकादश के आइ गयउँ।'

१०१-एक के करने से क्या होगा ?

एक बार एक बादशाह ने अपने गाव में एक पक्के तालाब में जो बहुत पाक और साफ पडा था दूध भराने के लिये गाव भर के लोगो को जिनके यहा दूध होता था, आज्ञा दी कि एक एक घडा दूध आने अपने घर से भर उस तालाब में सब डाल आओ। सब लोगो ने अपने अपने घरो में यह ख्याल किया कि अगर हम एक घडा पानी का डाल आवेंगे तो तालाब भर में क्या जान पडेगा। निदान सब के सबों ने दूध के बजाय पानी ही छोडा और तालाब पानी से भर गया। जब बादशाह ने देखा तो लोगों की दशा देख चकित हो गया। इसी भाति यदि लोग कह दें कि एक से क्या होगा और इसी प्रकार दूसरा कह दे एक से क्या, और इसी प्रकार तीसरा

कह दे एक से क्या, गर्ज कि सभी इस भांति कह दें तो कभी कोई काम हो ही नहीं सकता।

११०–पल्लड झाड़

एक वैश्य रोज कथा सुनने को जाया करते थे एक रोज सेठ जी को कोई आवश्यकीय कार्य्य लगा इस कारण वे कथा में न जा सके, अतः उन्होंने अपने पुत्र से कहा कि—'बेटा आज फलां जगह कथा सुन आना।' लड़का कथा सुनने गया तो कथा में निकला कि यदि कहीं गौ खाती हो तो उसे न मारे। दूसरे दिन सेठ का लड़का दूकान पर बैठा था और अनायास गौ भी आकर सेठ की दूकान पर जो पल्लड़े में चावल रक्खे थे खाने लगी, लेकिन लड़के ने गौ को न मारा। इस लिये चावल कुछ बिखर गये और कुछ गौ खा गई। थोड़ी देर में सेठ आया और अपने बेटे से बोला—'क्यों रे ये चावल कैसे बिखरे पड़े हैं?' उसने कहा—'आपही ने तो कल कथा सुनने भेजा था, उसमें निकला था कि अगर गौ कहीं खाती हो तो उसे न मारे।' बाप ने कहा—'अरे बेवकूफ, अगर हम ऐसी कथा आज तक सुनते तो काहे को घर रहना और सुनो जब कथा सुनने गये तो चादर का कोना फैला दिया और जब चलने लगे तो वहीं झाड़ दिया और कह दिया कि पंडितजी यह लो अपनी कथा।'

मुक्ता फलैः किं मृगपक्षिणाञ्च मिष्टान्नपानं किमु गर्दभानाम्।
अन्धस्य दीपो बधिरस्य गीतं मूर्खस्य किं शास्त्रकथाप्रसंगः॥

१११–आज कल का तमस्सुक

मैं कि मीर शफी वल्द मीर भफी साकिन मौज़े ला मकान

स्ता हूं जो कि मुबलिग रुपया एक हजार अज राह जूती पैजार लाला रामअवतार से कर्ज लेकर न जरूरत वाहियात खुश-फान नेकजान आतिशबाजी में सर्फ कर डाले, लिहाजा करार वसद न करार बल्कि इन्कार उलटी कलम से लिखे देता हूं कि सनद रहे और वक्त जरूरत के काम न आवे जिसकी सचाई इस तरह से लगादी कि रुपये के बारह आने भी न जाने दूंगा, लाला साहब मौसूफ सख्त बेवकूफ का रुपया वसूल न हो तो उसको हिरासत से वसूल किये जावें।

एक मसला है—"धी के पूत किया व्योपार। सोरह से के रहे हजार। उसको बन्दा रैठा मार।" जिसकी मियाद इस तरह करार दी है कि माह गये और सन् रहे जिसके कातिब फर जात राम नाम खुदा जिसके कि गवाह सुलतान खां व बेईमान खां मुशफिक मेहरबान चूहे के कद्रदान करमफोड व मवक्ती के निशान दाम पिल्लह।

११२—मुडिया भाषा

एक बार एक वैश्यजी ने शहर में रुई का भाव तेज होने के कारण एक चिट्ठी अपने घर को इस मजमून की लिखी कि—"लाला तो अजमेर गये हमहू रुइ लीनि तुमहू रुई लेव और बडी वही को भेज देव।" लोगो ने वहा इस चिट्ठी को पढा कि—"लाला तो आजु मरि गये हमहू रोय लीन तुमहू रोय लेव और बडी बहू को भेज देव। बस यह पढ बडी बहू को भेज दिया। वह रोती हुई दूकान के आगे आ खडा हुई। सेठजी ने कहा—'यह क्या, यह क्यों?' तब तो जो लोग बहू के साथ थे उन्होने कहा—"लाला जी का तो देवलोक होगया।' लोगो ने कहा—"यह क्या बकते हो?" तो बहू के साथ के

कह दे एक से क्या, गर्ज कि सभी इस भाति कह दें तो कभी कोई काम हो ही नहीं सकता।

११०--पलड़ा झाड़

एक वैश्य रोज कथा सुनने को जाया करते थे एक रोज सेठ जी को कोई आवश्यकीय कार्य लगा इस कारण से कथा में न जा सके, अतः उन्होंने अपने पुत्र से कहा कि—'बेटा आज फलां जगह कथा सुन आना।' लड़का कथा सुनने गया तो कथा में निकला कि यदि कहीं गौ खाती हो तो उसे न मारे। दूसरे दिन सेठ का लड़का दूकान पर बैठा था, और अचानक गौ भी आकर सेठ की दूकान पर जो पलड़े में चावल रक्खे थे खाने लगी, लेकिन लड़के ने गौ को न मारा। इस लिये चावल कुछ बिखर गये और कुछ गौ खा गई। थोड़ी देर में सेठ आया और अपने बेटे से बोला—'क्यों रे ये चावल कैसे बिखरे पड़े हैं?' उसने कहा—'आपही ने तो कल, कथा सुनने भेजा था, उसमें निकला था कि अगर गौ कहीं खाती हो तो उसे न मारे।' बाप ने कहा—'अरे बेवकूफ, अगर हम ऐसी कथा आज तक सुनते तो काहे को घर रहना और सुनो जब कथा सुनने गये तो चादर का कोना फैला दिया और जब चलने लगे तो वहीं झाड़ दिया और कह दिया कि पंडितजी यह लो अपनी कथा।'

मुक्ता फले किं मृगपक्षिणानं मिष्टान्न पानं किमु गर्दभानाम्
अन्धस्य दीपो, बधिरस्य गानं मूर्खस्य किं शास्त्रकथाप्रसंगः॥

१११--आज कल का तमस्सुक

मैं कि मीर शफी पिसर मीर भाफी साकिन मौजे ला मका

का हू जो कि मुबलिग रुपया एक हजार अज राह जूती पेजार लाला रामअवतार से कर्ज लेकर न जरूरत व हियात खुरा फात नेकजान आतिशबाजी मे सर्फ कर टाले लेहाजा करार वसद न करार बल्कि इन्कार उलटी कलम से लिखे देता हूं कि सनद रहे और वक्त जरूरत के काम न आवे जिसकी सचाई इस तरह से लगादी कि रुपये के बारह आने भी न जाने दूगा, लाला साहब मौसूफ सगन बेवकूफ का रुपया वसूल न हो तो उसको हिरासत से वसूल किये जावें।

एक मसला है—"घी के पुन किया व्योपार। सोरह सै के रहे हजार। उसको बन्दा बैठा मार।" जिसकी मियाद इस तरह करार दी है कि माह गये और सन् रहे जिसके कातिब फर जाति राम नाम सत्ता जिसके कि गवाह सुल्तान खा व बेईमान खाँ मुशफिक मेहरबान चूहे के कदरदान करमफोड व मवक्ती के निशान दाम पिलह।

११२—मुडिया भाषा

एक बार एक वैश्यजी ने शहर में रुई का भाव तेज होने के कारण एक चिट्ठी अपने घर को इस मजमून की लिखी कि—"लाला तो अजमेर गये हमहू रुई लीनि तुमहु रुई लेव और बडी बही को भेज देव।" लोगो ने वहा इस चिट्ठी को पढा कि—'लाला तो आजु मरि गये हमहू रोय लीन तुमहु रोय लेव और बडी बहू को भेज देव। बस यह पढ बडी बहू को भेज दिया। वह रोती हुई दूकान के आगे आ खडा हुई। सेठजी ने कहा—'यह क्या, यह क्यो?' तब तो जो लोग बहू के साथ थे उन्होने कहा—"लाला जी का तो देवलोक होगया।' लोगो ने कहा—"यह क्या बकते हो!" तो बहू के साथ के

लोगो ने कहा—' यह लो अपना पत्र पढो ।" उन्होने कहा—' हमने तो यह लिखा था ।" उन्होने कहा—' हमने तो यह समझा था ।" सच है क्रूराक्षरा निष्ठुरा ।'

११३—अंग्रेजी की लियाक़त

एक गांव के एक बे पढे ज़िमीदार ने जिस के कुछ सीर वीर भी थी अपने लडके को औरो की देखादेखी अंग्रेजी पढाई परन्तु आप जानते हैं रईसो के लड़के भला ऐसे मन लगा कर कब पढते हैं । इन्होंने कुछ पढा और कुछ शहरो की हवा खाते रहे । थोडे दिन में यह बाबू साहब जब अपने घर आये तो वही अंग्रेजी ठाट कोट, पतलून, बूट, सिगरट पीते हुए रहने लगे । एक दिन इस जिमीदार के पास कुछ पढे लिखे मनुष्य और कुछ बे पढे इसके मित्र गण बैठे थे इतने में जिमीदार के बेटे ने ज्योंही आकर ' गुड मौर्निङ्ग' किया कि जिमीदार बोला कि—'भाई, हमारो लल्ला तो खूब अगरेजी पढि आओ ।' इस के पास के बैठनेवाले मनुष्य ने कहा कि—जब आप एक अक्षर भी अंगरेजी नही पढे तो आपको क्या मालूम कि यह लडका खूब अगरेजी पढ आया ।' जिमीदार ने कहा कि—"हम तो यहिसो जान्ति हैं कि वहु एक तौ कोटि और पतलून पहिरे है, दुसरे मुण्डा जूता पहिरे है तिसरे फकाफक सिगरट्ट पियति है, चौथे ठाडे मूतति है पंचये जूता पहिरे चौके चलो जाति है, हम तो जहा वहु पढति रहें सबु देखि आये हैं छठे नै सध्या, नै गायत्री, नै होम, नै यज्ञ नै देव नै पितर सबै कहतिहै कि परमेसुर के हुवे का का सबूतु है, परमेसुर हैं यें नाईं, अउ गिटपिट गिटपिट बोलनि है, नव गांव वालेन केहू का न र नाई बैठनि है , दसैं बिस्कुट खाति है, यहि सो हम जान्ति है कि जहु एमे एल्लु बी पासु है । ।"

कोऽन्य चूर पतलून दिव्य चुग्टा मुखे चचलमर्द्दितायम् ।
लेढीगुलाम शुभ मर्दीन याभू पथ मगं माम म्लानम् ॥

११४--उर्दू बीबी

एक तहसीलदार के नाम एक बार साहब कलेक्टर ने अपने पेशकार से एक हुकुमनामा लिखवाया कि—' फला तारीख को गंगानदी दरिया पर बीस या पचीस किश्तियें तैयार रक्खें और मल्लाहों के झोपड़े जो दरिया के किनारे हैं उनको वहाँ से फेंकवा दें। ' यह तहसीलदार साहब ने उसे पढ़ा कि—'बीस या पचीस कस्बिये फला २ तारीख को दरिया के किनारे तैयार रक्खो और दरिया के किनारे जो मल्लाहों के झोपड़े हैं उन्हें फुकवा दो।" बस तहसीलदार साहब बीस पचीस रंडियें बुलवा कर उन्हें साथ ले उस तारीख को दरिया के किनारे हाजिर हुये और दरिया के किनारे के सब मल्लाहों के झोपड़ो को फुकवा दिया। उधर जब साहब कलेक्टर आये तो क्या देखते हैं कि एक नाव पर तहसीलदार बीस पचीस कस्बियें लिये खड़े हैं। साहब ने पूछा— 'वल तहसीलदार, यह क्या?" तहसीलदार ने कहा—"हुजूर का हुक्म था कि फला तारीख को बीस या पचास कस्बिया दरिया के किनारे तैयार रक्खें।" साहब ने कहा पेशकार, तुमने तहसीलदार को क्या लिखा था ?" पेशकार साहब बोले कि—"मैंने तो लिखा था कि बीस या पचीस किश्तियें तैयार रक्खो।" साहब बोला —' फिर आपने ऐसा क्यो किया ?" पेशकार ने कहा—"हुजूर उर्दू में किश्तियें का कस्बियें भी पढ़ा जा सकता है।' थोड़ी देर मे साहब के आगे मल्लाह हाथ जोड़ आ खड़े हुये और बोले—"हुजूर, हम लोगो के झोपड़े

तहसीलदार साहब ने फुकवा दिये।" साहब कलेक्टर ने कहा—"तहसीलदार, तुमने इतने झोपडे क्यों फुंकवाये ?" तहसीलदार ने कहा कि—'हुजूर आपने हुक्म दिया था।" पुनः साहब ने पेशकार से पूछा तो पेशकार ने कहा कि—'हमने तो हुजूर यह लिखा था कि मल्लाहों के झोपडे फेंकवादो, पर उर्दू में ऐसा भी पढ़ा जा सकता है।" साहब ने कहा—'उर्दू बडी खराब जुबान है।' संस्कृत में भी कहा है—

अव्यक्ते शब्दे म्लेच्छे ।

शोक है कि आज लोग सम्पूर्ण जुबानों की मा और सब से शुद्ध और पवित्र भाषा को छोड इस वाक्य के रूप बने हैं कि—

ईश गिरजा को छोड ईस् गिरजा में जाय, शङ्कर स्वदेशी लोग मिष्टर कहावेंगे। पैंधि कोट पैण्ट कम्फाटर टोपी कोट जाकट के पाकट में वाच लटकावेंगे॥ फिरेंगे घमण्डी बने भ्रण्डों को पकडे हाथ पाकर बरण्डी मीट होटल में खावेंगे। फारसी की फारसी उडाय अंगरेजी पढ़ि मानो देवनागरी को नाम ही मिटावेंगे॥

११५—फूट से हानि

एक ब्राह्मण, एक क्षत्री और एक नाई तीनों कहीं को जा रहे थे। सफर लम्बा था। रास्ते में तीनों को क्षुधा ने सताया और एक चने का फला हुआ खेत भी इन तीनों के दृष्टि आया। इन तीनों ने सोचा कि प्रथम तो इस समय इस जङ्गल में कोई है भी नहीं जो हम लोगों को इस खेत से चने उखाडते हुए देख ले, दूसरे यदि कोई देख भी लेगा तो हम लोग उससे कह देंगे कि भाई जी हमने भूख के कारण थोड़े थोड़े चने उखेड़े हैं। वह

खेत एक जाट का था और दुपहर का समय था। जाटजी ने सोचा कि दुपहर का समय है हो न हो चलो एक चक्कर खेत की भी ओर कर आयें कि जिसमें कोई नुकसान न करे। जाटजी कन्धे पर कुल्हाड़ा धर खेत की ओर पधारे। वहां जाकर क्या देखते हैं कि हमारे खेत में तीन जवान चने उखेड़ रहे हैं। जाट ने सोचा कि अगर तुम एक एक इन तीनों से हर कहते हो तो प्रथम तो यह जङ्गल, यहां कोई नहीं, दूसरे हम अकेले और यह तीन हैं इसलिए युक्ति से काम लेना चाहिये, अब जाट जी ने तीनों के पास जा प्रथम ब्राह्मन महाराज से पूछा कि—'आप कौन हैं?' इन्होंने उत्तर दिया कि—'हम ब्राह्मण हैं।' तब तो जाट जी ने कहा—'महाराज, आप तो परमेश्वर की देह हैं आपने बड़ी दया की भला आप काहे को कभी हमारे खेत में आते। धन्य हो महाराज, हमारा तो खेत पवित्र हो गया। यदि आपको और दो चार गट्ठे चनों की आवश्यकता हो तो उखेड़ लीजिये। आपका तो खेत ही है।' इसके पश्चात् जाट जी ने कुँवर जी से पूछा कि—'महाराज, आप कौन हैं?' इन्होंने कहा—'हम तो क्षत्री हैं?' जाट जी बोले—'धन्य हो महाराज कुंवर जी, आपने तो हमारे ऊपर बड़ी ही दया की। भला आप कभी हमारे खेत में काहे को आते। इत्तिफ़ाक़ की बात है। आपको यदि और दो चार गट्ठे चनों की आवश्यकता हो तो घोड़ों वगैरः के लिये उखड़वा मंगाइये। आपका तो खेत है।' अब इसके पश्चात् जाट जी ने तीसरे यानी हज्जाम जी से पूछा कि—'आप कौन हैं?' यह बोला—'मैं आपका हज्जाम हूं।' जाट जी बोले कि—'भला अगर इन ब्राह्मण जी ने चने उखेड़े तो यह हमारे पूजनीय ठहरे और कभी कथा वार्त्ता सुना देते कभी ब्याह काज करा देते, और कुंवर जी ने उखेड़े तो यह तो हमारे राजा ठहरे और फिर

कभी हम लोगों पर आनन्दनो ही में दया करते, हमारी रक्षा करते, पर तूने साले चने क्यों उखेडे? गधे के खाये, न पाप में न पुण्य में।' ऐसा कह जाट जी ने उतार जूता हज्जाम की चाँद काट दी। अब तो ब्राह्मण और क्षत्री दोनों बोले कि—'अच्छा हुआ जो यह नौआ पिट गया, यह कुछ बदमाश भी था। इस साले को जब कभी घर से बाल बनवाने को बुलाओ तो घंटों नहीं निकलता था, चलो आज ठीक हो गया।' उधर नाई सोचने लगा कि मैं पिट गया और ये बच गये, ये लोग जाकर गाव में कहेंगे कि देखो नौआ पीटा गया। परमेश्वर, कहीं इन दोनों के भी चाँद में दस दस जूते लग जाते तो ठीक हो जाता। जब नौआ पिट पट के कुछ दूर गया तो जाट जी बोले कि—'क्यों कुवर जी, यह खेत कोई माफी है, या मुफत में तैय्यार हुआ था? भला ब्राह्मण जी ने उखेडे तो वह तो हमारे माननीय ठहरे, पर आपने चने क्यों उखेडे?' ऐसा कह जाट जी ने उतार जूता इनकी भी खोपडी लाल कर दी और मारे बेतों के चूतर काट दिये।' अब तो ब्राह्मण जी बोले कि—'अच्छा हुआ, यह भी बडा ही दर्रबाज था, कभी सीधा बोलता ही न था, हमेशा अकड के चलता था आज सारो अकड निकल गई।' उधर क्षत्री मन में सोचने लगा कि देखो हम दो पिट गये पर यह ब्राह्मण बच गया!! यह गाव में जाकर कहेगा कि नाई और क्षत्री दोनों खूब पिटे परमेश्वर कहीं इसके भी सिर में दस जूते लग जाते तो ठीक हो जाता। इस प्रकार जब कुवर जी पिट कुट कर चले और कुछ दूर पहुचे तब जाट जी पूज्यमान की पूजा के हेतु उनकी ओर मुखातिब हुए और ब्राह्मण जी से कहा—'क्यों महाराज, यह खेत ऐसे ही तैय्यार हो गया था, इसमें मेहनत नहीं पडी थी? क्या आप नमस्कारों या कथा वधा' में अपने टके छोड देते हो?

अरे भाई, ये चने क्यों उखेड़े ?' यह कह जाट जी ने उनार जूता इनकी भी खोपड़ी साफ कर दी। नाई की कभी जरूरत ही न रक्खी।'

अब आप लोग नतीजा निकाले। अगर ये तीनो आपस में न फूटते तो तीनों की चाद न काटी जाती। मित्रो, ठीक यही हमारी आपकी सबकी हालत है। क्या इस पर आप लोगों को अफसोस नहीं जो आपस में हमेशा अगुल अगुल जगह पर, एक एक पनाले पर, एक एक खूंटे पर निष्प्रयोजन दिन रात वैर विरोध किया करते हैं। अब आप जरा सोच समझ भारत पर कृपा कीजिये।

११६—उजबक

एक बार एक उजबक जी को यह सूझी कि किसी प्रकार रामचन्द्र के दर्शन करना चाहिये। उजबक जी इस ख्याल में थे कि हमें कोई ऐसा गुरु मिल जाय कि जो सहज में हो कोई साधारण युक्ति बता दे ताकि बिना परिश्रम ही रामदर्शन हो जायं। उजबक ऐसे गुरु की तलाश में ही थे कि इनको 'या-दृशी शीतला देवी तादृश खर वाहन' के अनुसार एक घोंघा बसन्त मिल गये। इन्होंने घोंघाबसंत जी से कहा- महाराज हमें कोई ऐसी युक्ति बताओ कि सहज में ही राम-दर्शन हो जाय ?' घोंघाबसंत ने उपदेश किया कि—' आज से आप जब प्रात काल पाखाने जाया करें तो अपने लोटे में जो जल भर कर पाखाने के लिये ले जाते हो उसमें का कुछ आबदस्त लेने से बचा रक्खा करो और उसे तुम नित्यप्रति बबूल पर चढ़ा दिया करो इस प्रकार करने से तुम्हें प्रथम हनूमानजी के दर्शन होंगे पश्चात् वे तुम्हें रामचन्द्र के दर्शन करायेंगे।' उजबकजी ने यही व्रत धारण किया। उस दिन से वे पूरे और से आब-दस्त भी न लेते थे पर बबूल पर चढाने को [illegible] अन्त रामदर

बचा रखते और रोज जल चढाया करते थे। एक दिन एक बुड्ढा पुरुष जिसकी लम्बी २ दाढ़ी थी प्रातःकाल पाखाने गया और वह उस बबूल के उस तरफ़ बबूल की जड़ से मिल कर पाखाने बैठ गया। माघ पूस का महीना था जाड़ा खूब पड रहा था। इतने में यह उजबक पाखाने गया। यह झट पट पाखाने हो जल चढ़ाने के कारण पूरे तौर से आबदस्त भी न ले लोटे में आधा पानी बचा उसी बबूल पर इस ओर से आ और आधा लोटा जल जोर से फेंक दिया। जल बहुत ही ठंडा था और ज्योंही उस बूढ़े के ऊपर जो कि बबूल की जड़ से भिड़ा हुआ उस ओर पाखाने बैठा था पड़ा तो जल पड़ते ही बुड्ढा भरभरा के उठ बैठा। यह दृश्य इस उजबक ने ज्योंही देखा तो इसे क्या मालूम पड़ा कि यह बबूल के अन्दर से निकला है और हो न हो यही हनूमान हैं। बस उजबक ने वहां से लौट कर जाकर उस बुड्ढे के पैर पकड़ लिये। वह बेचारा पाखाना फिरे हुए था इस कारण बोलने से लाचार था और यह उजबक बोला कि—"महाराज बहुत दिन के बाद आपके दर्शन मिले बेचारा बुड्ढा बोलने से तो लाचार ही था परन्तु हाथ हिलाता था और सकेतों से यह कहता था कि—' तुम अलग जाओ।" परन्तु यह उजबक कहता था—"वाह महाराज, खूब रहे, बारह वर्ष हमने जब बबूल पर जल चढाया है तब बाद मुद्दत के आपके दर्शन मिले हैं सो आप अलग २ करते हैं। भला मैं आपको छोड़ सकता हूं? आप तो हनूमान् हैं।,, यह बुड्ढा फिर हाथ हिला कर सकेत से बोला कि— 'हूं हूं, ऊ हुं, ऊ हुं।" यानी मैं हनूमान् नहीं हूं तुम अलग हटो। इसने कहा—' अरे जाव, महाराज, अब एक नहीं चलने की, हमने बहुत दिन में आपके दर्शन पाये हैं, आप तो भक्तों से पहले ऐसा कहा ही करते हैं। बेचारे बुड्ढे को

आनंदस्त लेना मुहाल हो गया। इस प्रकार जब बुड्ढे ने देखा कि इससे पीछा छूटना कठिन है तो बोला कि—'अच्छा, मैं हनूमान् हूं, तुम अपना अभिप्राय कहो, क्या है?' इसने हाथ जोड़ कहा—'महाराज हमें राम के दर्शन कराओ। बुड्ढा यह सुन हैरान हुआ कि मैं इसे रामचन्द्र के दर्शन कहां से कराऊं, परन्तु अनायास उसी समय चार सवार घोड़े पर किसी राजा के पास डाक लिये जाते थे, जब बुड्ढे ने देखा कि यह किसी प्रकार न मानेगा तो उसने कहा—'देखो, वे चारों भाई जा रहे हैं और बोला कि—

'आगे आगे राम जात है, पीछे लछिमन भाई।
रामके पीछे भरत जात है, पीछे शत्रुघ्न दिखाई॥

यह सुनते ही उजबक बुड्ढे को छोड़ सवारों की ओर दौड़ा। उनमें तीन सवार तो आगे निकल गये थे, पीछेवाले सवार के साथ यह उजबक जा चिपटा और बोला कि—'बहुत काल के बाद दर्शन हुए।' सवार ने कहा—'क्या है, क्यों चिपटता है, तू कौन है?' यह बोला—'महाराज, मैं आपका भक्त हूं, हरा-नाथ,' १२ वर्ष तो मैंने बबूल पर जल चढ़ाया, तब तो हनूमान् जी ने आपको बताया है।' सवार ने कहा—'अरे भाई, हम सरकारी सवार हैं, डाक लिये जाते हैं हमें तुमने क्या समझ रक्खा है।' इसने कहा—'महाराज, दास को क्या धोखा देते हो? आप राम लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न चारों भाई हो।' सवार ने कहा—'नहीं, हम सवार हैं।' उसने कहा—'आप तो प्रथम भक्तों से ऐसा ही कहा करते हैं कि जिसमें हमें छोड़ दें, सो हम आप को छोड़नेवाले नहीं।' सवार ने जब देखा कि यह इस प्रकार पीछा न छोड़ेगा और डाक को मुझे दूर होती है तो ले हण्टर पीटने लगा और यह गिर पड़ा। पीछे बोला कि-

मारे गये चाहे पीटे गये, दर्शन तो कर ही लिये ।

सम्पादिता सपदि ददुर दीर्घनादा यत्काकिला कल रुतानि निराकृतानि । निष्पीतमम्बु लवणं नतु दवनद्या. पर्जन्य तेन भवता विहितो विवेक. ॥

११७--स्त्रियों के परदे से हानि

एक बार एक कलकत्ता के निवासी सेठजी अपनी बहू को विदा कराये बम्बई से आरहे थे और दूसरे सेठ कानपुर निवासी अपनी बहू की विदा कराये दक्षिण हैदराबाद से आ रहे थे। दोनो का इलाहाबाद स्टेशन पर सङ्गम हो गया, और दोनो बहुयें एक ही बिस्तर पर बैठ गईं, परन्तु अब बात यह थी कि परदा के कारण न तो कानपुरवाले सेठ अपनी बहू को पहिचानते थे और न कलकत्तावाले सेठ अपनी बहू को पहिचानते थे। थोड़ी देर के बाद दोनों ओर की जानेवाली गाडियो का मिलान वहीं पर हुआ। सेठों ने बहुओं से कहा कि—'बहुओं तुम जरा अलग खडी हो जाओ तो हम असबाब सम्हाल लें।' प्रतिफल यह हुआ कि कलकत्ता के सेठ की बहू कानपुरवालों के साथ चली आई और कानपुरवालों की बहू कलकत्तेवाले के साथ चली गई। जब यह बहुयें कलकत्ता और कानपुर चार २ दिन रह चुकीं तो पीछे मालूम हुआ कि कलकत्ते की बहू कानपुर और कानपुर की बहू कलकत्ता चली गई। अन्त में यह हुआ कलकत्ता वाला कानपुर अपनी बहू को लेने आया और अपनी स्त्री को रास्ते में ही मार दिया। दूसरे ने कलकत्ते से कानपुर आकर यहीं उसे छोड दिया कि तू हमारे काम की नहीं।

११८—वर्त्तमान स्त्रियों की विद्या

एक लड़की ने अपने मायके में रह कर विचारी ने एक एक पैसा जोड़ हर प्रकार की तकलीफ सह कर सौ रुपये जोड़े। जब यह विचारी अपने सासुरे गई तो इसे सौ तक गिनती तो आती न थी, इस कारण अपने रुपयों को दो दो बराबर कर लिया करती थी और जब दो दो बराबर हो जाते थे तो समझ लेती थी कि अब मेरे रुपये पूरे हैं। परन्तु निकालने वाली भी बड़ी ही चतुर थी, यह भी दो ही दो निकाला करती थी। यहां तक कि निकलते निकलते इसके पास केवल चौवीस रुपये रह गये। परन्तु तब भी यह अपने बराबर कर लेती और कहती चली आई कि मेरे पूरे हैं। एक दिन निकालनेवाली चोरी इसके रुपये निकाल रही थी कि यह आ गई, इस कारण निकालनेवाली ने एक ही रुपया निकाल पाया। इसने फौरन ही अपने रुपयों को दो दो बराबर किया परन्तु एक घट रहा तब इसे मालूम हुआ कि मेरी चोरी आज हो गई। तब तो इसकी सास ने कहा कि-'ला मैं तेरे रुपये गिन दूं।' यह दो दो बराबर कर बोली कि-'१) रुपया तो घटता है तू किसका चुरा लाई?' अब आप लोग सोच लें कि इनके सुपुर्द हमारी सब घर का कारखाना और बाल बच्चे हैं, ऐसी स्त्रियों की सन्तानें जितना मूर्ख न हो उतना ही थोडा है।

११६—वेवा स्त्रियों का मुख्य धर्म

एक बार झांसी की रानी महारानी लक्ष्मण बाई किसी स्थान पर एक पण्डित की कथा श्रवण करने गईं। कथा में पण्डित जी ने एक दृष्टान्त कहा कि—'इन वेवा स्त्रियों के मकर देखो कि जब तक इनका पति जीवित रहता है तब तक तो

काच की कच्ची चूरिया चार चार या छे छे पैसे की पहिनती हैं और जब पति मर जाता है तो सोने या चादी का गहना या पनरिया दस दस, बीस बीस, पचास पचास रुपये की पहनती हे। महाराणी लक्ष्मण बाई ने पण्डित जी को उत्तर दिया कि—'महाराज क्षमा कीजिये, आपने इस महत्त्व को नहीं समझा। इसका मतलब यह है कि जब तक इनका रिश्ता अपने पति से है तो ये समझती हैं कि पति का पाञ्चभौतिक अनित्य क्षणभङ्गुर शरीर काँच की कच्ची चूरियों की तरह जरा से धक्के में कुट्ट से हो जानेवाली है, इसलिए ये जब तक इनका रिश्ता कुम्हार के कच्चे घडे की तरह फूटनेवाले पति के शरीर से रहता है तब तक कांच की कच्ची चूड़िया पहनती हैं और जब पति मर गया तो अब ससार में इनका एक उस पक्के परमात्मा से जो कभी भी टूटने फूटनेवाला नहीं सम्बन्ध हो जाता है, इसलिये ये सोना चाँदी की पक्की चूरियां पहिर ईश्वर-भक्ति में अपने जन्म को बिता देती हैं।'

१२०--असंभव कभी सच नहीं

एक बार एक जगह गप्पें उड रही थीं, तबतक एक दूसरे गप्पी आ गये। अब क्या था 'गप्पी के घर गप्पी आये' के अनुसार जब गप्पियो के यहा गप्पी आये तो गप्प मारने की क्या कमी। यह बोला कि—'हमारे गुरू तो अपना सिर काट के अपने सिर के जूं बीन लिया करते हैं।' दूसरे ने कहा—'आखें तो सिर के साथ कट जाती हैं फिर सिर के जू किस से देखते हैं? इसने अपने मुह में अपने ही हाथ से एक थप्पड मारा और कहा— बस, इतनी ही तो झूठी निकल गई, नहीं तो सब सच्ची ही थी।'

१२१—तन बदन का होश नहीं

एक बढ़ई अपने बसूले को कन्धे पर रक्खे हुए उसे ढूंढता फिरता था कि बसूला कहा गया और इधर उधर बिलबिलाता हुआ व्याकुल हो रहा था। किसी ने कहा—'कन्धे पर क्या है?' वह झट उस पुरुष के पैरों पर गिर पड़ा और बोला कि-'आप न बता देते तो हमारा बसूला गया ही था।'

१२२—चोर की दाढ़ी में तिनका

एक बार एक मनुष्य के यहा चोरी हो गई थी। उसका पता लगना कठिन हो गया था। उस पुरुष ने बादशाह के यहा प्रार्थना की। बादशाह का वजीर बड़ा ही चतुर था। वह तमाम बदमाशों और चोरों को इकट्ठा कर बोला कि—'चोर की दाढ़ी में तिनका है।' अब तो जिस मनुष्य ने चोरी की थी, वह अपनी दाढ़ी देखने लगा। बस वजीर ने समझ लिया कि इसने चोरी की है।

१२३—आज कल की सती

किसी स्त्री ने अपनी सास से पूछा कि—'सती के क्या माने हैं?' उसने जवाब दिया कि—'जिसने सात खसम किये हों, उसको सती कहते हैं।' इस पर उसने कहा कि—'तेरा लड़का मेरा आठवाँ खसम है।' सास ने जवाब दिया कि—'तूने अब दूसरे सत पर कदम रक्खा है।'

१२४—बिना सम्बन्ध के वार्ता

एक वैद्य जी एक रोगी को देखने गये और उनके साथ उनका एक मूर्ख शिष्य भी गया। वैद्य जी ज्योंही रोगी के पास

पहुचे तो चने के छिलके इधर उधर पडे देख उसकी बद-परहेजी पर चिढ कर बोले कि—तुम्हारी नाड़िका में तो आज चने उछल रहे हैं।' रोगी हाथ जोड बोला—'महाराज, आज भूल हो गई, मैंने दो भोक चाब लिये, पर आइन्दा ऐसा कभी न होगा।' थोडी देर में वैद्यराज चले आये। रास्ते में शिष्य ने पूछा—'महाराज, आपने यह कैसे जान लिया कि इसकी नाडिका में चने कुद रहे हैं?' वैद्यजी ने कहा कि—'चनों के छिलके उसकी चारपाई के पास पडे थे, इसलिए ऐसा कह दिया।' दूसरे दिन जब उस रोगी के घर के मनुष्य फिर लिवाने गये तो वैद्यराज तो रोगी की बदपरहेजी से चिडे थे, इस कारण आपने उसी शिष्य को भेज दिया कि जाओ उस रोगी को देख आओ। इतने में रोगी के घर कोई उसका मेह-मान ऊँट पर आया और ऊँट की काठी रोगी की चारपाई के पास रख बैठ गया। जब तक वैद्यराज के शिष्य रोगी को देखने पहुचे। यह ऊट की काठी पास रक्खी देख रोगी की नाडिका पकड के बोले कि—'आज तो यह ऊट खा गया है, इसकी नाडिका मे ऊंट कूद रहा है।' रोगी के घर के लोगों ने कहा—'खाना तो हूजिये।'

अमन्त्रमक्षरं नास्ति नास्ति मूलमनौषधम्।
अयोग्य पुरुषो नास्ति योजकस्तत्र दुर्लभा॥

१२५—बिना योग्यता के काम

एक वैद्यराज अपने नौकर को साथ ले बाहर वैद्यकी के निमित्त चले, परन्तु उस देश की प्रथा यह थी कि अगर कोई रोगी मर जाता था तो वैद्यजी को उठाना पड़ता था। वैद्य-

राज बड़े चतुर और चालाक थे। हर बार शव उठाने में अपने नौकर को रोगी के सिर की ओर और आप पैरों की ओर रहा करते थे। वैद्यराज जहां जहां दवा करने जाते थे वे प्राय सभी मर जाया करते थे। अबकी बार वैद्यराज एक रोगी की दवा करने गये तो नौकर ने कहा कि—'महाराज, नाड़िका पीछे पकड़ो, पहले यह ठहरा लो कि अबकी हम पैरों की ओर रहेंगे।' यह सुन वहाँ से दोनों निकाले गये—

लोभात् क्रोधः प्रभवति क्रोधात् द्रोहः प्रवर्तते।
द्रोहेति नरकं यान्ति शास्त्रज्ञोऽपि विचक्षणाः॥

१२६—अत्यन्त लोभ से हानि

एक बार एक सेठजी का बहुत दिन से यह इरादा हो रहा था कि अगर कोई सब से थोड़ा खानेवाला ब्राह्मण मिले तो एक ब्राह्मण खिलावें। यद्यपि सेठजी अपने घर के बड़े मालदार थे परन्तु अत्यन्त लोभी होने के कारण उनकी यह दशा थी कि वे बहुत दिन तक ऐसे ब्राह्मण की खोज में रहे। सेठजी के बहुत दिन तक इस विचार में रहने के कारण गांववाले ब्राह्मणों ने समझ लिया था कि सेठ बड़ा लोभी है और सेठजी का ऐसा ऐसा विचार है। एक दिन सेठजी से एक गांववाले ब्राह्मण से वार्त्ता हुई। सेठ जी ने पूछा—"आप कितना खाते होंगे?" ब्राह्मण ने कहा—"एक छटाक भर के करीब।" यह सुन सेठजी ने उसी समय उस ब्राह्मण को दूसरे दिन के लिए न्योत दिया और ब्राह्मण से बोले कि—'पण्डित जी, मैं तो कल फलाने गांव में सौदा तुलाने जाऊंगा आप मेरे घर आकर भोजन कर जावें।' ब्राह्मण ने कहा—'बहुत अच्छा लाला जी की जै पतो है, हम तो हमेशा आपही लोगों का खाते हैं।' यही समा

चार सेठने अपने घर जाकर सेठानी जी से कह दिया कि हम अमुक ब्राह्मण को कल के लिए न्योत आये हैं, सो मैं तो कल फला स्थान में सौदा तुलाने जाऊँगा और तुम जो जो ब्राह्मण मागे सो दे देना, क्योंकि सेठ जो ने यह तो जान ही लिया था कि जब पण्डितजी की छटाँक भर खुराक है तो माँगें ही गे क्या? दूसरे दिन सेठ तो सौदा तुलाने चले गये और ब्राह्मण ने आकर सेठानी को आशीर्वाद दिया। सेठानी वैसी लोभिनी न थीं और बड़ी साध्वी, पतिव्रता, ब्राह्मणभक्त थीं। उसने पूछा- बोलिये पडितजी, आपको क्या क्या चाहिये?" इन्होंने कहा- "१० मन आटा, २ मन घी, ४ मन शाक, २ मन शकर, पाँच सेर नमक, २ सेर मसाला तो घर के लिए।" सेठानी जी ने पति की आज्ञानुसार सब निकलवा दिया और पण्डितजी ने इस सामान को घर भेज सेठानी जी से कहा कि—"ले हमारे लिए जल्दी चौका लगवाओ।" सेठानी जी ने चट पट चौका लगवा पण्डितजी को भोजन बनवाये। भोजन करने के बाद पण्डितजी बोले कि सेठानी जी, अब हमारी १०० अशर्फियां जो दक्षिणा की चाहिये वह भी मिल जाय तो हम तो आशीर्वाद दे घर चलें।" सेठानीजी ने १०० अशर्फिया भी दे दीं। ब्राह्मण आशीर्वाद दे विदा हुआ और अपने घर में जा पिछौरा ओढ पड रहा और अपनी स्त्री (ब्राह्मणी) से बोला कि- अगर सेठ आवें तो तू रोने लगना और कहना कि पडित तो जब से आपके घर से भोजन करके आये हैं तब से ही बहुत सख्त बीमार हैं, बल्कि बचने की आशा नही। न जाने आपने क्या खिला दिया।' इधर जब शाम हुई तो सेठ दिन भर के भूखे (यहां तक कि ये कभी लोभ से कंकडी भर गुड खाकर पानी भी बाहर नहीं पी सकते थे) घर में आये तो सेठानी से पूछा— 'ब्राह्मणजी भोजन कर गये?" सेठानी ने कहा कि— 'हां, पण्डितजी ते

इतना इतना सामान घर के लिए मांगा और ५ सेर तक की पूड़िया यहां घना के खाकर १०० अशर्फियां दक्षिणा की भी ले गये।' सेठ यह सुन मूर्छित होगया। थोड़ी देर में जब सेठ को होश आया तो वह उस ब्राह्मण के घर पहुंचा। ब्राह्मणी दरवाजे पर बैठी थी। सेठ ने पूछा कि—' ब्राह्मण कहाँ है ?' यह सुन ब्राह्मणी फूट फूट कर रोने लगी और बोली– उनको तो जब से आपके यहां से भोजन कर आये हैं न जाने क्या होगया, बहुत सख्त बीमार हैं, बल्कि बचने की आशा नहीं, न जाने आपके घर में क्या खिला दिया?' सेठ ब्राह्मणी के हाथ जोड़ने लगे और बोले कि—"चिल्लाओ मत, हम २००) तुम को और दिये जाते हैं सो उनकी दवा दारू करो, पर यह मत कहना कि सेठजी के घर खाने गये थे सो न जाने क्या खिला दिया।"

१२७–कर्कशा

एक कर्कशा स्त्री हमेशा उल्टा वर्त्ताव किया करती थी। जो पति के मुख से निकले उस के विरुद्ध करना ही इस का काम था। यदि पुरुष कहे कि इस साल एक यज्ञ कराऊँगा तो यह कहती कि यज्ञ तो कभी न होगा और चाहे कुछ हो। अगर पति कहता कि इस साल ब्रह्मभोज कराऊँगा तो यह कहती थी ब्रह्मभोज तो कभी न होगा और चाहे कुछ हो। पति ने जब जान लिया कि स्त्री का यह स्वभाव ही है तो वह युक्ति से काम लेने लगा, यानी जो जो कुछ इस पुरुष का कर्त्तव्य होता सदैव उसका उल्टा कहा करता था। यदि इसे यज्ञ करना होता तो कहता था इस साल में यज्ञ, ब्रह्मभोज कुछ न करूंगा। तब स्त्री कहती कि और चाहे कुछ न हो पर यज्ञ और ब्रह्मभोज तो इस साल अवश्य होगा।

इस दृष्टान्त के लिखने का प्रयोजन यह है, कि अगर मनुष्य बुद्धिमान् और युक्तिवान् है तो दुष्ट से दुष्ट और विरोधी से विरोधी मनुष्य भी उसका कुछ नहीं कर सकता।

१२८—गर्ज़मन्दा बावला

एक सेठजी ने एक बदमाश को एक हजार रुपये कर्ज दे दिये। जब सेठजी उस बदमाश से विशेष तक़ाज़ा करने लगे तो उसने एक वैद्यराज से जो उसके पडोस में रहा करते थे सलाह पूछी। वैद्यराज ने कहा कि—"तुम बीमारी का बहाना कर अपने घर लौट रहो, तो हम सेठ का दो चार सौ रुपया बिगड़वा दें।" बदमाश ने ऐसा ही किया और गांव में वैद्यराज ने यह प्रगट कर दिया कि अमुक बदमाश बहुत सख्त बीमार है, आज ही कल में मरनेवाला है। अब सेठ जी बिचारों का तकाजा तो भूल गया और वे दुवक्ता उसे देखने आते थे और इसी फिक्र में पड़े कि किसी तरह यह अच्छा हो जाय। सेठजी ने वैद्यराज से पूछा कि—"किसी युक्ति से यह अच्छा भी हो सकता है?" वैद्यराज ने कहा कि—"अगर अमेरिका का उल्लू कहीं मिल जाय और उसका कलेजा निकाल कर इसकी दवा बनाई जाय तो यह आराम हो सकता है। लेकिन अमेरिका का उल्लू ५००) रुपये में आता है।" सेठजी ने सोचा कि अगर यह मर गया तब तो एक कौडी भी वसूल न होगी और इस प्रकार अगर ५००) उल्लू में चले जायँगे तो ५००) तो मिलेंगे। अतः उन्होंने यह खर्च स्वीकार कर लिया। थोड़ी देर में वैद्यराज ने उसी बदमाश के किसी सम्बन्धी को उल्लू लेकर बाज़ार में बेचने के लिये भेज दिया और यह कह दिया कि बाजार में कहना कि—"लो अमेरिका के जंगल का

उल्लू।" सम्बन्धी बाजार में जा बोलने लगा— लो अमेरिका के जंगल का उल्लू।" सेठजी विचारे तो आसामी की बीमारी से घबडा ही रहे थे, उन्होंने पुकारा—"ओ अमेरिका के जगल के उल्लूवाले! उल्लू यहा ले आ।" जब वह पास लाया तो सेठ जी ने उसकी क़ीमत पूछी। उल्लूवाले ने कहा-"पांच सौ रुपया।" सेठजी ने फौरन ही ५००) उल्लूवाले को दे और उल्लू ले बदमाश के दर्वाजे पहुंच कर वैद्यराज से कहा— लो हम अमेरिका के जगल का उल्लू ले आये।" तब तो वैद्यराज ने कहा कि—"रोगी तो अच्छा होगया, अब आपके उल्लू की क्या आवश्यकता है, आप अपना उल्लू ले जाइये।" अब तो सेठजी ने इसको एक पिञ्जड़े में रख अपनी दुकान के सामने टांग दिया और जो कोई ग्राहक आकर कहता था कि–'सेठ जी हल्दी है?' तो सेठजी कहते थे कि—"हल्दी है, मिरचा है, धनिया है, उल्लू है।" कोई पूछे—"जी लाची है?" तो जबाब देते–"लौंग है, मिरच है, लाची है। उल्लू है।" गरज जो कोई कुछ पूछे तो दो एक और चीजों के नाम ले पीछे कह दिया करते थे "उल्लू है।"

यावत् प्रीतिर्भवेल्लोके यावत् स्वार्थ स्तु सिद्ध्यति।
वत्सः क्षीरमय दृष्ट्वा परित्यजति मातरम्॥

१२१--दो ब्याह करनेवाले की दुर्दशा

एक सेठ के घर में एक चोर चोरी करने के निमित्त बैठा परन्तु उस सेठ के पास दो औरतें थीं और उसका घर दुखंडा बना हुआ था, एक औरत नीचे सोती थी और एक ऊपर सो रही थी। परन्तु नीचे से ऊपर जाने के लिये पास ही एक खिड़की थी, सेठ जी नीचे सोते थे। अब रात को नीचे से

उठ कर ऊपर जाने लगे तो नीचे की औरत ने तो उसके पैर पकड़ लिये और ऊपरवाली ने चोटी पकड़ ली, और दोनों अपनी अपनी ओर खींचने लगी, और स्त्रियें रात भर खींचती रहीं, चोर रात भर तमाशा देखते रहे। प्रातःकाल चोर पकड़ लिये गये और सेठजी उनको राजा के पास ले गये। राजा ने कहा—"चोरों को क्या सजा होनी चाहिये?" सेठजी ने कहा कि—'इनके दो व्याह करदो।' चोर बोले—हुजूर, चाहे हमें फांसी दे दी जाय, पर दो व्याह न किये जाय।' राजा ने कहा—"क्यों?" चोरों ने कहा—सेठ से पूछ लीजिये।'

१३०—रण्डीबाज़ को उपदेश

एक रण्डीबाज ने एक बार कुछ रुपया एक रण्डी के यहां रक्खा। उसने खर्च कर डाला। रण्डीबाज रण्डी से माग रहा था और रण्डी कहती थी कि—'मेरे पास रुपया कहां?' तब तक एक भले आदमी पहुच गये और उस रण्डीबाज़ से बोले कि—'भाई, तुमने कभी इसके नाम से भी नहीं विचारा' अरे भइया, जोड़नेवाली तो जोड़ हुआ करती है और जोड़ू ही जोड़ा करती है, यह तो है आसना। अफसोस आप 'आसना' से आस रखते हैं।'

वेश्यासौ मदनज्वाला रूपमेन्धन समेधिता।
कामिभिर्यत्र हूयन्ते यौवनानि धनानि च॥

१३१—चार श्रोता

एक पण्डितजी ने एक बार एक दृष्टान्त दिया कि श्रोता चार प्रकार के हुआ करते हैं—एक गपुआ, दूसरे तकुआ, तीसरे छखुआ, चौथे भकुआ। पण्डितजी बोले कि गपुआ श्रोता वे

कहलाते हैं जो कथा में गप्पें लगावें, और तकुना वे जो यह ताके रहते हैं कि अब के अच्छी वार्ता आवे तो सुनें, और लखुआ वे जो अर्थ लखा करते हैं, और भकुआ वे जो कथा में सो रहा करते हैं। एक कवि का वाक्य है—

अशक्तिबुद्धे श्रोतरि वक्तुर्वाक्य प्रयाति वैफल्यम्।
नयनविहीने भर्त्तरि लावण्यं विमेह खंजनाक्षीणाम्॥

१३२--बद नियती से दूर रहो

एक बेर ठगावे सो बावन वीर कहावे।
घेर बेर ठगावे सो गप्पूनाथ कहावे॥

एक कुए में बहुत से मेंढक, एक गोह और एक साँप रहा करते थे। मेंढको के प्रधान का नाम था गंगदत्त और साँप का प्रियदर्शन तथा गोह का भद्रा। प्रियदर्शन और गंगदत्त में बजहद दोस्ती थी लेकिन प्रियदर्शन उस कुएँ के मेंढकों में से एक मेंढक रोज खा लिया करता था। होते होते उस कुए के सब मेंढक प्रियदर्शन ने खा लिये और एक दिन समय ऐसा आया कि प्रियदर्शन के खाने को कुछ भी न रहा। प्रियदर्शन ने सोचा कि हो न हो आज गंगदत्त ही को खाने के काम में लाऊं। आप जानते हैं कि मन को मन समझ जाता है, गंगदत्त ने समझ लिया इसने हमारे सब भाइयों को तो खा ही डाला और आज दर्जे आज मुझ पर हाथ साफ करने का विचार होगा। अब गंगदत्त कुए में गश्त लगा पर ज्यों ही प्रियदर्शन के पास पहुंचे तो बोले- मित्र, आज हमें एक बात का बड़ा अफसोस है कि हमारे सब भाई तो निपट गये हैं सो यदि आप आज हमको भी खा लेंगे तो फल से आप क्या खायगे? इसलिए यदि आप एक बात करें तो आप

को बहुत दिन को खाने का प्रबन्ध हो जाय।' प्रियदर्श ने कहा—'वह क्या ? गंगदत्त बोला कि—बाहर एक तालाब में मेरे बहुत से भाई रहते हैं सो यदि आप भद्रा को आज्ञा दें तो वह अपनी पीठ पर चढ़ा कर मुझे बाहर उतार आवे और मैं उस ताल के सब मेंढकों को लिवा लाऊं।' ऐसा ही हुआ। प्रियदर्शन ने फौरन ही भद्रा को आज्ञा दे दी कि—'तुम गंगदत्त को अपनी पीठ पर चढ़ा कर बाहर उतार आओ।' भद्रा ने पीठ पर चढ़ा गंगदत्त को बाहर उतार दिया। उस समय गंगदत्त बोला कि—

विभुक्षित: किन्न करोति पापं क्षीणा जना: निष्करुणा भवंति।
त्वं गच्छ भद्रे प्रियदर्शनाय न गंगदत्त पुनरेपि कूपम्॥

अर्थ—भूखा क्या पाप नहीं करता, उस क्षीण पुरुष में दया कहां ? सो हे भद्रे! तुम तो प्रियदर्शन के पास जाओ, अब गंगदत्त फिर कुएं में न जायगे।

नोट—इन दृष्टान्तों को देख कहीं आप लोग यह कुतर्क न उठाने लगें कि साँप और गोह और मेंढक भी कहीं बोला करते हैं ? नहीं, वास्तव में यह केवल मनुष्यों के समझाने के लिए साँप, गोह, मेंढकों के नाम ले ले अलङ्कार बांध कहे गये हैं। इसलिए कोई दोष नहीं। यदि मैं लिखता कि यह सच्चा वाक़या है तो बेशक झूठ था।

१३३—परमेश्वर की रक्षा

एक वृक्ष के ऊपर एक कबूतरी और एक कबूतर बैठे हुए थे। इतने में एक बहेलिया धनुष बाण लिये हुए शिकार को पहुंचा और इस कबूतरी और कबूतर को बैठा देख अपना धनुष बाण चढ़ा इसकी ओर पूरा निशाना लगा दिया। इतने

में ऊपर को ओर उड़ता हुआ बाज कहीं से आ रहा था, उसने भी अपनी घात लगाई कि इस पर धावा करना चाहिये। यह दशा देख—

कान्ते पश्य कपोतिका कुलतया नाथान्तकालेऽधुना ।
व्याधोऽधो धृतचापसज्जितशरः श्येनस्तु खे दृश्यते ॥
एवं सत्यहिना स दष्ट इषुणा श्येनस्तु तेना हथा ।
तूर्णं तौ तु गतौ यमालय महो दैवी विचित्रागति ॥

अर्थ—अपने पति से कबूतरी व्याकुल होकर बोली कि हे नाथ, काल सिर पर आ गया। देखो नीचे दुष्ट बहेलिया धनुष बाण चढाये पूरा पूरा निशाना लगाये हुए ऊपर की ओर ताक रहा है और धनुष से बाण छोड़ने ही वाला है और ऊपर की ओर देखो वह बाज जो उड रहा है वह भी पूरी पूरी घात लगाये हुए है, यहां तक कि झपट्टा मारने ही वाला है। परन्तु होता क्या है कि बहेलिये ने ज्योंही अपना बाण छोड़ना चाहा, त्योंही उसके पैर में एक सर्प चिपट गया और उसने बहेलिये को काट खाया जिससे उसका निशाना तिरछा हो गया और उसका बाण ऊपरवाले बाज के लगा जो कबूतर कबूतरी पर झपट्टा मारने आ रहा था। बस बाज तो ऊपर मरा और बहेलिया नीचे मर गया। परमेश्वर तेरी महिमा धन्य है!

१३४—विना परीक्षा का काम

एक ब्राह्मणी ने एक न्योला पाल रक्खा था जिसको यह बड़े प्यार से रखती थी। नित्य प्रति अच्छी से अच्छी वस्तुयें उसे खिलाया करती थी। एक दिन ब्राह्मणी अपने छै मास के नन्हें बालक को एक खटोले पर लिटा कर गंगा-जल भरने चली

गई। न्योला लडके के खटोले के पास बैठा था कि इतने में ए सर्प उस लडके के काटने के निमित्त आया। न्योले ने सर्प व कुछ तो खा लिया और कुछ तोड मरोड वहीं रख दिया। अ न्योला यह कर्त्तव्य अपना ब्राह्मणी को जताने के लिये उस पास को चला। न्योला मार्ग में ब्राह्मणी को मिला। ब्राह्म ने उसके मुह में खून भरा हुआ देख ख्याल किया कि यह मे पुत्र को काट कर आया है। यह ख्याल करते ही उसको क्रो आ गया और उसने न्योले को वहीं मार डाला। पश्चात् जि समय ब्राह्मणी अपने स्थान पर पहुची तो क्या देखती हैं वि मेरा बालक आनन्द से चारपाई पर खेल रहा है और उ बालक के खटोले के पास ही एक सर्प खुतरा हुआ पडा है ब्राह्मणी ने जान लिया कि यह सर्प मेरे लडके को काटने आय था और न्योला इसे तोड मरोड मुझे यह दिखाने गया था वि देख तेरे लडके को सर्प काटने आया था उसे मैं तोड मरो के रख आया हू। पुन ब्राह्मणी को बड़ा पश्चाताप हुअ कि जब ऐसा अपना हितैषी न्योला मर गया तो अब प्रा रखने से क्या? इसीलिए कहा है कि—

अपरीक्षित न कर्त्तव्य, कर्त्तव्य सु परीक्षितम्।
पश्चात्भवति सतापो, ब्राह्मणी नकुलार्थत ॥

अर्थ—बिना परीक्षा किये कभी कोई काम न करना चाहिये नहिं हर काम को भली भाँति परीक्षा कर करना चाहिये नहीं तो इसी प्रकार का पश्चात्ताप प्राप्त होगा जैसा कि न्योल मारने से ब्राह्मणी को हुआ।

१२५—बिना बुद्धि के विद्या निष्फल है

जङ्गल के जानवरों में बड़ा उपद्रव किया करता था, यहां तक कि खाता तो एक ही आध जानवर था और तोड़ फोड़ उस पाँच को डालता था। । अत: जङ्गल के सम्पूर्ण जानवरों ने सम्मति की कि हम तुम सब मिल कर वनराज के पास चल कर यह प्रार्थना करें कि ऐसा करने से आपको क्या फल कि आप खाय तो एक और मारें दस को। इस प्रकार हम सब बहुत जल्द निवट जायेंगे, इसलिए अगर आपकी राय हो तो हम लोग अपनी अपनी ओसरी बाँधलें और एक रोज आपके पास चला आया करे। इस भाँति हम सब भी कुछ दिन जीवित रहेंगे और आपको भोजन भी बहुत दिन तक मिलता रहेगा। सिंह ने जानवरों की यह राय स्वीकार कर ली और ऐसा ही होने लगा, यानी उन जानवरों में से एक रोज चला जाता था और सिंह अपनी तृप्ति कर लिया करता था। एक दिन एक खरगोश की बारी आई पर वह सिंह के पास बहुत विलम्ब से पहुचा। सिंह बड़ा ही क्षुधित और गुस्से से जला भुना बैठा था। ज्योंही उसके सामने खरहा पहुचा तो तड़फ के बोला कि—'क्यों रे दुष्ट, तू इतनी देर तक कहा रहा ?' खरहे ने उत्तर दिया—'महाराज, मैं तो आपकी सेवा में बड़े सवेरे आता था लेकिन मुझे दूसरा सिंह मिल गया और वह बोला—'क्यों रे खरहे, तू कहा जाता है ?' मैंने कहा—'कि उस वन में जो हमारा वनराज रहता है, मैं उसके पास जाता हु।' तब तो सिंह ने कहा कि—'चल उस सिंह को दिखला कि वह कहा है ?' खरहे ने थोड़ी दूर ले जाकर सिंह को एक कुआँ दिखला कर कहा कि इसमें है। सिंह ने ज्योंही तड़फ कर कुए में आवाज लगाई कि कुए में से भी आवाज आई। सिंह को यह निश्चय हो गया कि इसके भीतर सिंह अवश्य है। बस यह समझ सिंह कुए में कूद पड़ा और खरहे ने अपनी राह ली। सच है—

वरं क्षुद्र न माविणा, विशाला बुद्धिरुत्तमम् ।
बुद्धि विद्या विनश्यैव, यथाते सिंह कारका ॥

१२६--भेषधारी

एक बिल्ली बडी ही दुष्ट और निशदिन चूहे तोडा करती थी, इस कारण इससे चूहे भी होशियार हो गये थे और इसके सामने कभी कोई चूहा बिल बाहर नहीं निकलता था। तब बिल्ली ने देखा कि अब मेरा गप्फा नही जमता तो उसने यह आडम्बर रचा कि कुछ दिन उसने चूहा तोडना छोड दिया और इधर उधर से लोगों के घर में जा कहीं दूध, कहीं रोटी, कहीं कुछ कहीं कुछ उठाकर खाया करती थी। कुछ दिन के बाद बिल्ली एक घडे का घेरा अपने गले में पहिर चूहों के पास जाकर बोली-'मैं केदारनाथ को गई थी, सो यह केदार कङ्कण पहिर आई हू और वहा रहकर मैंने बडा तप किया और यह प्रतिज्ञा की कि मैं कभी हिंसा न करूंगी और न कभी किसी जीव को सताऊँगी सो अब तुम हमसे बे फिकर रहो, मैं अब तुमको नहीं सताऊंगी।' चूहे यह सुन बेखटके हो गये और अब सब चूहे बिल्ली के सामने निकलने लगे, परन्तु बिल्ली जिस समय सब चूहे आते थे तो चुपचाप सीधी साधी खड़ी रहती थी और जब चूहे निकल जाते थे तो पीछे से एक उड़ा लिया करती थी। एक दिन चूहों ने अंतरङ्ग की कि—'क्यों भाई, यह बिल्ली तो तीर्थवासिनी और तपस्विनी है तथा केदारकङ्कण भी पहिरे हुए है, इससे आज एक काम करो कि आज कल कौमी तरक्की के लिए हर कौमों के बडे बडे लोग अपनी अपनी कुर्बानी कर रहे हैं, सो (उन चूहों में से

एक काणा चूहा था) काणे चूहे से कहा गया कि आज जिस समय हम लोग बिल्ली के सामने से चलने लगें तो पीछे आप रह जांय ताकि पता लग जाय कि बिल्ली हम लोगों को खाती है या नहीं?" काणे ने स्वीकार कर लिया और ऐसा ही हुआ। जब बिल्ली के सामने से सब चूहे चले गये और काणेराम पीछे रह गये तो काणे को बिल्ली शीघ्र ही निगल गई। पुन दूसरे दिन बिल्ली के सामने आते ही चूहे बोले—

केदार कङ्कण कण्ठे तीर्थगामा महातप ।

सहस्र मध्य शत हन्ति खण्ड पुच्छ न दृश्यते ॥

कि तू कण्ठ में तो केदार-कङ्कण पहिरे है और तीर्थ यामिनी तथा महातपस्विनी भी है पर हम सब एक हजार थे उनमें से तू ने १०० उड़ा लिये और उसका प्रमाण यह है कि आज काणजू नजर नहीं आते।

१२७--पड़ोसी गुण दोष जानता है

एक बार महाराज रामचन्द्र तथा लक्ष्मणजी दोनों चले जा रहे थे। महात्मा रामचन्द्रजी पम्पासर तालाब को देख बोले कि—

पश्य लक्ष्मण पम्पायां, बक परम धार्मिक ।

मन्द मन्द पद धत्ते, जीवानां वधशंकया ॥

अर्थ हे लक्ष्मण! इस पम्पासर तालाब को देखो। इसमें यह बगुला कैसा धार्मिक है। देखिये कैसे धीरे धीरे दपा दपा पैर रखता है कि कहीं कोई जीव न मर जाय। यह सुन मच्छी बोली कि—

बक किं वर्ण्यते राम, तेनाह निष्कुली-कृत ।

सहवासी विजानीयात्, चरित्र सहवासिना ॥

अर्थ—हे राम! बगुले की आप प्रशंसा करते हो, इसने तो हमें निर्वंशी कर दिया। भगवन्! आप क्या जानें, जो जिसके पास रहता है वह उसके गुण अच्छी तरह जानता है। महाराज, इस बगुले को हम अच्छी तरह जानती हैं।

१३८--डपोल सख

एक बार एक ब्राह्मण घर से धन की खोज में निकले। परन्तु चारों ओर संसार पर्यटन कर आये, पर कहीं धन का ठीक न लगा। अनायास एक महात्मा से इनकी मुलाकात हो गई और इन्होंने दण्डप्रणाम के बाद अपनी सारी अवस्था कह सुनाई। महात्मा ने ब्राह्मण को विशेष दु:खी देख इन्हें एक इस प्रकार की काञ्चनीमुद्रा दी, जो रोज एक असरफी दिया करती थी और पण्डितजी से कहा कि—'अब आप इसे ले जाइये, यह नित्य एक असरफी आपको दिया करेगी, जिससे आपका दु:ख दूर हो जायगा।' ब्राह्मण उस काञ्चनी मुद्रा को लेकर चल दिये परन्तु उनके दिल में पूर्ण रूप से विश्वास न था कि यह काञ्चनीमुद्रा रोज एक असरफी देगी, इस लिये चित्त में यह लगी थी कि कहीं उतरें और स्नान पूजन करके इससे असरफी मांगें फिर भला देखें कि यह देती है या नहीं? ब्रह्मदेव ने ऐसा ही किया। मार्ग में एक गाँव मिला जहा एक शिवालय और कुवाँ बड़ा अच्छा बना था और पास ही बनिये की दूकान थी। यह देख, ब्रह्मदेव जी शिवालय में उतर पड़े और कुँए पर स्नान कर शिवाले में पूजन करनेलगे। वहीं पास की दूकान वाला बेनिया भी बैठा था। ब्रह्मदेव ने पूजा कर उस काञ्चनी मुद्रा से कहा कि—'या काञ्चनीमुद्रा महारानी! अब एक असरफी दीजिये।' यह सुनते ही काञ्चनीमुद्रा ने एक असरफी दे दी। बनिया देख कर दंग हो गया और मन

मैं सोचने लगा कि हम दिन भर मिहनत करते हैं तब बमुश्किल तमाम दो आने पैसे पैदा होते हैं और यह काञ्चनीमुद्रा तो बहुत ही अच्छी है कि बिना मिहनत एक असरफी दिया करती है। यह समझ बनिये ने ठान ली कि ब्रह्मदेव की कांचनी मुद्रा किसी प्रकार लेना चाहिये। अतः दुपहर के बाद जब ब्रह्मदेव जी वहां से चलने लगे तो उस बनिये ने ब्रह्मदेव जी से बहुत कुछ लल्लो चप्पो की कि–'महाराज, अभी धूप है और दिन थोड़ा है, कहां कुकुर बसेर करते फिरोगे और यह तो आपका घर है, आप हमारे पूज्य हैं, आपकी सेवा करना हमारा धर्म है, भला आप लोगों की सेवा हमें कहां मिल सकती है, आपको यहां कोई तकलीफ़ न होने पावेगी, अतएव आप प्रातःकाल उठ कर चले जाइयेगा।' यह सुन उन्हें, आखिर ब्राह्मण ही ठहरे, दया आ गई और ब्रह्मदेव जी ठहर गये। बनिये ने ब्रह्मदेव की बड़ी सेवा की और जब रात को वे सो गये तो सेठजी ने उनकी कांचनीमुद्रा तो निकाल ली और उसकी जगह एक दूसरी बटिया रख दी। ब्रह्मदेव जी प्रातःकाल उठ कर चल पड़े लेकिन इनके मन में अभी यह शंका लगी थी कि कांचनीमुद्रा ऐसा न हो कि एक ही दिन असरफी देकर रह जाय और दूसरे दिन न दे, सो नहा डालें और पूजा करके असरफी मांगें, देखें यह रोज की असरफी देनेवाला है या नहीं? अतः ब्रह्मदेव नदी में स्नान कर और पूजा कर बोले कि– या कांचनीमुद्रा, ले अब एक असरफी दीजिये।' परन्तु अब वहां दे कौन? कांचनीमुद्रा जो थी वह तो सेठ के पास गई। उसके स्थान में एक पत्थर की बटिया थी, भला वह असरफी कब दे सकती थी। जब कांचनीमुद्रा ने उस रोज असरफी न दी तो ब्रह्मदेव ने समझा कि महात्मा जी ने हमारे साथ बड़ा धोखा किया। कहा था कि यह कांचनीमुद्रा

तुमको रोज एक अशरफ़ी देगी, सो यह एक ही दिन देकर रह गई। यह सोच ब्राह्मण फिर महात्मा के पास पहुंचा और महात्मा से हाथ जोड बोला कि—'महाराज, आपने हमको बडा धोखा दिया। आप कहते थे कि यह कांचनीमुद्रा आप को रोज एक अशरफ़ी देगी, सो महाराज, इसने तो सिर्फ़ एक ही दिन अशरफ़ी दी, दूसरे दिन इससे हम बहुत कुछ मांगते रहे पर इसने अशरफ़ी न दी।' महात्मा यह सुन कर हैरान हो गये और सोचने लगे कि कारण क्या है जो ऐसा हुआ।

पुन महात्मा ने ब्राह्मण से पूछा कि-'तुम कहीं रास्ते में भी ठहरे थे?' ब्राह्मण ने सारा मार्ग का किस्सा महात्मा को कह सुनाया। महात्मा ने सब रहस्य जान लिया और ब्राह्मण को एक सङ्ख दिया और कहा कि इसे ले जाओ और जहा जिस शिवाले पर उस दफे ठहरे थे वही फिर ठहरना और वैसे ही पूजा करना औ इस सङ्ख से अशरफी मागना और रात को उस वनिये के यहा ठहर जाना। यह सङ्ख तुमको वह कांचनी मुद्रा जो वनिये ने तुम्हारी बदल ली है दिला देगा और फिर तुम जब काचनीमुद्रा पा जाना तो सिवा घर के और कहीं न ठहरना।' ब्राह्मण ने वैसा ही किया। चलते चलते उसी शिवाले पर आकर ठहरा और कुएं पर स्नान कर पूजा करने लगा और फिर वही वनिया ब्राह्मण के पास आकर बैठ गया और पूजा देखने लगा। ब्राह्मण पूजा कर सङ्ख से बोला कि- सङ्ख महाराज, अब दो अशरफ़ी दीजिये।' सङ्ख बोला कि-'कल चार इकट्ठी दो रोज की दे दूंगा।' पुन. जब महादेव चलने लगे तो वनिये ने अपने मन में सोचा कि कांचनी मुद्रा तो एक ही अशरफी रोज़ देती है यह तो दो रोज़ देता है, इस कारण ब्राह्मण को रखना चाहिये। अत वनिये ने ब्राह्मण की खुशामद दरामद कर फिर रख लिया और उसकी बडी सेवा की। जब

रात को ब्राह्मण सो गया तो सेठ ने पहिले की काञ्चनी मुद्रा भी उसके पास रख दी और सङ्ख उठा लिया। अब प्रात काल ब्राह्मण तो काञ्चनी मुद्रा ले रवाना हुआ, रहे सेठ, सो नहा धो अब सङ्खजी से बोले कि—'सङ्खजी, कल चार देने को कहते थे, अब आज चार दीजिये।' सङ्खजी बोले—'कल आठ।' जब दूसरे दिन सेठ ने कहा–'महाराज, सङ्खजी, अब आठ दीजिये।' तब सङ्खजी ने कहा—कल सोलह।' जब तीसरे दिन सेठ ने कहा कि—'सङ्खजी, अब आज १६ दीजिये।' तो सङ्खजी बोले कि—

> जालाट काञ्चनी मुद्रा सा गता पद्मशंखिनी।
>
> अहं डपोलसंखश्च न ददामि वदाम्यहम् ॥

अर्थ—यह जो काञ्चनी मुद्रा पद्म और सङ्खों की देनेवाली थी सो तो गई, और मैं तो डपोलसङ्ख हूँ, कहता जाऊँगा, पर दूँगा एक कौडी नहीं।

१३९–अनधिकार चेष्टा

एक जङ्गल में एक बार दो बढई एक शीशम की सिली चीर रहे थे। बढई प्राय जब लकडी चीरा करते हैं तो आरे के कुछ आगे एक छोटा काष्ट का खूँटा सा ठोक दिया करते हैं जिसको खटकिल्ली कहते हैं। दोपहर को लकडी चीरना बन्द कर बढई रोटी खाने चले गये। शीशम की सिली में खटकिल्ली ठुकी हुई थी जिससे कि सिली फैली हुई थी। इतने में एक बन्दर सिली पर आगे की ओर आकर बैठ गया।

बन्दर के अण्डकोश सिली की दराज के भीतर हो गये और वह उस खटकिल्ली को पकड कर हिलाने लगा, इसलिये खटकिल्ली बाहर निकल पडी और सिली के दोनों पटरे जो फैले

थे परस्पर मिल गये, अत बन्दर के अण्डकोश उस सिली की दराज के भीतर दब गये जिससे कि बन्दर उसी समय मर गया। सच कहा है कि—

अव्यापारेषु व्यापारं यो नरः कर्तुमिच्छति।
सखलु निधनं याति कीलोत्पाटीव वानरः॥

अर्थ—जो मनुष्य अनधिकारी हो उस काम के करने की इच्छा करता है उसकी यही दशा होती है जैसे जङ्गल की सिली से कील उखाडने में बन्दर की हुई।

१४०—विपत्ति में बुद्धि बचाती है

एक बन्दर एक बार एक दरिया में तैर रहा था कि इतने मे उस दरिया के रहनेवाले घडियाल ने इसकी टाँग पकड ली, तब तो दूसरा बन्दर जोकि दरिया के किनारे बैठा था इस बन्दर को पैरने से ठहरा हुआ देख बोला कि—'क्या हुआ, क्यों रुक गया?' बन्दर ने जवाब दिया कि—'क्या बतावें, एक घडियाल ने एक लकडी को अपने मुंह में दबाये समझ रक्खा है कि मैंने बन्दर की टाँग पकड ली।' यह सुन घडियाल ने बन्दर की टाँग छोड़ दी। सच है—

उत्पन्नेषु विपत्तेषु, बुद्धिर्यस्य न हीयते।
सएव दुर्गं तरति, जलस्थो वानरो यथा॥

अर्थ—आपत्ति के उत्पन्न होने पर भी जिसकी बुद्धि नहीं बिगडती वह बड़ी, बड़ी, कठिनाइयों से तरता है जैसे कि दरिया से बन्दर तर आया।

१४१—टके टके की चार बातें

एक बादशाह शिकार खेलने गया। लौटते समय देर हो

जाने के कारण एक स्थान पर ठहर गया। थोड़ी देर में क्या देखता है कि एक बान बटनेवाले का बान उलझ गया है। बानवाले ने अपनी स्त्री से कहा कि—"अगर यह मेरा बान तू सुरझा दे तो मैं तुझे टके टके की चार बातें सुनाऊं।" स्त्री ने बान सुरझा कर कहा कि—'अब आप वे चार बातें सुनाइये।' पुरुष ने कहा कि—"पहिली एक टके की बात तो यह है कि अपना काम किसी दूसरे के भरोसे न छोड़ो और दूसरी बात यह है कि अपनी स्त्री को कभी मायके में न रक्खे तीसरी बात यह है कि कमीने की नौकरी न करे और चौथी बात यह है कि अपनी धरोहर कभी दूसरे के पास छिपा कर न रक्खे इन चारों बातों को बादशाह ने ध्यान से सुन कर मन में सङ्कल्प किया कि इन चारों बातों की परीक्षा अवश्य करनी चाहिये। यह सोच आते ही अपने राज्य का सम्पूर्ण काम मन्त्री आदि के सुपुर्द किया और कह दिया कि—'अब छै मास तक मैं राज्य का काम बिलकुल न करूगा यहां तक कि मैं दस्त-खत भी न करुगा।' यह कह कर बादशाह महल में रहने लगा परन्तु बादशाह की बीबी बादशाह की ससुराल में ही थी, इस लिए बादशाह ने सोचा कि ससुराल चल स्त्री का भेद देखना चाहिये कि मायके में रहने से क्या हानि होती है? ऐसा विचार बादशाह ने एक हजार अशरफी नकद और एक लाल अपनी जांघ के अन्दर रख भेष बदल ससुराल का मार्ग लिया वहां पर पहुंच कर सराय में जा ठहरा और अपनी एक हजार अशरफी चुपके से भटियारिन के पास रख दीं और उस से कहा कि आवश्यकता पड़ने पर मैं तुम से ले लूंगा और आप एक महान् दीन का भेष बना यानी केवल एक लंगोटी लगा मैली देह ले शहर के कोतवाल के पास जाकर हुक्का भरने में केवल रोटियों ही पर नौकरी कर ली। उस कोतवाल के पास

बादशाह की स्त्री 'जिसने कि हुक्का भरने में नौकरी की थी आया जाया करती थी। एक रोज का वृत्तान्त है कि दोनों यानी वह औरत और कोतवाल एक ही चारपाई पर लेटे हुए थे इतने में कोतवाल ने उस हुक्केवाले से कहा-"अबे हुक्केवाले जरा हुक्का भर कर रख जा।' और यह हुक्का भर कर रखने गया कि बादशाह की स्त्री इसकी सूरत देख कर समझ गई कि हो न हो यह मेरा पति बादशाह है मेरा हाल जानने के लिये इसने ऐसा स्वांग रचा है अतः उस औरत ने कोतवाल से पूछा कि-"यह आदमी आपने कब से नौकर रक्खा है?' कोतवाल साहब ने उत्तर दिया कि-"इसको रक्खे हुये अभी तो दस पन्द्रह दिन हुये होंगे।' तब तो उस औरत ने कहा कि इसे आप मरवा डालिये।' कोतवाल ने बहुतेरा कहा कि-"इस बेचारेने तुम्हारा क्या लिया है खाली रोटियों पर सारे दिन मिहनत किया करता है यह बेचारा बोलना भी तो नहीं जानता है क्योंकि बौरा है और न कुछ सुनता ही है क्योंकि बहरा है।' परन्तु बादशाह की स्त्री के बहुत हठ करने पर कोतवाल साहब ने विवश हो कर हुक्केवाले को जल्लादों के हवाले किया और जल्लादों से कह दिया कि इसे जङ्गल में मार कर डाल आओ। उसको जल्लाद लेकर जङ्गल में पहुंचे और अपने हथियार निकाल उन्होंने उसे मारने का इरादा किया। इतने में इस हुक्केभरने वाले ने कहा कि— 'आप लोग मुझसे एक हजार अशरफियां ले लीजिये और मुझे छोड़ दीजिये।' बहुत वाद विवाद के पश्चात् जल्लादों ने आपस में यह निश्चय कर कहा कि—"एक हजार अशरफियाँ लाइये हम आपको छोड़देंगे।' हुक्केवाला जल्लादों को ले सराय में गया और भटियारिन से अपनी धरोहर वाली एक हजार अशरफियें मांगी। तब तो भटियारिन ने डांट कर कहा कि-"चल बे भँडये, कल तक तो हमारे

कोतवाल साहब की रोटियों पर नौकर रहा और लंगोट लगाये घूमता रहा, तेरे पास अशरफियाँ कहां से आईं। तब यह बेचारा लाचार हो अपनी जांघ से लाल निकाल जल्लादों को दे अपनी जान बचा घर आया और यहाँ से कुछ दिन के बाद अपने ससुर को पत्र लिखा कि—"फलां मिती को विदा कराने आवेंगे।" यह समाचार सुन बादशाहजादी को ज्ञात हुआ कि हमारे बादशाह वह नहीं थे कि जिसको हमने शुभा से मरवा डाला। बादशाह ने विदा का पत्र स्वीकार कर लिया। बादशाह नियत तिथी पर विदा कराने पहुंच गया और दो तीन दिन बादशाह ने अपने दामाद की बड़ी खातिर की, परन्तु दामाद कुछ गुम सुम सा उदासीन वृत्ति धारण किये रहा, क्योंकि इसके पेट में तो और ही बात समाई हुई थी। उसके ससुर ने पूछा कि—"आप उदासीन क्यों हैं?" और आपने इस दफे हमसे कोई चीज नहीं मांगी सो जो आपकी इच्छा हो सो माँगिये।" अपने ससुर बादशाह का विशेष आग्रह देख इस बादशाह ने कहा कि—"हमारे शहर का प्रबन्ध ठीक नहीं है इसलिए आप अपने शहर के कोतवाल को हमारे यहां प्रबन्ध करने के लिये हमें दे दीजिये, दूसरे हमारे शहर की सरायों में बड़ी गड़बड़ा मची रहती है इसलिये आप अपने यहाँ की फलां भटियारिन को भी दे दीजिये।" बादशाह का दामाद दो-नों को दहेज में ले विदा कराकर रुखसत हुआ और कोतवाल तथा भटियारिन दोनों रास्ते में बड़े खुश होते चले जाते थे कि अब तो हमारी खूब बन आई यहां जाकर सैकड़ों हमारी मातहती में रहेंगे और हमारी बड़ी इज्जत तथा तरक्की होगी इधर बादशाह ने अपने शहर में पहुंच कर दूसरे ही रोज आम दरबार किया और उन पान बढ़नेवाले दोनों स्त्री पुरुषों को बुलवा कर पूछा कि—"फलां तारीख को फलां महीने में फलां

तक जब तुमने अपना बान उरझने पर अपनी स्त्री से बात सुरझा देने के एवज में चार टके की चार बातें बतलाई थीं वे कौन सी बातें हैं?" यह बेचारा डर के मारे कुछ बतला नहीं सकता था। पुन बादशाह ने उसे धीरज देकर कहा कि–' तुम घबडाओ नहीं, बल्कि प्रसन्नता पूर्वक अपनी बातें कहो।" बानवाले ने कहा कि— 'हुजूर, पहली बात तो एक टके की यह थी कि अपना काम किसी के भरोसे पर न छोडे। पुन. बादशाह ने अब अपने दफ्तर की जाच की तो बडा ही उलट पलट और बडी गलतिया पाई यहां तक कि करोडो रुपया लोग गबन कर गये थे। बादशाह ने उन सबको उचित दण्ड दे बानवाले से कहा कि—"तुम्हारी यह बात एक टके की नहीं किन्तु एक लाख की थी।" पुन बादशाह ने कहा कि आप अब अपनी दूसरी बात सुनाइये। तब तो बानवाले ने कहा कि—"हुजूर दूसरी बात यह है कि अपनी स्त्री को कभी मायके में न रक्खे।' तब तो बादशाह ने अपनी बेगम को दरबारे आम में बुला कर कहा—"क्यों हरामजादी! तू मायके में रह कर कोतवाल से मोहब्बत करते हुए मुझसे इतनी विरुद्ध हो गई थी कि मेरे मार डालने का हुक्म दे दिया था?" इतना कह बादशाह ने गरम तेल कराकर उसकी मूत्रेन्द्रिय में डला कर उसे मरवा डाला। और बानवाले से कहा कि—"तुम्हारी दूसरी बात एक टके की नहीं बल्कि दो लाख रुपये की थी। अब आप कृपा कर अपनी तीसरी बात सुनाइये।' बानवाला बोला कि–' सरकार तीसरी बात यह थी कि कमीने की नौकरी कभ. न करे। यह सुन बादशाह ने कोतवाल साहब को बुला कर कहा– 'क्योजी, जब मैं आपके यहां रोटियो पर नौकर था और हुक्का भरता था तो आपने इस हरामजादी के कहने पर मुझे जल्लादों के सुपुर्द किस अपराध पर किया था? कोतवाल

उत्तर ही क्या देता, अत. बादशाह ने कोतवाल साहब को भी अहदम रसीद किया और बानवाले से कहा कि—"यह तुम्हारी तीसरी बात एक टके की नहीं बल्कि तीन लाख की थी और अब कृपा कर अपनी चौथी बात सुनाइये। बानवाले ने कहा—"महाराज, चौथी बात यह है कि अपनी धरोहर किसी के पास छिपा कर न रक्खे। इस बात को सुन कर बादशाह ने भटियारी को बुला कर कहा कि—"हमने, जो तेरे पास एक हजार अशरफियाँ इस शर्त पर रक्खी थीं कि समय पड़ने पर ले लूंगा, पर जब मैं जल्लादों के साथ तेरे पास अशरफियां मांगने गया तब तू साफ़ इनकार कर गई और ऊपर से मुझे खण्ड खण्ड बाते सुनाईं।' भटियारी हाथ जोड़ क्षमा माँगने लगी। तब बादशाह ने कहा—"उस समय तुझे मेरी जान नहीं प्यारी थी तो इस समय मुझे तेरी जान क्यों कर प्यारी हो सकती है, अत बादशाह ने भटियारिन को कमर तक गड़वा कर शिकारी कुत्ते उस पर छोड़ उसे नोचवा डाला और बानवाले से कहा कि—"तुम्हारी यह चौथी बात भी एक टके की नहीं बल्कि चार लाख की थी।' इस प्रकार बानवाले को दस लाख दे विदा किया।

> हारं वक्षसि केनापि दत्तमज्ञेन मर्कटः ।
> लेढि जिघ्रति सङ्क्षिप्य करोत्युन्नत मासनम् ॥

१४२—राजा भोज का विद्या का शौक

यह बात भली भांति प्रसिद्ध है कि राजा भोज के यहां जो कोई नई कविता करके ले जाता था उसको महाराज बहुत

धन दिया करते थे। एक बार चार मूर्खों ने यह विचार किया कि बहुत से लोग कुछ न कुछ कविता बना जबे महाराजा भोज के यहा से पुष्कल धन ले आते हैं तो हम तुम भी कोई कविता बनावें। सबों ने कहा, बात तो बड़ी अच्छी है। अब सब के सब कविता बनाने में प्रवृत्त हुये कि उन में से एक बोला कि—'मुनुन मुनुन रहटा मुन्नाय' लो हमारा तो बन गया। दूसरा बोला कि—"तेली का बैल खरी भुस खाय।' मेरा भी बन गया। तीसरा बोला—"डगर चलन्ते तरकस बन्द।' मेरा भी बन गया। चौथा बोला कि—'राजा भोज हैं मूसर चन्द।" तुम्हारा सब का बन गया तो मेरा भी बन गया। अब तो चारो की यह सम्मति पड़ी कि यह कविता चल कर महाराज भोज को सुनावें और यह विचार कर चारो महाराज भोज की ड्योढी पर पहुंचे। परन्तु महाराज भोज की ड्योढी पर प्रायः महा कवि कालीदास भी रहा करते थे। इन चारों ने कालीदास से कहा कि—"हम लोग कुछ कविता बना कर लाये हैं सो महाराज को सुनाना चाहते हैं।' परन्तु कालीदास इनकी शक्ल देख बोले—"क्या कविता बना लाये हो जो महाराज को सुनाना चाहते हो? प्रथम हमें तो सुनाओ।' यह सुन उसमें से एक बोला कि—'मुनुन मुनुन रहटा मुन्नाय।' कालीदास ने कहा—तुम्हारी कविता अच्छी है।' दूसरा बोला—'तेली का बैल खरी भुस खाय।' कालीदास ने कहा—'तुम्हारी भी अच्छी है।' तीसरा बोला कि—'डगर चलन्ते तरकस बन्द।' कालीदास ने कहा—'तुम्हारी भी अच्छी है। चौथा बोला कि—"राजा भोज हैं मूसरचन्द। कालीदास ने कहा—'तुम्हारी कविता अच्छी नहीं है, इसलिये तुम ऐसा कहना कि—"राजा भोज ऊँमे शरद के चन्द्र।' चौथे मूर्ख ने मान लिया और चारो महाराज भोज के पास पहुंचे ... को दण्ड

र बोले कि—"महाराज, हम लोग आपको कुछ कविता सुनाने आये हैं। महाराज उनकी शकल देख और इनके मुख से ऐसे शब्द सुन बड़े प्रसन्न हो इनकी ओर मुखातिब हो बोले कि—'तुम लोग अपनी कविता सुनाओ। उनमे से एक बोला कि—"सुनुन सुनुन रहटा मुन्नाय। महाराज ने इस विचारे की यह रुचि और साहस देख कि यद्यपि यह पढा नहीं है पर इसकी इस ओर रुचि और इतना साहस तो हुआ कि इतने अक्षर जोड हमारे पास तक आया अत. महाराज ने कहा कि १००) इन्हे पारितोषिक दिये जायें। दूसरा बोला कि– 'तेली का बैल खरी भुस खाय। महाराज ने इसे भी १००) रुपये के पारितोषिक की आज्ञा दी। तीसरा बोला कि –'डगर चलन्ते तरकस बन्द। महाराज ने इसे भी १००) रुपये पारितोषिक देने की आज्ञा दी। चौथा बोला कि—राजा भोज जैसे शरद के चंद। राजा भोज ने यह सुन विचारा कि इसका साथ तो इन तीन मूर्खों का है और यह भी कुछ पढा लिखा नहीं मालूम पड़ता है। यह शब्द कहीं से पा गया या किसी से पूछ आया है नहीं तो ऐसे शब्द यह कभी नहीं बना सकता अतएव राजा भोज ने कहा कि–'इसे एक कौडी भी न दी जाय। तब वह मूर्ख बोला कि—'महाराज हमारा छन्द कालीदास ने बिगाड डाला।' महाराज भोज ने कहा कि 'अच्छा जो तुम बना लाये हो वह कहो। तब वह बोला कि पहले हमारा छन्द ऐसा था कि—'राजा भोज हैं मूसर चन्द। महाराज ने कहा कि—अब ठीक है। अब इसे २००) पारितोषिक दिये जाँय। धन्य हैं महाराज भोज को। अभागे भारत! तेरे वे दिन अब कहां गये?

१४३–पुराने काल में यज्ञों का प्रचार

जिस समय महाराज रामचन्द्र और लक्ष्मण वन को जाते थे और प्रयाग कुछ ही दूर रह गया था तो लक्ष्मण ने महाराज रामचन्द्र से पूछा कि—

किमय दृश्यते तात धूमपुञ्जोयमग्रतः ।
प्रयागो दृश्यते तात यजन्तेत्र महर्षय ॥

भाई जी यह धुएं की गुबारी जो आगे उठ रही है सो क्या दिखलाई पड़ता है ? महात्मा राम ने उत्तर दिया कि भाई, लक्ष्मण यह प्रयाग दिखलाई पड़ता है यहां महर्षि लोग यज्ञ कर रहे हैं उसका यह धुआं है बल्कि प्रिय लक्ष्मण इसका प्रयाग नाम ही इस लिये पड़ा है कि 'प्रकृष्टेन यजते यस्मिन असौ स प्रयाग ।' जिसमें प्रकृष्ट रूप से यज्ञ हों वह प्रयाग कहलावे ।

पुन किसी कवि ने कहा है—

यदि कदाऽपि पुरा पतिता श्रु र श्रुतिगताहि द्विजानद ताऽन्यथा ।
परमिय वसुधाऽत्र विना क्रतु परिनताऽश्रुजलैरिति चिंतताम् ॥

पुराने ज़माने में यदि कभी किसी के आंसू निकलते थे तो केवल यज्ञ के धुएं से, नहीं तो प्रजा की आंखों से कभी आंसू नहीं निकलते थे ।

१४४–पहले हमारे यहां अधर्मी न थे

एक महात्मा को एक ब्राह्मण निमन्त्रण देने गये तो महात्मा ने इनकार किया । पुन. ब्राह्मण ने कहा कि—

नमे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपो ।
नानाहिताग्निर्नाविद्वान स्वैरी न च स्वैरिणी ॥

अर्थ—महाराज! न हमारे यहा कोई चोर है और न कोई कदर्य अर्थात् कंजूस न शराबी और न अग्निहोत्र से रहित, न मूर्ख न पर-स्त्री गामी और न स्त्रिय ही पर पुरुष गामिनी है फिर आप हमारे यहा भोजन करने क्यों नहीं चलेंगे? यह वाक्य सुन महात्मा ने निमन्त्रण स्वीकार कर जा के भोजन किया और जाकर यह देखा कि सम्पूर्ण मनुष्यों के घरों में उनके मकानों की धाबरा धुयें से काली हो रही थीं।

१९५—बाल विवाह

अजातो न चिरंजीवेत् जीवे वा दुर्बलेन्द्रिय ।
तस्मादत्यन्तबालाया गर्भाधान न कारयेत् ॥

एक ब्राह्मण ने अपनी कन्या का व्याह आठ ही वर्ष में कर दिया। ब्राह्मण अपने घर का सम्पन्न था और कुछ पढ़ा लिखा भी था इस कारण वह अपनी कन्या को भी पढ़ाया करता था और ब्राह्मण का समधी और दामाद दीन होने के कारण कलकत्ता में नौकर थे। ब्राह्मण का दामाद बड़ा ही छैल और गरीब गुण्डा तथा उजाड़ भी था। अपने बाप से बिलकुल नहीं डरता था। व्याह होने के बाद सोलह वर्ष लगातार वह परदेश में रहा और ब्राह्मण की कन्या यहा पढ़ लिख कर बहुत कुछ योग्य हो गई। सोलह वर्ष के बाद जब ब्राह्मण का दामाद आया तो ब्राह्मण ने उसकी बड़ी खातिर की। जब रात का समय आया तो ब्राह्मण की लड़की से उसकी सभी सहेलियों ने कहा कि—"तुम्हारे पति आये हैं, जाकर उनकी सेवा करो।" उसने उत्तर दिया कि—"किसका पति? मेरा पति यह हर्गिज़ नहीं है।" सखियों ने कहा—"क्यों? क्या तुम्हारे मा बापने तुम्हारा व्याह इसके साथ नहीं किया?" लड़की ने कहा—"तो यह मेरे मां

बाप के पति होंगे, सा बाप उनकी सेवा करें। मैंने उसके साथ कोई प्रतिज्ञा नहीं की।" सखियों ने कहा—"तुम छोटी थीं,तुम्हें याद नहीं, तुमने छोटेपन में प्रतिज्ञा की है।' लड़की ने कहा—जब कि मैं अपने ठीक ठीक होशहवास में ही न थी तो प्रतिज्ञा कैसी ?" पुन जब ये समाचार ब्राह्मण और उसकी स्त्री को मालूम हुआ तो उन दोनों ने अपनी लड़की को बहुत समझाया और बोले कि-'यह विदा कराने आये हैं, तू ऐसा कहती है!' लड़की ने बाप से कहा कि-'तो आपही विदा हो के उसके साथ चले जाइये, क्योंकि आपने व्याह किया और आप ही का वह पति है।' आखिर यह मुकद्दमा अदालत तक पहुँचा, वहां साहब मजिस्ट्रेट के पूछने पर लड़की ने कहा कि—"मेरा व्याह मुझे मालूम भी नहीं कब हुआ और किसने प्रतिज्ञा की। अब यह न मालूम कौन कहां से आ गया। मेरा बाप कहता है कि तुम इसके साथ जाओ, मैंने तुम्हारा इसके साथ व्याह किया है। तो मैंने बाप से कहा कि जब तुमने विवाह किया तो तुम्हीं इसके साथ विदा हो के चले जाओ, मैंने इसके साथ कोई इकरार नहीं किया।' आखिर मुकद्दमा खारिज हो गया और लड़की को हुक्म हुआ कि तुम अपना व्याह अपनी मर्जी के मुआफिक कर सकती हो।

१४६—पूर्व स्त्रियों की वीरता

पूर्व स्त्रियों की विद्या और योग्यता से ग्रन्थ के ग्रन्थ भरे हुए हैं और ऐसा कौन व्यक्ति होगा जो भारत की देवी गार्गी मैत्रेयी, कात्यायिनी, सुलभा आदि की ब्रह्मविद्या तथा कैकेई, दुर्गावती, ताराबाई, संयोगिता, लक्ष्मीबाई की वीरता, पद्मावती सीता, आदि का सतीत्व न जानता हो। परन्तु हमें दिखलाना तो यह है कि अभी गये गुजरे समय में आपके यहां एक एक

स्त्री इतनी योग्या और विदुषी होती थी कि जिसके लिए मैं आपके सामने महारानी विद्योत्तमा का चरित्र उपस्थित करता हूं

विद्योत्तमा एक बडी ही सुयोग्य और विदुषी कन्या थी। उसने एक विद्या का संग्रामरूपी यज्ञ रच रक्खा था अर्थात् संसार भर में यह विज्ञापन दे रक्खा था कि जो कोई मुझे शास्त्रार्थ में आकर जीत ले उसी के साथ में अपना व्याह करूंगी रूप में भी यह एक ही रूपवती थी इस कारण बड़े २ विद्वानों ने आ आ कर इसके साथ शास्त्रार्थ किये, परन्तु संग्राम में वे पराजित हो अपना सा मुंह ले ले चले गये। विद्योत्तमा इस शोक में थी कि क्या संसार में मुझे कोई वर न मिलेगा। उन परास्त पण्डितों ने यह सम्मति की कि इसका व्याह ऐसे मूर्ख के साथ कराना चाहिये कि जो एक अक्षर भी न जानता हो। अत वे मूर्ख की खोज करने लगे। एक जगह एक पुरुष एक वृक्ष पर जिस डाली पर बैठा था उसे ही काट रहा था। पण्डितों ने यह दृश्य देख विचार किया कि इससे बढकर मूर्ख शायद अब संसार भर में न मिलेगा, अत विद्योत्तमा का व्याह इसीसे कराना चाहिये। बस, पण्डितों ने विद्योत्तमा के सामने उस मूर्ख को लेकर खड़ा कर दिया और कहा—'आप इससे शास्त्रार्थ कीजिये।' विद्योत्तमा ने एक अंगुली उठाई जिसके माने यह थे कि ब्रह्म एक है या दो? पण्डित ने इसे समझा कि यह कहती है कि मैं तेरी एक आँख यह अंगुली घुसेड कर फोड दूंगा। तब तो वह दो अंगुली उठा मन में बोला कि अगर तू मेरी एक आंख फोडेगी तो मैं तेरी दोनों फोड दूंगा जिस का अभिप्राय पण्डितों ने यह समझाया कि कहना है एक जीव और एक ब्रह्म। पुन विद्योत्तमा जोने पाँच अंगुलियें उठाईं जिस का मतलब यह था कि पाचों इन्द्रियें तुम्हारे वश में हैं? पण्डितों ने इस मूर्ख से कहा कि कहती हैं कि थप्पड मारूंगी। इस मूर्ख

ने मूठी बाध के घूंसा उठाया और मन में बोला कि अगर तू थप्पड मारेगी तो घूंसा मारूंगा। इसका अभिप्राय पण्डितों ने विद्योत्तमा को समझाया कि कहता है कि पांचों इन्द्रिया मेरे मूठा में हैं। आखिर विद्योतमा का ब्याह उस मूर्ख कालीदास से हो गया। जब रात में वे दोनों स्त्री पुरुष इकट्ठे हुये तो अचानक एक ऊंट उस समय किसी का छूट कर बलबलाता जा रहा था। मूर्ख कालीदास बोला कि उट्ट उट्ट उट्ट। यह सुन विद्योत्तमा ने समझ लिया कि यह मूर्ख है। महाराणी विद्योत्तमा ने उस भेड़ों के चरानेवाले गडरिये मूर्ख कालीदास को इस प्रकार पढ़ाया कि वही कालीदास रघुवंश और मेघदूत सरीखे काव्यों का रचयिता हुआ और संसार में उसने महाकवि की उपाधि प्राप्त की। यह सब उसकी स्त्री का ही प्रताप था। एक भाषा कवि का वाक्य है कि—

> दमयन्ति सीता गार्गी लीलावती विद्याधरी।
> विद्योत्तमा मन्दालसा थीं शास्त्रशिक्षा से भरी॥
> ऐसी विदुषी स्त्रियें भारत की भूषण होगई
> धर्मव्रत छोड़ा नहीं गो जान अपनी खो गई॥

१४७—अन्धेर नगरी अनबूझ राजा

एक ग्राम बड़ा ही रमणीक और सुन्दर था। वहां प्रायः सभी चीज सदैव टके सेर बिका करती थी। एक गुरु और उनके दो चेले एक बार चलते चलते उसी गांव में पहुच गये। गुरु ने गाव के लोगो से पूछा—'भाई, ग्राम का क्या नाम है? लोगो ने कहा— अन्धेर नगरी चौपट्ट राजा, टके सेर भाजी टके सेर खाजा।' गुरु ने कहा कि चल कर तो देखें कैसी अन्धेर नगरी है जहा सब चीज टके सेर ही बिकती है। अब

गाव में जा बाजार पहुंचे तो-अनाजवालों से पूछा कि-'भाईजी कितने सेर? दूकानदार ने कहा—टके सेर और गेहूं टके सेर और चावल टके सेर और सरसों।' पुन: हलवाइयों के पास जाकर पूछा—अरे भाई हलवाई, बरफी कितने सेर?' हलवाई ने कहा—'टके सेर और पेड़ा टके सेर और बताशा टके सेर।' पुन: बजाजों से पूछा 'भाई बजाज, मारकीन क्या भाव?' बजाज बोले—'टके सेर, मलमल टके सेर, रेशम टके सेर।' पुन: काछियों के पास जा पूछा—'पालक क्या भाव?' काछी बोले—'टके सेर, बैंगन टके सेर।' गुरु ने यह दशा देख चेलों से कहा—'अरे भाई चेलो, सुनो—

छेदश्चन्दन चूत चम्पक वने रक्षा करीर द्रुमे।
हिंसा हंस मयूर कोकिल कुले काकेषु नित्यादरः॥
मातंगेन खरक्रय समतुला कर्पूर कार्पासयो।
एषायत्र विचारणा गुणिजनो देशाय तस्मै नमः॥
सेत सेत जहँ एक से, दधि अरु दूध, कपास।
ताहि राज्य में ना करिय, भूलि के कबहूँ बास॥

इसलिए चलो यहां से भाग चलें। उन दो चेलों में से एक चेला बोला-गुरुजी, हम तो यहां से न जायेंगे, मजे से टके सेर मलाई ले ले उड़ावेंगे।' गुरुजी ने कहा—'अच्छा बेटा, मत चलो, पर एक बात हम कहे जाते हैं कि शायद तुम्हें कोई कभी आपत्ति आ पड़े तो हम अमुक शहर में रहेंगे, तुम हमें बुला लेना।' पुन: गुरुजी एक चेला को ले कर चले गये और यह दूसरा चेला टके सेर मलाई खा खा कर मोटा हुआ क्योंकि गाँव के लोग तो बिचारे बहुत ही दुबले और टके सेर घी पिये से हैरान थे, पर इन चेला जी की तो यह दशा था कि—

ज्ञान के फिकर न धन कै ख्वाट । ई धमधूसर काहे ख्वाट ॥

परन्तु कुछ दिन के बाद जब बरसात आई तो एक तेली की दीवार गिर पडी कि जिससे एक गडेरिये की भेड कुचल गई। दीवारवाले ने राजा के यहां जाकर नालिश की कि—'हुजूर गडेरिये की भेड ने मेरी दीवार को कुचल डाला। राजाने गडेरिये को तलब किया और पूछा-'क्यों रे गडेरिये, तेरी भेड ने तेली की दीवार को किस तरह कुचल डाला ?' गडेरिया बोला– हुजूर राज ने दीवार ही इसप्रकार की बनाई कि जो भेड ने कुचल डाला, इसलिये राज का कुसूर है। अब गडेरिया गया और राज आया। राजाने उससे पूछा—क्योंरे राज तूने तेली की दीवार किस तरह की बनाई जो दीवार को भेड़ने कुचल डाला और दीवार गिर गई ? राज बोला–हुजूर, गारेवालों ने गारा ढीला कर दिया, इसलिये गारेवालों का कुसूर है।' अब राज गया और गारेवाले आये। राजा ने पूछा–'क्योंरे गारेवालो, तुम लोगों ने गारा क्यों ढीला किया कि जिससे दीवार राज से कमजोर बनी और दीवार को भेड़ ने कुचल डाला ? गारेवालों ने कहा कि–'हुजूर, हम क्या करें भिश्तीने पानी ज्यादा डाल दिया, इसलिये भिश्ती का कुसर है।' गारेवाले गये भिश्ती आया। राजा ने पूछा 'क्यो रे भिश्ती तूने गारे में पानी ज्यादा क्यों डाला जिससे गारेवालों से गारा ढीला हो गया और राज से दीवार कमजोर बनी कि जिससे गड़ेरिये की भेड ने तेली की दीवार कुचल डाली ?' भिश्ती बोला–'हुजूर, हम क्या करें, मशकवाले ने मशक बडी बना दी कि जिससे पानी ज्यादा आ गया इस लिये मशकवाले का कुसूर है।' अब भिश्ती गया मशकवाला आया। राजाने पूछा —क्योरे मशकवाले, तूने इतनी भारी मशक क्यो बनाई कि

जिससे भिश्ती से पानी ज्यादा गिर गया और गारेवालो से गारा ढीला हो गया और राज से दीवार कमजोर बनी कि जिससे गडेरिये की भेड ने तेली की दीवार कुचल डाली ?' मशकवाले ने कहा कि–'हुजूर, मैं क्या करू अब की दफे शहर के कोतवाल ने शहर की सफाई अच्छी तरह नहीं कराई कि जिससे वडे २ पशु मर गये और मशक वडी बन गई इसलिये कोतवाल का कुसूर है ।' अब मशकवाला गया और कोतवाल आया । राजा ने पूछा—'क्योजी कोतवाल, तुमने इस साल शहर की सफाई क्यो नही कराई कि जिससे वडे २ पशु मर गये और मशकवाले से मशक वडी बन गई और भिश्ती से पानी ज्यादा गिर गया जिससे गारेवालो से गारा ढीला हो गया और राज से दीवार कमजोर बनी कि जिससे गडेरिये की भेंट ने तेली की दीवार को कुचल डाला ?' कोतवाल कुछ न बोला । राजा ने कोतवाल को एकदम सूली का हुक्म दिया जब जल्लादो ने कोतवाल को ले सूली पर चढाया और कोतवाल के दुवले होने के कारण फासी ढीली हुई तो जल्लादो ने राजा से आकर कहा कि–'हुजूर, कोतवाल को लेजाकर सूली पर चढाया लेकिन सूली ढीली होती है ।' यह सुन राजा ने कहा-'ओ, हमारी फासी मोटा मागती है अच्छा, शहर भर में जो मोटा आदमी मिले कोतवाल के बदले में चढा दिया जाय ।' यह आज्ञा पा राजदूत शहर में मोटा आदमी ढूढने निकले, परन्तु उस नगर में मोटा आदमी कहा । अब तो वही गुरु के चेले जो गुरु के कहने पर नही गये थे और गुरु ने कहा था कि हम तो यहा टके सेर मलाई ले ले कर उडायेंगे और मोटे करेंगे राजदूतों को मिल गये । राजदूतों ने इन्हे पकड कहा–'चलिये, आपको राजा की फासी का हुक्म है ।' इन्होंने कहा–'मेरा अपराध क्या ?' दूतो ने कहा–...

नहीं, राजा की फासी मोटा मांगती है।' अब तो इन्होंने फौरन ही गुरु को खबर दी। जिस दिन ये सूली पर चढ़ने लगे कि त्योंही गुरुजी आगये। इनसे पूछा गया कि—'तुम किसी से मिलना चाहते हो?' इन्होंने कहा कि-'हम अपने गुरु से मिलना चाहते हैं।' अतः इन्हें गुरु से मिलने की इजाजत दी गई। जब ये गुरु से मिलने गये तो गुरुने इनसे चुपके से कह दिया कि-तुम कहना हम फासी चढ़े गे और हम कहेंगे हम चढ़े गे, इस तरह तुम हम से झगड़ना तो हम फाँसी से तुम्हें बचा ले गे।' बस ऐसा ही हुआ कि वहीं फौरन दोनों झगड़ने लगे। चेला कहता था कि मैं फांसी चढ़ूगा। गुरु कहता था कि मैं फासी चढ़ूंगा। यह झगड़ा राजा के पास गया। राजा ने पूछा कि-'भाई, तुम लोग क्यों परस्पर लड़ते हो?' गुरु बोले कि—'हुजूर, आज ऐसा मुहूर्त्त है कि आज जो फासी पर चढ़ेगा वह उस जन्म पृथिवी भर का राजा होगा और अन्त में मुक्तिपद प्राप्त करेगा।' तब तो राजा ने कहा- हटाओ इन को हमी चढ़े गे।' और राजा स्वय सूली पर चढ़ गया।

१४८—अयोग्य श्रोता

एक स्थान पर एक पण्डित वाल्मीकीय रामायण सुना रहे थे। जब रामायण समाप्त हो गई तब श्रोताओं ने कहा कि—'पण्डितजी, रामायण तो आपने सुनाई, परन्तु अब तक हम यह न समझे कि राम राक्षस थे या रावण?' तब तो पण्डितजी ने उत्तर दिया कि—भाई, न राम राक्षस थे न रावण राक्षस तो हम हैं जिन्होंने तुम सरीखे श्रोताओं को कथा सुनाई।

उल्लू बसन्त

एक उल्लू बसन्त का बाप बहुत साइदाद छोड़कर मरा था

परन्तु इसने अपने उल्लूपने से अपने द्रव्य का नाश कर दिया यहाँ तक कि इसकी स्त्री और बच्चे भूखों मरने लगे। स्त्री ने दुखी होकर कहा कि—'कुछ व्योपार किया करो, इस प्रकार कैसे पार होगी?' यह बोला कि—'अच्छा आज तो धन्धा ढूंढ़ कर ले आओ, कल व्योपार करूंगा।' इसी प्रकार यह नित्य किया करता था। एक दिन उसकी स्त्री बैठ रही कि अब पड़ोसी भी नहीं देते कि जहां से उधार ले आऊं' और वास्तव में यही दशा थी, अब उल्लू बसन्त निराश हो बोला कि—'मुझे एक खुरपा ला दे तो मैं घास छील लाऊं और उसे बेच लाऊंगा।' स्त्री ने किसी पड़ोसी को खुरपी मांग कर ला दी। यह खुरपी ले प्रातःकाल से इधर उधर घूमता घामता गया और मरता हुआ १० बजे वन में पहुंचा। वहां एक स्थान पर खड़े होकर खुरपी से अपने पग काटने लगा कि इतने में एक बटोही आ निकला और उसने कहा कि—'भैया खुरपी से पग क्यों काटते हो? यह खुरपी तुम्हारे हाथ में कहीं लग जायगी।' यह बोला—'उंह, मेरे कहीं हाथ कटा करते हैं।' बटोही थोड़ी ही दूर गया था कि, इतने में इसका हाथ कट गया और यह हाथ के कटते ही खुरपी डाल कर बटोही की ओर दौड़ा और हाथ जोड़ कर उसके चरणों में गिर पड़ा और कहा कि—'महाराज, आप तो साक्षात परमेश्वर हो।' उसने कहा—'भला क्यों?' उल्लूबसन्त बोला—'यदि आप ईश्वर न होते तो यह कैसे आगे से जान लेते कि मेरा हाथ कट जायगा, अतएव आप कृपा कर हमें यह बता दें कि हम कब मरेंगे?' बटोही ने यह सुन कर समझ लिया कि यह कोई पक्का उल्लू ही है। उसने कहा कि—''जब तक तेरा डोरा नहीं टूटेगा तब तक तू नहीं मरेगा और जिस दिन तेरा डोरा टूट जायगा उसी दिन तेरी मौत है।'' बस यह उल्लूबसन्त

१५९—उल्लू का दादा उल्लूसिंह

एक उल्लू का दादा उल्लूसिंह करके मशहूर था । उसका रोजगार कहीं नहीं लगता था । एक वकील साहब को नौकर की चाहना हुई । दैवयोग से उल्लूसिंह को तलाश कर उन्होंने नौकर रख लिया । वकील साहब ने कहा— 'यह वर्दी पहले सिपाही की रक्खी है सो तुम पहन लो ।' और कोट पायजामा साफा तथा एक तलवार भी उसे दे दी और कहा- 'मेरे सामने पहन कर दिखाओ ।' उन उल्लू ने कोट की बाहें पैरों में चढ़ाईं और साफा कमर में बाँध लिया पैजामा हाथों में पहन लिया म्यान फाड़कर गले में डाल ली और तलवार को पूछा 'इसने क्या करते हैं ?' वकील बोला—'यह उस वक्त काम आवेगी जब कोई हम से बोलेगा उसी वक्त साले को मार देना, यही तुम्हारा काम है ।' उल्लू के पहनावे को देख वकील साहब खूब हँसे और उसे पहनना सिखाया । एक दिन उस वकील का साला आया और वकील से बातें करने लगा । उल्लू ने तलवार निकाल कर एक ऐसा हाथ मारा कि साले साहब के दो टुकड़े हो गये । वकील बोला—'अरे यह क्या किया ?' वह बोला— मेरा क्या कसूर है, आपने कहा कि कोई साला हमसे बोले, उसे मार देना, सो साला तुमसे बोला था मैंने मार दिया । फिर तो पुलिस ने मुकदमा कायम किया । वकील ने उल्लू से कहा—'कलमदान उठा ला, अर्जी लिखूँगा ।' यह उल्लू इधर उधर देख बोला कि— हुजूर, कलमदान न हो तो फुकनी उठा लाऊँ ।' वकील और पुलिस के लोग हँसने लगे और मुकदमा खारिज कर दिया ।

१५१-दुनिया में सब से बड़ी बात

एक राजा ने अपने दीवान के मरने के पश्चात् नियमा-नुसार दीवान के लड़कों के पढ़ने का पूर्ण प्रबन्ध कर दीवान का स्थानापन्न दूसरा दीवान उस समय तक के लिए नियत किया जब तक पूर्व दीवान के लड़के पढ़ लिख कर योग्य न हो जाय। कुछ काल के पश्चात जब पूर्व दीवान के लड़के पढ़ लिख कर योग्य हुए तब इस स्थानापन्न दीवान ने ६६ सहस्र मुद्रा पूर्व दीवान के नाम राजा के खाते में डाल दिये और जब राजा पूर्व दीवान के लड़कों को दीवान पद देने लगे तब इस दीवान ने राजा के सामने खाता ले आकर रख दिया और कहा कि-"अन्नदाता, इन बच्चों के बाप के नाम ६६ सहस्र मुद्रा आप का [illegible] हुआ है, जब तक यह सम्पूर्ण रुपया आप का ना चुका दें तब तक पद इन्हें न दिया जावे।" राजा की भी समझ में पैसा ही आ गया, अत राजा ने लड़कों से कहा-"जब तक तुम हमारा सब रुपया न दे दोगे, तब तक तुम्हें यह पद न मिलेगा।" पूर्व दीवान के लड़के तो बड़े ही चतुर और बुद्धिमान थे अतएव बच्चों ने कहा-"श्रीमान यदि हमें दीवान पद नहीं दिया जाता तो जब तक हम दोनों को कोई अन्य काम दिया जावे जिससे हमारे पेट का पालन हो और आपका रुपया भी पटे।" राजा ने बच्चों की प्रार्थना सुन एक बच्चे को अपनी ड्यूढ़ी पर दर्बानी का काम और दूसरे को बागीचे में माली का काम दे दिया। बच्चे बहुत दिन तक यह काम करते रहे, परन्तु इन कामों में बच्चों को वेतन केवल इतना ही मिलता था कि जितने से उनके पेट का पालन हो सके, ... ों ने सोचा कि इस प्रकार तो हम लोगों से कभी ... रुपया नहीं दिया जा सकता है और न दीवान ... ता है,

१५९—उल्लू का दादा उल्लूसिंह

एक उल्लू का दादा उल्लूसिंह करके मशहूर था। उसको रोजगार कहीं नहीं लगता था। एक वकील साहब को नौकर की चाहना हुई। दैवयोग से उल्लूसिंह को तलाश कर उन्होंने नौकर रख लिया। वकील साहब ने कहा—'यह वर्दी पहले सिपाही की रक्खी है सो तुम पहन लो।' और कोट पायजामा साफा तथा एक तलवार भी उसे दे दी और कहा—'मेरे सामने पहन कर दिखाओ।' उस उल्लू ने कोट की बाहें पैरों में चढ़ा और साफा कमर में बाँध लिया पैजामा हाथों में पहन लिया म्यान फाड़कर गले में डाल ली और तलवार को पूछा—'इससे क्या करते हैं?' वकील बोला—'यह उस वक्त काम आवेगी जब कोई हम से बोलेगा उसी वक्त साले को मार देना, यही तुम्हारा काम है।' उल्लू के पहनावे को देख वकील साहब खूब हँसे और उसे पहनना सिखाया। एक दिन उस वकील का साला आया और वकील से बातें करने लगा। उल्लू ने तलवार निकाल कर एक ऐसा हाथ मारा कि साले साहब के दो टुकड़े हो गये। वकील बोला—'अरे यह क्या किया?' वह बोला—'मेरा क्या कसूर है, आपने कहा कि कोई साला हमसे बोले, उसे मार देना, वो साला तुमसे बोला था मैंने मार दिया।' फिर तो पुलिस ने मुकदमा कायम किया। वकील ने उल्लू से कहा—'कलमदान उठा ला, अर्जी लिखूँगा।' यह उल्लू इधर उधर देख बोला कि—'हुजूर, कलमदान न हो तो फुकनी उठा लाऊँ।' वकील और पुलिस के लोग हँसने लगे और एक हुआ मन्दिर देर दिया।

१५१–दुनिया में सब से बड़ी बात

एक राजा ने अपने दीवान के मरने के पश्चात् नियमानुसार दीवान के लड़कों के पढ़ने का पूर्ण प्रबन्ध कर दीवान का स्थानापन्न दूसरा दीवान उस समय तक के लिए नियत किया जब तक पूर्व दीवान के लड़के पढ़ लिख कर योग्य न हो जाय। कुछ काल के पश्चात् जब पूर्व दीवान के लड़के पढ़ लिख कर योग्य हुए तब इस स्थानापन्न दीवान ने ९६ सहस्र मुद्रा पूर्व दीवान के नाम राजा के खाते में डाल दिये और जब राजा पूर्व दीवान के लड़कों को दीवान पद देने लगे तब इस दीवान ने राजा के सामने खाता ले जाकर रख दिया और कहा कि–"अन्नदाता, इन बच्चों के बाप के नाम ९६ सहस्र मुद्रा आप का [illegible] हुआ है, जब तक यह सम्पूर्ण रुपया आप का न आ चुके तब तक पद इन्हें न दिया जावे।" राजा की भी समझ में ऐसा ही आ गया, अतः राजा ने लड़कों से कहा–"जब तक तुम हमारा सब रुपया न दे दोगे, तब तक तुम्हें यह पद न मिलेगा।" पूर्व दीवान के लड़के तो बड़े ही चतुर और बुद्धिमान थे अनन्तर बच्चों ने कहा–"श्रीमान यदि हमें दीवान पद नहीं दिया जाता तो जब तक हम दोनों को कोई अन्य काम दिया जावे जिससे हमारे पेट का पालन हो और आपका रुपया भी पटे।" राजा ने बच्चों की प्रार्थना सुन एक बच्चे को अपनी ड्यूढ़ी पर दर्बानी का काम और दूसरे को बागीचे में माली का काम दे दिया। बच्चे बहुत दिन तक यह काम करते रहे, परन्तु इन कामों में बच्चों को वेतन केवल उतना ही मिलता था कि जितने से उनके पेट का पालन हो सके, अब लड़कों ने सोचा कि इस प्रकार तो हम लोगों से कभी ९६ सहस्र रुपया नहीं दिया जा सकता है और न दीवान का पद ही मिल सकता है,

इसलिए कोई ऐसी युक्ति सोचनी चाहिये कि जिससे राजा के ऋण से शीघ्र उऋण हो दीवान पद प्राप्त करें। अतः लड़कों ने आपस में कुछ सम्मति कर दूसरे दिन जब राजा साहब बाहर निकले तो बड़े लड़के दीवान ने पूछा कि—"महाराज, दुनिया में सब से बड़ी चीज़ क्या है ?" राजा ने कहा—"मैं इसका उत्तर कल दूंगा।" दूसरे दिन राजा ने प्रातः काल दरबार में जाते ही इस बात को सम्पूर्ण सभा के लोगों से पूछा कि—"भाई, सभा के लोगों, दुनिया में सबसे बड़ी चीज़ क्या है ?" किसी ने कहा—"अन्नदाता, सबसे बड़ा हाथी।" किसी ने कहा—"सबसे बड़ा ऊँट।" किसीने कहा—"सबसे बड़ी खजूर।" किसी ने कहा—'सबसे बड़ा ताड़' किसी ने कहा "सब से बड़ा पहाड़।" किसी ने कहा—"सबसे बड़ा रुपया किसी ने कहा-"सबसे बड़ा बल' ये सब उत्तर राजा ने दीवान को दिये पर दीवान ने इन में से एक को भी न माना। जब राजा के राज्य में सम्पूर्ण मनुष्य उत्तर दे चुके तो राजा ने सोचा कि अब केवल हमारे बागीचे का माली शेष है, उसे भी बुला कर पूछना चाहिये, देखें वह क्या उत्तर देता है। अतः राजाने पूर्व दीवान के छोटे पुत्र माली को बुला कर पूछा कि—'दुनिया में सब से बड़ी चीज क्या है ?' उसने कहा—'यदि मेरे बापके नाम से ३२ सहस्र रुपया काट दिया जावे तो मैं आप के प्रश्न का उत्तर दूं।" माली की यह बात सुन राजा तथा सम्पूर्ण सभा के लोग चकित हो गये। अन्त में राजाने कहा—'तुम्हारे बाप के नाम से ३२ सहस्र रुपया काट दिया जावेगा, तुम बताओ कि दुनिया में सब से बड़ी चीज़ क्या है ?' माली ने कहा—'दुनिया में सब से बड़ी चीज़ है—"बात।' यह उत्तर सुन राजा को भी मन में निश्चय हो गया कि ठीक है और दीवान ने भी मान लिया पुनः दीवान ने पूछा कि-"महाराज, दुनिया में सबसे

बड़ी चीज बात तो है पर यह रहती कहा है?" राजा ने फिर दर्वान से यही कहा कि 'मैं इस का उत्तर कल दूगा" और राजा ने सभा में आकर उसी भांति पूछा कि—"दुनिया में सब से बड़ी चीज बात तो है, पर यह रहती कहा है?" किसी ने कहा "अन्नदाता धनवानों के पास।" किसी ने कहा—"बलवानों के पास।" किसीने कहा—"विद्वानों के पास।" राजाने पूर्व की भांति ये सब उत्तर दर्वान को दिये, पर दर्वान ने एक भी उत्तर स्वीकार न किया। पुन राजा ने बागीचे से माली को बुलवा यह प्रश्न किया कि—" दुनिया में सब से बड़ी चीज बात है, पर रहती कहा है ?" इसने कहा कि-"महाराज ३२ सहस्र फिर निकलवा दीजिये।' राजा ने यह सुन तुरन्त ही आज्ञा दी कि-"आप उत्तर दें ३२ सहस्र और निकाल दिये जावेंगे।" माली ने उत्तर दिया -" दुनिया में सबसे बड़ी चीज़ बात है और वह रहती है असीलो के पास।" उत्तर सुन कर राजा ने मान लिया और राजा ने दर्वान को यही उत्तर दिया, दर्वान ने भी स्वीकार किया। पुन' दर्वान ने राजा साहब से प्रश्न किया कि-"दुनिया में सब से बड़ी चीज बात, रहती तो है असीलों के पास और खाती क्या है ?" राजा ने कल का वादा कर पुन जाकर दूसरे दिन अपनी सभा में यह प्रश्न किया। प्रश्न सुन सब सभा चकित हो गई और कुछ काल तक तो सभी मौन मार गये। पश्चात् कुछ आदमियों ने सलाह कर कहा—'महाराज, कहीं बात भी खाया करती है ?' राजा ने माली को बुला कर पूछा कि—"दुनिया में सब से बड़ी चीज़ बात, रहती तो असीलों के पास है और खाती क्या है ?" इसने कहा कि—' ३२ सहस्र रुपया जो मेरे पिता के नाम बाकी है यदि वह भी काट दें तो मैं बता दू कि यह खाती क्या है ?" राजा ने उसी समय स्वीकार कर कहा-" आप उत्तर दीजिये।" इसने

इसलिए कोई ऐसी युक्ति सोचनी चाहिये कि जिससे राजा के ऋण से शीघ्र उऋण हो दीवान पद प्राप्त करें। अतः लडकों ने आपस में कुछ सम्मति कर दूसरे दिन जब राजा साहब बाहर निकले तो बडे लड़के दर्वान ने पूछा कि—"महाराज, दुनिया में सब से बडी चीज़ क्या है ?" राजा ने कहा—"मैं इसका उत्तर कल दूगा।" दूसरे दिन राजा ने प्रातःकाल दरबार में आते ही इस बात को सम्पूर्ण सभा के लोगों से पूछा कि—"भाई, सभा के लोगों, दुनिया में सबसे बडी चीज़ क्या है ?" किसी ने कहा—"अन्नदाता, सबसे बडा हाथी।" किसी ने कहा—"सबसे बड़ा ऊँट।" किसी ने कहा—"सबसे बडी खजूर।" किसी ने कहा—"सबसे बडा ताड" किसी ने कहा, "सबसे बडा पहाड।" किसी ने कहा—"सबसे बडा आकाश" किसी ने कहा—"सबसे बड़ा बल" ये सब उत्तर राजा ने दर्वान को दिये पर दर्वान ने इन में से एक को भी न माना। जब राजा के राज्य में सम्पूर्ण मनुष्य उत्तर दे चुके तो राजा ने सोचा कि अब केवल हमारे बागीचे का माली शेष है, उसे भी बुला कर पूछना चाहिये, देखें वह क्या उत्तर देता है। अतः राजा ने पूर्व दीवान के छोटे पुत्र माली को बुला कर पूछा कि—"दुनिया में सब से बडी चीज क्या है ?" उसने कहा—"यदि मेरे बापके नाम से ३२ सहस्र रुपया काट दिया जावे तो मैं आप के प्रश्न का उत्तर दूं।" माली की यह बात सुन राजा तथा सम्पूर्ण सभा के लोग चकित हो गये। अन्त में राजा ने कहा—"तुम्हारे बाप के नाम से ३२ सहस्र रुपया काट दिया जावेगा, तुम बताओ कि दुनिया में सब से बडी चीज़ क्या है ?" माली ने कहा—"दुनिया में सब से बडी चीज़ है—"बात।" यह उत्तर सुन राजा के भी मन में निश्चय हो गया कि ठीक है और दर्वान ने भी मान लिया पुनः दर्वान ने पूछा कि—"महाराज, दुनिया में सबसे

बडी चीज बात तो है पर वह रहती कहा है?" राजा ने फिर
दर्बान ने यही कहा कि "मैं इसका उत्तर कल दूंगा" और राजा
ने सभा में आकर उसी भांति पूछा कि—"दुनिया में सब से
बडी चीज बात तो है, पर वह रहती कहा है?" किसी ने कहा
"अन्नदाता धनवानों के पास।" किसी ने कहा—"बलवानों
के पास।" किसीने कहा—"विद्वानों के पास।" राजा ने पूर्व
की भांति ये सब उत्तर दर्बान को दिये, पर दर्बान ने एक भी
उत्तर स्वीकार न किया। पुनः राजा ने बागीचे से माली को
बुला यह प्रश्न किया कि—"दुनिया में सब से बडी चीज
बात है, पर रहती कहां है?" इसने कहा कि—"महाराज ३२
सहस्र फिर निकलवा दीजिये।" राजा ने यह सुन तुरन्त ही आज्ञा
दी कि—"आप उत्तर दें, ३२ सहस्र और निकाल दिये जावेंगे।"
माली ने उत्तर दिया—"दुनिया में सबसे बडी चीज बात है और
वह रहती है असीलों के पास।" उत्तर सुन कर राजा ने मान
लिया और राजा ने दर्बान को यही उत्तर दिया, दर्बान ने भी
स्वीकार किया। पुनः दर्बान ने राजा साहब से प्रश्न किया कि—
"दुनिया में सब से बडी चीज बात, रहती तो है असीलों के
पास और खाती क्या है?" राजा ने कल का वादा कर पुन
जाकर दूसरे दिन अपनी सभा में यह प्रश्न किया। प्रश्न सुन
सब सभा चकित हो गई और कुछ काल तक तो सभी मौन
साध गये। पश्चात् कुछ आदमियों ने सलाह कर कहा—
"महाराज, कहीं बात भी खाया करती है?" राजा ने माली
को बुला कर पूछा कि—"दुनिया में सब से बडी चीज बात,
रहती तो असीलों के पास है और खाती क्या है?" [illegible]
कि—"३२ सहस्र रुपया जो मेरे पिता के नाम [illegible] यदि
वह भी कटा दें तो मैं बता दूं कि वह खाती क्या [illegible] राजा
ने उसी समय स्वीकार कर कहा—"आप

कहा कि—"महाराज, दुनिया में सब से बडी चीज बात है जो रहती है असीलों के पास, पर खाती है गम।" राजा ने मान लिया। पुन दर्जान ने राजा से प्रश्न किया कि—'दुनिया में सबसे बडी बात, रहती तो है असीलों के पास और खाती है गम, पर करती क्या है?" राजा ने फिर भी 'कल' कह कर दूसरे दिन अपनी सभा में यह प्रश्न किया। सभा के लोग थोड़ी देर तो चुप रहे और फिर बोले—"महाराज, बात भी कही काम किया करती है?" राजा ने पुन: बग़ीचे से माली को बुला उससे इस प्रश्न का उत्तर पूछा। उसने कहा—"महाराज, अबके हमारे बाप का दीवान पद हम दोनों भाइयो में से किसी को दिया जावे क्योंकि आपका ऋण भी पट गया, और यह दीवान जो मेरे बाप के स्थान पर है इसने मेरे बाप के नाम ६६ सहस्र रुपया बिल्कुल झूठा डाला है, इसलिए यह जहन्नुम रसीद किया जावे तो मैं आपके प्रश्न का उत्तर दे सकता हूं।" राजा ने सच्चा हाल समझ स्वीकार कर लिया और कहा—"आप उत्तर दीजिये ऐसा ही होगा।" माली ने कहा—"महाराज, दुनिया में सब से बडी चीज बात है और वह रहती है असीलों के पास तथा खाती है गम और करती है वह वह काम जो धन, बल विद्या किसी से न हो।" राजा ने उत्तर स्वीकार किया और इन दोनों को दीवान पद दे झूठे दीवान को जहन्नुम रसीद किया।

लक्ष्मी वर्तते जिह्वाग्रे जिह्वाग्रे मित्र बान्धवा ।
जिह्वाग्रे बन्धनं प्राप्त जिह्वाग्रे मरणं ध्रुवम् ॥

थे। रास्ते में जब गंगाजी पड़ीं तो घाट पर नाव न होने के कारण दोनों सोच रहे थे कि क्या करना चाहिये, परन्तु कुछ विचार में न आया। थोड़ी देर में हिन्दू ने तो कहा कि 'जै रामचन्द्रजी की' मैं तो अपने एक तरफ से मँझाता हूं, और वह ऐसे उथले ओर से गया कि पार हो गया। अब मुसलमान साहब सोचने लगे कि मैं कैसे पार जाऊँ? राम को सुमिरुं या खुदा को। यह सोचते सोचते मँझाना प्रारम्भ कर दिया और वह मँझाने में भी यह विचार करता जाता था कि—"राम को याद करुँ या खुदा को?" इस रमखुदैया के कारण इसका ध्यान बट गया और वह गहरे में जाकर डूब गया।

बस, समझ लो कि रमखुदैयावालों की यही दशा होती है कि थोड़ा यह लें थोड़ा वह, यह करें या वह?

१५३—एक पतिव्रता

एक साहब किसी गांव में रहा करते थे। उनकी स्त्री तो बड़ी चतुर और पतिव्रता थी किन्तु वह अत्यन्त ही निकम्मा और मूर्ख था, यहां तक कि कुछ कमाता धमाता न था दिन भर पड़े पड़े बातें बनाया करता था औरत बिचारी इसे जहां तहां से उधार पुधार ला ला खिलाया करती थी। वह पुरुष एक दिन बाजार में टहलने गया। वहां एक यवन से बहुत सी बात चीत होने के बाद यवन से किसी ने कह दिया कि इसकी औरत बड़ी खूबसूरत है अत यवन ने इससे कहा कि—"अगर तू अपनी औरत को मेरे पास सुलादे तो मैं १००) रुपये तुझे दूंगा।" यह पागल उस यवन को अपने घर ले आया और अपनी औरत से कहा कि—" अगर तू आज इसके साथ सो रहे तो ये सौ रुपये देगा इसी लिए मैं इसे लिवा लाया हूं। यह सुन औरत उससे बहुत ही नाराज हुई। तब इसने कहा—

'अच्छा तू प्रथम इसे दो रोटी बना के खिला दे, फिर देखा जायगा।" औरत ने कहा—"रोटी में दो क्या चार बना कर खिला दूंगी।" परन्तु औरत अपने पति की यह हरकत को भली भाँति जानती थी, इसलिये बड़े ही असमंजस में पड़ गई कि ऐसे समय में इस दुष्ट से बच कर कैसे पतिव्रत की रक्षा हो, अत औरत ने अपने पति से कहा—'आप ज़रा कष्ट करके एक रस्सा चारपाई में दावन लगाने के लिये और एक मूसल ओखली में कूटना करने के लिये ले आइये क्योंकि घर का मूसल टूट गया है, जब तक मैं इस मुसाफिर के लिये रोटी का सामान लगाती हूं।" औरत पाव भर मिरचें निकाल सिल पर पीसने लगी और इस का पति रस्सा और मूसल लेने बाज़ार को चला गया। थोड़ी देर में वह औरत रोने लगी। मुसाफिर ने पूछा—' तू क्यों रोती है?" औरत ने कहा—"जनाब रोती इसलिये हूं कि यह मेरा पति बड़ा ही बदमाश है और इसकी ऐसी बद आदत है कि यह रोज़ बाजार से किसी न किसी मुसाफिर को ले आता है और अपने घर में उसके हाथ पैर रस्से से बाँध उसके पाखाने के मुकाम में मिरचें भरा करता है और पीछे मूसल घुसेड़ देता है' सो देखिये कि मिरचें तो मुझ से पिसवा गया है मैं पीसती हूं और रस्सा और मूसल टूट गया था, उसे लेने बाजार गया था सो देखो वह लिये आ रहा है।" यवन यह दशा देख कि वह वास्तव में रस्सा और मूसल लिये आता है निश्चय मान चल पड़ा। जब वह पुरुष अपने घर आया तो अपनी स्त्री से पूछा कि—'मुसाफिर क्यों चला गया?" औरत ने कहा—"मैं मिरचें पीस रही थी मुसाफिर कहने लगा कि यह मिरचें जो तू पीस रही है सब मिरच के मुझे ऐसे ही दे दे। मैंने कहा—'ऐसे मिरचें आप लेकर क्या करेंगे आप ही के लिए पीसती हूं, रोटी बनाऊंगी तब खाना।' बस इसीसे गुस्सा होकर जाते हैं।' पुरुष ने

कहा—"अरे तूने मण मिर्चों के क्यों न पैसे ही सिल दे दी? अच्छा, अब ला मैं दौड़ कर दे आऊँ।" और यह पुरुष मण मिर्चों के सिल ले कर दौड़ा और पुकारा कि—"ओ मियाँ ये लिये जाओ।" मियाँ ने जाना कि यह मेरे पाखाने के मुकाम में मिर्चें भरने आता है, इस लिए मियाँ भागे और यह पीछे दौड़ा। तब तो मियाँ को और निश्चय हो गया और प्राण छोड़ भग गये।

१५४--गम खाना

एक बार किसी शख्स ने प्रश्न किया कि—"ये बनिये इतने मोटे क्यों होते हैं?" दूसरे ने जवाब दिया कि—'ये ऐसी वस्तु खाते हैं जिसे संसार में कोई नहीं खाता और न माने तो चल मैं तुझे दिखलाऊँ।' अब वह उस शख्स को लेकर गया तो क्या देखता है कि एक पुलीसमैन ने बनिये की दूकान पर आटा लिया और अच्छे आटे को कहता था कि साले तूने इसमें चापड़ी मिलाई है और बहनचोद ने जुआर का आटा भी मिलाया है गरज यह कि पुलीसमैन ने सैकड़ों गालियाँ दी पर बनिया न बोला। तब उसने उस शख्स से कहा—" क्यों साहब! समझ गये?"

१५५--बेरहमी

एक काबुली बहुत ही दीन और अत्यन्त बेवकूफ इस देश में आया और दिल्ली की बाजार में उसने जामुन बिकते हुए देख लोगों से पूछा कि—"यह क्या है?" लोगों ने कहा—"यह हिन्दुस्तान का मेवा है।" बेचारा क्या करे पैसा पास न था इस लिये निदान हो चला गया। पश्चात घूमते घूमते हुए

जंगल में एक बागीचे में पहुंचा तो बाग में केतकी के वृक्षों तथा अन्य फूले हुए वृक्षों पर भौंरे गूंज रहे थे। इसने समझा कि ये उसी हिन्दुस्तान की मेवा के वृक्ष हैं और इनमें ये फूल फल लग रहे हैं। अत: इसने भौंरे पकड़ पकड़ कर खाना आरम्भ कर दिया। परन्तु जिस समय यह भौंरों को पकड़ता था तो भौंरे चीं चीं करते थे। काबुली बोला कि—"चाहे चें करो या में, काले काले साले एक नहीं छोड़ूंगा।"

१५६—निन्यानवे का फेर

एक सेठजी बहुत धनवान् एक शहर में रहते थे और सेठ के तिखण्डे मकान के समीप ही दीवार से दीवार मिली हुई एक दूसरे सेठ जो बहुत ही दीन थे, रहा करते थे। धनाढ्य सेठ अपने घर में खराब से खराब नाज की रोटी बनवाते और केवल नमक के साथ खाया करते थे और दीन सेठ नित्य अपने घर खीर पूड़ी हलुआ अच्छी अच्छी चीजें बनवाते थे। अभिप्राय यह कि दीन सेठ जो कमाते थे वह खा पी डालते थे। धनाढ्य सेठ की स्त्री यह चरित्र देख हैरान थी और कहा करती थी—"हाय! हमारे बाप ने क्यों धनाढ्य के यहां ब्याह किया। ऐसे धन से क्या, जो न भोगा गया न दान दिया गया इससे तो ये कंगाल ही अच्छा।" एक दिन उस धनाढ्य सेठ की स्त्री ने अपने पति से कहा कि—"आपके धनी होने से क्या लाभ न आप खा ही सकते हैं और न किसी को दे सकते हैं आपसे तो यह कंगाल ही अच्छा जिसके यहां रोज हलुआ पूड़ी और खीर बना करती है।" सेठने कहा— वह अभी निन्यानवे के फेर में नहीं पड़ा है अच्छा आज मैं तुझे निन्यानवे रुपया देता हूं और तू कल यह रुपया एक कपड़े में बांध इस दीन सेठ के घर डाल देना।" धनाढ्य सेठ की स्त्री ने वह रुपया

एक कपड़े में बांध दूसरे दिन दीन सेठ के यहां डाल दिया। दीन सेठ की स्त्री ने वह रुपयों की पोटली पा अपने पति को दे दी। पति ने गिने तो रुपये निन्यानवे थे। उसने सोचा कि अगर मैं दो दिन हलुवा पूड़ी खीर न खाऊँ तो ये पूरे सौ हो जाय। ऐसा ही हुआ, दूसरे दिन से ही हलुवा पूड़ी खीर का होना बन्द हो गया और अब दो दिन में सौ हो गये। अब इसने सोचा कि दो दिन और न खाऊं तो १०१ हो जाय। जब दो दिन में १०२ हो गये तो सोचा कि दो दिन और न खाऊं तो १०२ हो जायं। बस यह दशा देख धनाढ्य सेठ ने अपनी स्त्री से कहा कि देखो अब यह भी निन्यानवे के फेर में पड़ गया और इसी को 'निन्यानवे का फेर' कहते हैं। परमात्मा न करे इस निन्यानवे के फेर में कोई भी पड़े।

१५७—तपस्वी और चार चोर

एक महात्मा किसी वन में तप कर रहे थे। एक दिन रात को चार चोर पहुंच कर महात्मा से बोले कि- 'महाराज, आप तो परोपकारी हैं इसलिये हमारे साथ चल कर परोपकार कीजिये।" तपस्वी जी चोरों के साथ चल दिये और मन में यह सोचा कि इन दुष्टों को आज अपने परोपकार का परिचय दे देना चाहिये। जब यह महात्मा और चारों चोर एक धनिक के मकान पर पहुंचे तो चोरों ने धनिक के मकान में नकब लगा महात्मा से कहा—"महाराज, अब आप आगे आगे चलिये।" महात्मा और चारों चोर अन्दर पहुंच गये और जब चोर कोठी के अन्दर घुस माल निकालने लगे तब महात्मा ने बाहर से कोठी की जंजीर चढ़ा दी। पास ही एक शाला में बाहर एक थाल में कुछ मिठाई रक्खी थी और वहीं दीपक जल रहा था। महात्मा जी बर्फी देख कर ललचाये और इनकी जीभ लपलपाने

रहने लगा। अब बुड्ढे को यह पड़ी कि अगर मेरे लड़के इधर उधर जाँय तो मैं खूब विषय भोग करूं। अत लड़कों को इधर उधर भेज दिया। उस दिन बुड्ढे ने खूब हलुवा पूड़ी खीर बनवा भोजन किया और यह मना रहा था कि किसी प्रकार रात आये स्त्री भी (बना हुआ बैलवाला) खूब शृङ्गार कर बैठ रही थी। जब रात हुई तो स्त्री ने किवाड़े मार एक रस्सा ले बुड्ढे को चारपाई से बाध गला दबा पूछा कि—'बता तेरा धन कहां गडा है?'' बुड्ढे ने जान के भय से सब बता दिया। उसने सबको खोद बहुत सा धन बाँध एक सोंटा ले बुड्ढे को बहुत ही पीटा और कहता जाता था, 'क्योंरे मक्कार! तेरह का बैल तीन का!' और इसे पीट पाट धन ले बैलवाला चल दिया। जब दो दिन बाद उस बुड्ढे के लड़के आये तो बुड्ढे को बंधा हुआ, सब देह फूली हुई और सब घर खुदा हुआ देख, बड़े दुःखी हुए और बाप से बोले—''यह क्या हुआ?' बुड्ढे ने कहा कि—

वह औरत न थी नरिक था बैलवाला।
मुझे बांध कर ले गया धन है साला॥

चारों ने अपने बाप को खोल दवा इलाज किया और फिर माल जमा करने लगे। कुछ दिन बाद वह बैलवाला वैद्य का भेद धर उसी गाम में आ बिराजा। ये चारों ठग फिर उन वैद्यराज के यहां पहुंचे और दो रुपये नजर कर कहा—'महाराज, हमारे बाप बहुत बीमार हैं, आप कृपा कर उन्हें चल कर देख लीजिये।'' वैद्यराज ने जाकर देखा, पर इसको तो सब हाल मालूम था अत इसने बुड्ढे के लड़कों से कहा कि—''जब मैं १५ दिन ठहरूं तब इसे आराम हो सकता है।'' बुड्ढे के लड़कों ने वैद्यराज के आगे बहुत कुछ हाथ पैर जोड़े और कहा

कि आप कृपा कर १५ दिवस ठहर जाइये, हम आप को जो फीस लगी देंगे और आपकी सेवा करेंगे।" वैद्यराज का तो यह अभिप्राय ही था, अतः वे ठहर गये। दूसरे दिन उन्होंने बुड्ढे के चारों लड़कों को दूर दूर की जड़ी बूटी दवायें बता कर इधर उधर भेज दिया और जब बुड्ढा अकेला रह गया तो उसे एक घर में एक खम्भे से बांध उसका गला दबा कर पूछा कि—"बता, अब बचा बचाया धन कहाँ रक्खा है?" बुड्ढे ने प्राण जाते देख बचा बचाया धन भी बता दिया। इस धूर्त (बने हुए वैद्यराज) ने सब धन खोद और एक सोंटा ले पुनः बुड्ढे को खूब पीटा और कहता था—"क्योंरे मक्कार, तेरह का मत तीन का?" और सारा धन लेकर चला गया। जब बुड्ढे के चारों लड़के दवा लेकर आये तो बाप की यह दशा देख बड़े शङ्कित हुए और अन्त में सोच समझ उसी तारीख से ठगी छोड़ दी।

१५६—लाल बुझक्कड़

किसी गाँव से होकर एक हाथी निकल गया और उस के गोल गोल चकत्ते पैर भूमि में बन गये। गाँववालों ने कहा—"यार ये काहे के चिन्ह हैं?" सबों ने अपनी समझ के अनुसार विचारा, पर कोई विचार निश्चय न हुआ। अन्त में सबकी यह राय ठहरी कि लाल बुझक्कड़ को बुलाना चाहिये और उनसे पूछें कि ये काहे के चिन्ह हैं। जब लाल बुझक्कड़ आये तो सबोंने कहा—"गुरू! बताओ, ये काहे के चिह्न हैं?" लाल बुझक्कड़ यह सुन कर बहुत हँसे। सबोंने कहा—'महाराज! इस समय आप क्यों हँसे?" लाल बुझक्कड़ ने कहा कि—"हम हँसे इस लिये कि आप लोग हमारे शिष्य होकर भी यह ज़रा सी बात

रहने लगा। अब बुड्ढे को यह पड़ी कि अगर मेरे लड़के इधर उधर जांय तो मैं खूब विषय भोग करूं। अतः लड़कों को इधर उधर भेज दिया। उस दिन बुड्ढे ने खूब हलुवा पूड़ी खीर बनवा भोजन किया और यह मना रहा था कि किसी प्रकार रात आये स्त्री भी (बना हुआ बैलवाला) खूब शृङ्गार कर बैठ रही थी। जब रात हुई तो स्त्री ने किवाड़े मार एक रस्सा ले बुड्ढे को चारपाई से बाँध गला दबा पूछा कि—"बता तेरा धन कहां गड़ा है?" बुड्ढे ने जान के भय से सब बता दिया। उसने सबको खोद बहुत सा धन बाँध एक सोंटा ले बुड्ढे को बहुत ही पीटा और कहता जाता था, 'क्यों रे मक्कार! तेरह का बैल तीन का!' और इसे पीट पाट धन ले बैलवाला चल दिया। जब दो दिन बाद उस बुड्ढे के लड़के आये तो बुड्ढे को बंधा हुआ, सब देह फूली हुई और सब घर खुदा हुआ देख बड़े दुःखी हुए और बाप से बोले—"यह क्या हुआ?" बुड्ढे ने कहा कि—

वह औरत न थी नटिक था बैलवाला।
मुझे मार कर ले गया धन है सारा॥

चारों ने अपने बाप को खोल दवा इलाज किया और फिर माल जमा करने लगे। कुछ दिन बाद वह बैलवाला वैद्य का भेष धर उसी गाँव में आ विराजा। ये चारों ठग फिर इन वैद्यराज के यहां पहुंचे और दो रुपये नजर कर कहा— 'महाराज, हमारे बाप बहुत बीमार हैं, आप कृपा कर उन्हें चल कर देख लीजिये।' वैद्यराज ने जाकर देखा, पर इसको तो सब हाल मालूम था, अतः इसने बुड्ढे के लड़कों से कहा कि—"जंगल में १५ दिन ठहरूं तब इन्हें आराम हो सकता है।" बुड्ढे के लड़कों ने वैद्यराज के आगे बहुत कुछ हाथ पैर जोड़े और कहा

कि आप कृपा कर १५ दिवस ठहर जाइये, हम आप की जो फ़ीस होगी देंगे और आपकी सेवा करेंगे।" वैद्यराज का तो यह अभिप्राय ही था, अतः वे ठहर गये। दूसरे दिन उन्होंने बुड्ढे के चारों लड़कों को दूर दूर की जड़ी बूटी बता कर इधर उधर भेज दिया और जब बुड्ढा अकेला रह गया तो उसे उस के घर में एक खम्भे से बांध उसका गला दबा कर पूछा कि—"बता, अब बता बचाया धन कहाँ रक्खा है?" बुड्ढे ने प्राण जाते देख बचा बचाया धन भी बता दिया। इस पर (बने हुए वैद्यवाले) ने सब धन खोद और एक सोंटा ले पुनः बुड्ढे को खूब पीटा और कहता था—"क्योंरे मक्कार, तेरह का बत तीन का?" और सारा धन लेकर चला गया। जब बुड्ढे के चारों लड़के दवा लेकर आये तो बाप की यह दशा देख बड़े शोकित हुए और अन्त में सोच समझ उसी तारीख से ठगी छोड़ दी।

१५९—लाल बुझक्कड़

किसी गाँव से होकर एक हाथी निकल गया और उस के गोल गोल चकले पैर भूमि में बन गये। गाँववालों ने कहा—"यार ये काहे के चिन्ह हैं?" सबों ने अपनी समझ के अनुसार विचारा, पर कोई विचार निश्चय न हुआ। अन्त में सबकी यह राय ठहरी कि लाल बुझक्कड़ को बुलाना चाहिये और उनसे पूछें कि ये काहे के चिन्ह हैं। जब लाल बुझक्कड़ आये तो सबोंने कहा—"गुरू! बताओ, ये काहे के चिन्ह हैं?" लाल बुझक्कड़ यह सुन कर बहुत हँसे। सबोंने कहा—'महाराज! इस समय आप क्यों हँसे?" लाल बुझक्कड़ ने कहा कि—"हम हँसे इस लिये कि आप लोग हमारे [illegible] होकर भी यह जरा सी बात

न जान सके।" पुनः लाल बुझक्कड़ बहुत रोया। सबों ने कहा—"महाराज, आप रोये क्यों?" लाल बुझक्कड़ बोले कि—"रोये इसने कि हमारे बाद तुम्हें कौन ऐसी ऐसी बातें बतावेगा? जो अब सुनो भूलना नहीं—

जाने लाल बुझक्कड़ और न जाने कोय।
पग में चक्की बाँध के, हिरना कूदा होय॥"

सबों ने कहा—"ठीक है।"

इसी प्रकार उन गाँववालों ने कभी कोल्हू नहीं देखा था एक आदमी अपना कोल्हू लादे जाता था, लेकिन उसकी गाड़ी के बैल न चलने से वह उस कोल्हू को मय गाड़ी के छोड़ गया अब गाँववाले उसी भाँति फिर हैरानी में पड़े। अन्त में उन्हें लाल बुझक्कड़ को बुलाकर पूछा कि—"महाराज, यह क्या है? लाल बुझक्कड़ ने कहा—

जाने लाल बुझक्कड़ और न काहू जानी।
पुरानी होकर गई ये खुदा की सुरमादानी॥

सबों ने कहा—"ठीक है महाराज, ठीक है।"

१६०—परम लालची

एक सेठ जी बड़े लालची थे, यहाँ तक कि अपने पेट भली भाँति खा पी भी नहीं सकते थे। पर उन के कुटुम्ब उनके इस स्वभाव को अच्छा नहीं समझते थे और अपने सब अच्छी प्रकार खाया पिया करते थे। एक दिन सब अच्छे अच्छे पदार्थ, कोई हलुआ, कोई पूड़ी, कोई लड्डू, खीर, कोई रबड़ी, कोई मलाइ बराबर उड़ा रहे थे, इतने में जी घर आ पहुँचे और यह दशा देख नाँद के नीचे से

निकाल कर पीने लगे और बोले कि—"भर भर है तो भरभरे सही, हम भी आज मट्ठा ही पियेंगे।"

मक्खी बैठी शहद पर, पंख गये लपटाय।
हाथ मलै औ शिर धुनै, लालच बुरी बलाय॥

१६१–खुशकिस्मत कौन है ?

एक बार यूरोप के किसी बादशाह ने एक आदमी से जिसका कि नाम सालिन था पूछा कि शायद मेरे बराबर तो दुनिया में कोई खुशकिस्मत न होगा। सालिन ने एक महा कंगाल का नाम ले कहा—"हुजूर! उससे ज्यादा खुशकिस्मत दुनिया में और कोई नहीं है।" बादशाह ने कहा—"क्यों ?" सालिन ने कहा कि—"उसने अपनी सारी आयु सदाचार ही में व्यतीत की है और उसमें किसी प्रकार के किसी कलङ्क का धब्बा नहीं और संसार में उसका यश है और जिस समय वह मरा दुनिया उसके लिए रोती थी।" बादशाह ने समझा कि अगर यह सब से ज्यादा खुशकिस्मत है तो दूसरा नम्बर मेरा ही होगा, यह समझ कर पूछा कि—"उसके बाद फिर कौन खुशकिस्मत है ?" इसने एक दूसरे कङ्गाल का नाम ले कहा—"हुजूर! यह उससे ज्यादा खुशकिस्मत है।" उसने कहा—"क्यों ?" सालिन ने उत्तर दिया कि—"इसने जिस हैसियत में अपने बाप से गृहस्थी पाई थी, वह वैसी ही गृहस्थी रखता हुआ। पुत्र पौत्र भ्राता आदिकों को छोड़ता हुआ, परमेश्वर का भजन करता हुआ, संसार की सम्पूर्ण आपत्तियों को झेलता हुआ आज प्राण छोड़ता है। बस इसी प्रकार यदि आपकी बादशाहत अन्त तक बनी रहे और उसमें कोई आपत्ति न आवे तो मैं आपको भी खुशकिस्मत कहूँगा।" बादशाह ने यह सुन कर सालिन पर क्रोधित हो राज्य से निक-

जला दिया। पुनः थोड़े ही दिन में अनायास उस बादशाह के ऊपर एक बादशाह चढ़ आया और उसने सारा राज पाट छीन लिया और उसे क़ैद कर अपने राज्य में ले गया और थोड़े दिन में उसे सूली का हुक्म दिया। जब यह बादशाह सूली पर चढ़ने लगा तो इसने बड़े ज़ोर से पुकार कर कहा कि—"सालिन! सालिन! सालिन!" तब तो यह वाक्य सुन उस बादशाह ने कि जिसने इसको सूली दी थी, इसको अपने पास बुला कर कहा कि—"आप क्या कहते हैं?" उसके पूछने पर इसने सारा क़िस्सा सालिन और अपनी बात चीत का वर्णन किया और कहा कि—"सालिन ठीक कहता था, देखिये! थोड़े दिन हुए मैं बादशाह था और आज सूली पर चढ़ रहा हूँ, इस लिए मैं सालिन का नाम बार बार पुकार रहा हूँ।" यह सुन कर बादशाह के होश हवास ठीक हो गये और उसने इसको सूली से मुक्त कर सारा राजपाट लौटा दिया।

१६२—अयोग्य मन्त्री

एक बादशाह के यहाँ एक बड़ा ही सुयोग्य मन्त्री था परन्तु वह अपनी स्त्री के विशेष वशीभूत था और उस स्त्री का भाई बिल्कुल बेकार था, अतः स्त्री ने बादशाह से कह कर उस योग्य मन्त्री को हटा कर अपने भाई को नियत कराया और अपने भाई को यह समझा दिया कि तुम बादशाह की आज्ञा को कभी न तोड़ना, जैसा वे कहें वैसा ही करना। बादशाह ने एक बार इस नये मन्त्री से कहा कि—"आप १०००) रु० का एक नोट बाजार से ले आइये।" ये जब नोट लेने गये तो बैंक के मैनेजर ने कहा कि—"१०००) का एक तो नहीं है, पाँच पाँच सौ के दो चाहो तो ले जाओ।" ये वहाँ से लौट आये और

बादशाह से कहा कि—"१०००) का एक तो नहीं मिलता था पाँच पाँच सौ के दो मिलते थे, इसलिए मैं नहीं लाया।" बादशाह ने कहा कि—"मतलब तो एक ही था, आप क्यों न लेते आये ?" कुछ दिन के बाद बादशाह की लड़की ब्याह के योग्य हो रही थी, इसलिए बादशाह ने अपनी कन्या के विवाहार्थ एक राज्य में इन मन्त्री जी को भेजना चाहा और मन्त्री जी से कहा कि—"आप एक ऐसा वर ढूँढें जिसका कुल, शील, समानता, नित्त आदि बातें योग्य हों और उमर २२ वर्ष से कम न हो।" तब तो इन मन्त्री महाराज ने कहा कि—"हुज़ूर, अगर ग्यारह ग्यारह वर्ष के दो हों !" बादशाह ने समझ लिया कि यह मूर्ख है और उसको उसी समय निकाल बाहर किया।

१६३—भारत के शूरवीर

एक बार किसी गाँव में दो दर्ज़ियों में परस्पर लड़ाई हुई। एक ने अपनी सुई उठाई और दूसरे ने अपनी सुई उठाई। वह उसके सामने सुई उठा कर कहता था—"क्या साले नहीं मानेगा ?" और वह उससे कहता था—"क्या साले नहीं मानेगा ?" इतने में एक स्त्री आ गई और बोली कि—"परमेश्वर खैर करे, आज सूरों ने शस्त्र उठाये हैं !" वाहरी शूरवीरता और वाह रे शस्त्र !

१६४—न्याय फ़ैसले

एक बार मुसलमानों के ताज़िये हो रहे थे। वहाँ पर इस प्रकार भीड़ हो रही थी कि निकलने तक का मार्ग न था। इतने में उसके गोल में एक हिन्दू भाई जा पहुँचे। वहाँ गोल में सब

मुसलमान थे और वे सबके सब छाती पीट पीट कर यह कह रहे थे कि—"हाय हुस्सेन! हाय हुस्सेन!" यह देख हिन्दू भी अपनी छाती पीट पीट यह कहने लगा कि—"आय फँसे! आय फँसे!"

१६५--भारत

एक सन्यासी एक महा सुन्दर वन में अकेला रहता था। वह वन नाना प्रकार की औषधियों और हरी हरी घास से उपवन सा बन रहा था। सन्यासी उसी वन में नि सन्देह और निडर सुखपूर्वक अपने दिवस व्यतीत करता था। उसी वन में एक अति मनोहर तालाब स्वच्छ जल से पूरित था। एक दिन वह सायंकाल के समय तृषित हो तड़ाग पर गया, वहाँ जलपान करके तालाब की मनोहर शोभा को अवलोकन करने लगा तो क्या देखता है कि भाँति भाँति के पक्षी तड़ाग के तट के वृक्षों पर नाना प्रकार की सुहावनी सुहावनी नादियों से चहकार मचा मचा वन को गुजा रहे हैं और अपने दिवस भर के छूटे हुये बच्चों से मिल बड़े हाव भाव से प्यार कर कर सारे दिन के वियोग के दुःख को मिटा रहे हैं। दूसरी ओर वन का रंग आकाश की लालिमा से अपूर्व रङ्ग का हो रहा है। सन्यासी इन सब पदार्थों को विलोकता और इस शोभा को देख हर्षित हो रहा था, इतने में आकाश पर अचानक चन्द्रमा अपनी नक्षत्रों की सेना ले बड़े दल बल के साथ आकर प्रकाशित हुआ और उसने सम्पूर्ण आसमान पर अपना अधिकार जमाया और अपनी मन्द मन्द किरणों द्वारा पृथ्वी को आलोकित किया। सांसारिक जन अपने अपने कार्यों को त्याग सुखपूर्वक हर्षित हो अपनी स्त्री सहित एकत्र हो आनन्दित हुए और सारे दिन की

थकावट को शान्त करने लगे। अब दो घण्टे के समीप रात्रि व्यतीत हुई, सब लोग अपने अपने शयन करने के प्रबन्ध में हैं। जहाँ तहाँ मनुष्य मण्डली अभी तक नहीं सोई है, कोई खेल और कौतुकों में मस्त है कोई भ्रष्ट पुस्तकों का पाठ कर रहा है, कोई ईश्वर को त्याग प्रकृति की उपासना में निमग्न है और उस समय के विद्वान् तत्वज्ञान और परोपकार त्याग केवल अपने स्वार्थ में आ इस वाक्य के अनुसार कि–"स्वार्थीदोष न पश्यति" कर्म अकर्म, सत्य असत्य कुछ नहीं देखते।

महाशयो! इसी अवसर में वह सन्यासी भी विचार रूपी समुद्र में गोते लगा रहा था कि यकायक उसका खयाल एक बगीचे की ओर पहुंच गया। उसने वहाँ जाकर देखा कि यह कोई अपूर्व वाटिका है, क्योंकि इसमें बहुत से रंग बिरंगे पुष्प फल आदि विद्यमान हैं और चित्र विचित्र भूषणों से भूषित शोभा दे रहे हैं। विचारा तो ज्ञात हुआ कि यह वाटिका किसी बड़े ही बुद्धिमान् की सुसज्जित की हुई है। इस वाटिका की शोभा देख संन्यासी का चित्त चाहा कि इसे अवश्य देखना चाहिये। यह सन्यासी उसी मनोहर वाटिका की ओर देखने की लालसा से जाकर वाटिका के पास पहुँचा। वहाँ क्या देखता है कि वाटिका की चारदीवारी बहुत ही ऊँची है और उसकी दृढ़ता तथा सुन्दरता भी विलक्षण ही है।

यह सब देख सन्यासी महाराज का चित्त अन्दर जाने को चाहा, इस लिए संन्यासी जी वाटिका का दर्वाजा ढूँढ़ने लगे, परन्तु उन्होंने दर्वाजा न पाया कुछ देर के बाद उनको एक नहर देख पड़ी कि जिसमें उस वाटिका में पानी जा रहा था। वह बेचारा उसी नहर के तट पर बैठ गया और अन्दर पहुँचने के यत्न सोचने लगा, इसी विचार में था कि यकायक उसे एक

मित्र मिल गया जिसका नाम बुद्धि था। सन्यासी ने अपने मित्र से निवेदन किया कि मुझे इस वाटिका के देखने को इसका दर्वाज़ा बताइये। सन्यासी ने अपने मित्र की बहुत काल तक सेवा की, तब उस मित्र ने उसका फाटक बतलाया। सन्यासी उस फाटक की सुन्दरता देख महा सुखी हुआ। उसके मेहराब की वक्रता ऐसी बुद्धिमत्ता से बनाई गई थी कि जिसकी बनावट एक अपूर्व शोभा दिखला रही थी और उस मेहराब में नाना प्रकार के बहुमूल्य चमकीले पत्थरों से चित्रकारी ने ऐसी चित्र विचित्र रचना की थीं कि जब दिवाकर की किरण उस पर पड़ती थीं, तो ऐसा ज्ञात होता था कि मानों दूसरा सूर्य इस मेहराब में चमक रहा है। सन्यासी इस शोभा को देख कर आश्चर्य में था उसके मित्र ने कहा—"चलिये, अब मैं तुमको वाटिका दिखलाऊँ।" संन्यासी मित्र के साथ अन्दर गया, पर फाटक की अपूर्व छटा उसे बार बार याद आती थी। कुछ देर में वह वाटिका में पहुँचा तो वाटिका की अनुपम छटा देख अत्यन्त प्रफुल्लित हुआ। पुन अपने मित्र के साथ इधर उधर घूम वाटिका को देखा और उसकी विचित्रता से संन्यासी दंग था। इस लिए कि उसके सम्पूर्ण पदार्थ ऐसी बुद्धिमत्ता के साथ चुने थे कि एक एक को देख सन्यासी चकित था और जब वह उसकी बनावट पर अपनी बुद्धि दौड़ाता, तो बाग के पेड़ों का मन्द मन्द उन्मत्तता से झूमना और पक्षियों का नाना प्रकार की प्यारी प्यारी आवाजों का करना, बुलबुलों का फूलों पर गिरना, फूलों का खिलना, नरगिस की नज़रबाजी आदि विचित्र तमाशे देख सन्यासी अपने आपे में न रहा। थोड़े दिन वह उस बाग में रहा, पुनः बाहर निकल भ्रमण करने लगा बहुत दिन बाद उसे पूर्व की दिशा में एक चारदीवारी नज़र आई जैसी कि उसने उस बाग में देखी थी चश्मा और नहर

चमसे बहुत कम चौड़ी थी परन्तु दर्वाज़ा खुला हुआ था और दीवार गिरी पड़ी और टूटी फूटी थी। चारों ओर से नये नये किस्म के पशु पक्षी आदमी आदि आ आ कर अपने मन चाहे हुए पदार्थ निरभयता से खेते जा रहे थे और कोई तोड़ तोड़ ले जा रहे थे और वाटिका के बागवान सब गाढ़ निद्रा में सो रहे थे। सन्यासी ने अपने मित्र से पूछा कि—"यह तो मुझे वही वाटिका ज्ञात होती है परन्तु नहीं मालूम कि इस की यह दशा क्यों हो गई? न तो दीवार ही में वह सुन्दरता देख पड़ती है, न दर्वाजे ही में वह शोभा है, नहर का पानी भी वैसा स्वच्छ नहीं देख पड़ता बल्कि उसके स्थान पर गँदला और महा मटमैला जल बह रहा है।" इस पर उसके मित्रने बतलाया कि यह वह वाटिका नहीं है बल्कि दूसरी है, यह पतझड़ में ऋतु से शुष्क हो रही है और समय के हेर फेर यानी परिवर्त्तन से बर्बाद हो गई है। यह सुन सन्यासी उस बाग के अन्दर जो गया तो उसको बाग के कुछ चिन्ह दिखलाई दिये, मगर न वह स्वच्छता थी, न वह चहल पहल ही थी, नहर में कुछ पानी बह रहा था, मगर वह सफाई और सुन्दरता न थी। फूल जितने थे सब कुम्हिलाये और मुरझाये हुए पड़े थे। जहाँ घास अपनी हरियाली से तरह तरह की सुन्दरता दिखलाती थी वहाँ अब शुष्क हो हो कर काली हो रही है। जहाँ सुन्दर त्रिविध समीर शीतल मन्द सुगन्ध मन को प्रफुल्लित करती थी वहाँ अब आँधी ज़ोर से हाहाकार उठा रही है। जहाँ पिक और कोयल आदि अपने अपने प्यारे स्वरों से चित्त को आनन्दित करते थे, वहाँ अब नीच काक और उलूक घृणित स्वरों से चित्त को दुखित कर रहे हैं। वह सन्यासी यह सब देखता हुआ नहर के तट पर पहुँचा। वहाँ क्या देखता है कि थोड़े से महा स्वरूपवान् नवयुवक पुरुष आकर उसी नहर

में डुबकी लगा कर नहाने और पानी पीने लगे। जब वे वहाँ से निकले तो उन लोगों की शकल पलटी हुई थी। न वह धर्म कर्म, न वह बल बुद्धि, न वह शील स्वभाव ही था और सब के दो दो सींग निकल आये और एक दूसरे से लड़ने लगे। किसी का हाथ, किसी का पैर आदि टूटे, यानी इसी प्रकार असभ्यता का मज़ाल करते करते जा रहे हैं।

सन्यासी भारतरूपी उपवन की यह दुरवस्था देख दु:खी हुआ और उसमें सुखपूर्वक रमण करनेवाली भारत संतान की यह दुर्दशा देख उसका दिल भर आया और ठंडी आह भर कर बोला—"क्या इस उपवन का सुधारक कोई माली ईश्वर भेजेगा?"

१६६—शील

एक ग्राम में दो भाई रहा करते थे। उनमें से एक अत्यन्त ही विद्वान, मधुरभाषी, सरल और शान्त तथा किसी दूसरे के विशेष क्रोध करने या साधारण दबाने पर बेचारा तत्काल ही दब जाता था और सदैव ऐसे स्थान में बैठता था कि जहाँ से कोई न उठा सके, और दूसरा निरक्षर भट्टाचार्य, अत्यन्त कटु-वादी लकड़ी सी तोड़नेवाला और दूसरे के किंचित् क्रोध पर उसका सिर फोड़ देनेवाला था। इन दोनों में पहला भाई अपने ग्राम में जिस किसी काम के लिए किसी के पास जाता तो लोग तुरन्त ही इसकी सहायता करते थे और जब यह दूसरा किसी के पास जाता तो लोग इससे वार्ता भी नहीं करते थे। अत इस ने एक दिन अपने भाई से पूछा कि—"भाई, तुम्हारे पास ऐसी कौन सी युक्ति है कि जिससे तुम से सब से मेल रहता है और आप सब जगह से अपना काम कर लाते हैं, पर हम जहाँ जाते

यहाँ लोग हमसे बात भी नहीं करते।" भाई ने उत्तर दिया—सब जगह से काम कर जाना तो क्या बल्कि—

वन्हिस्तस्य जलायते जलनिधिः कुल्यायते तत् क्षणात्।
मेरुः स्वल्पशिलायते मृगपतिः सद्यः कुरंगायते॥
व्यालो माल्यगुणायते विषरसः पीयूषवर्षायते।
यस्यांगेऽखिललोकवल्लभतमं शीलं समुन्मीलति॥

अर्थ—अग्नि उस पुरुष को जल के समान जान पड़ती है और समुद्र छोटा नदी सा तथा मेरु पर्वत स्वल्प शिला के तुल्य जान पड़ता है और सिंह शीघ्र ही उसके आगे हरिन बन जाता है, सर्प उसके लिए फूल की माला बन जाता है, विष रस उस पुरुष को अमृत की वृष्टि के समान हो जाता है जिस पुरुष के अङ्ग में समस्त जगत् का प्यारा लगनेवाला शील (नम्रता) प्रकाशमान है। बस, यही युक्ति है, सो आप भी धारण कीजिये। किसी भाषा-कवि का वाक्य है—

दोहा—गिरि ते गिरि परिबो भलो, भलो पकरिबो नाग।
अग्नि माहिं जरिबो भलो, बुरो शील को त्याग॥

१६७—सन्तोष

एक सेठजी बड़े धनाढ्य और अत्यन्त पुरुषार्थी, कुटुम्ब से भरे पूरे एक ग्राम में रहा करते थे और उनके समीप ही उसी ग्राम में एक अति दीन, पढ़ा लिखा विद्वान् ब्राह्मण रहा करता था। यह ब्राह्मण बड़ा ही सहनशील और सन्तोषी था, जो कुछ अपने परिश्रम से उपार्जन करता उसी में आनन्दित रहता, परन्तु सेठ जी सदैव तृष्णा की तरङ्गों में ही गोते खाया करते

थे। इस कारण सेठजी यद्यपि ब्राह्मण से बहुत धनवान् और परिश्रमी थे तथापि इस कवि वाक्य के अनुसार—

निःस्वो वष्टि शतं, शता दशशतं, लक्षं सहस्राधिपो।
लक्षेशः क्षितिपालतां, क्षितिपतिश्चक्रेश्वरत्वं पुनः॥
चक्रेशः पुनरिन्द्रतां, सुरपतिर्ब्रह्मास्पदं वाञ्छति।
ब्रह्मा विष्णुपदं पुनः पुनरहो तृष्णावधिं को गतः॥

अर्थात्—निर्धन मनुष्य सौ रुपये चाहता है, सौ वाला सहस्र, सहस्रवाला लक्ष, लक्षवाला राज्य, राजा चक्रवर्ती होना चाहता है, चक्रवर्ती इन्द्र पदवी और इन्द्र ब्रह्मा पद, ब्रह्मा विष्णु पद, अत: इस तृष्णा का अन्त किसने पाया है? इसकी अवधि को किसने प्राप्त किया है? इसी प्रकार सेठ को भी दिन रात यही पड़ी रहती थी कि अब सौ के दो सौ और दो सौ के चार सौ कर लूं। इसमें सेठजी खाना पीना सोना अच्छे वस्त्र पहनना आदि सभी तृष्णा की तरङ्गों में भूले रहते और दिन रात इसी हाय हाय में लगे रहते थे। एक दिन पड़ोसी ब्राह्मण सेठजी को समझाने लगा कि—"सेठजी, देखो संसार दुःखों का मूल है, इसमें मनुष्य को कभी सुख नहीं मिल सकता है, हाँ यदि कुछ सुख मिल सकता है तो केवल एक संतोषी पुरुष ही को। आप भली भाँति जानते हैं, कि विशेष ख्वाहिशों का बढ़ना ही मनुष्य के लिए महान् दुःख और बंधन का हेतु है। मनुष्य की जैसे जैसे ख्वाहिश बढ़ती जाती हैं वैसे ही वैसे वह उनके पूरा करने के प्रयत्न में लगता है और उनके पूरा हो जाने पर सुख और अधूरा रहने में मनुष्य को दुःख हुआ करता है।" परन्तु सेठ जी का मन उस समय इन बातों पर न बैठा। एक बार सेठ जी अपने घर के द्वार पर बैठे थे कि उनको एकाएक यह

सूचना मिली कि आपके लड़के के लड़का उत्पन्न हुआ। सेठजी यह सूचना पा अत्यन्त हर्षित हो रहे थे। नाना प्रकार के उत्साह सेठ जी मना रहे थे कि इतने ही में घर से दूसरी खबर आई कि जो लड़का उत्पन्न हुआ था वह और उसकी माता दोनों का देहान्त हो गया। सेठ जी यह खबर सुनते ही महान् दुःख-सागर में डूब गये और सिर पटक पटक कर रोने लगे। इस विकलता में सेठजी पड़े ही थे कि अनायास थोड़ी ही देर में एक दूत ने आकर यह कहा कि अमुक वर्ष में जो आप ने अमुक माल पर एक चिट्ठी डाली थी वह माल आप ही के नाम पड़ गया और एक लाख का माल लदा हुआ आप का जहाज़ आ रहा है। सेठ जी पुनः उस पौत्र तथा उसकी माता के कष्ट को भूल एक लाख के माल की प्राप्ति की प्रसन्नता में निमग्न हो गये और दूत से प्रश्नोत्तर करने लगे कि वह जहाज अब कहाँ तक आया होगा, तुम ने कहाँ छोड़ा था? यह कह ही रहा था कि थोड़ीही देर के बाद एक दूसरे दूत ने आकर यह सन्देशा दिया कि वह जहाज़ जो आप चिट्ठी में जीत थे, आ रहा था, लेकिन कराँची बन्दर पर तूफ़ान के आने से डूब गया। सेठ सुन फिर उसी दुःख-सागर में पड़ गये और सोचने लगे कि यथार्थ में सांसारिक ख्वाहिशों का बढ़ा उनकी पूर्ति के लिए तृष्णा की तरङ्गों में पड़ना दुःख ही का कारण है। सेठजी ने उसी दिन से तृष्णा पिशाचिनी को त्याग सन्तोष साधु की शरण ली। किसी कवि ने सच कहा है कि—

सन्तोषः परम लाभः संतोषः परमं धनम् ।
सन्तोषः परमचायुः संतोषः परम सुखम् ॥

अर्थ—सतोष ही परम लाभ है, सन्तोष ही परम धन है, सन्तोष ही परम आयु है, सन्तोष ही परम सुख है।

१६८--दब्बूपने से स्वरूप-विस्मृति

एक बार एक शेर के बच्चे को एक गडरिया जंगल से उठा लाया और उस को अपनी भेड़ों के साथ रखने लगा। शेर का बच्चा भेड़ों की ही रहन सहन की भाँति रहा करता, भेड़ों ही के साथ चरा करता, जहाँ वे बैठतीं वहीं वह बैठा रहता, जहाँ से उठकर वे चल देतीं वह भी चल देता, जैसे वे घुटने तोड़ कर पानी पीतीं वैसे ही पानी पीता, जैसे वे भिभियातीं वैसे ही वह भी बोला करता। गड़रिया जिस प्रकार अपनी भेड़ों पर शासन रखता था इसी प्रकार शेर पर भी शासन रखता था, यानी जिस समय गडरिया दूर ही से शेर को डाँट बतलाया करता तो शेर वहीं से वापिस आ बेचारा दीन हो चुपचाप खड़ा हो जाता था। एक दिन ऐसा हुआ कि एक दूसरा बड़ा बलवान् शेर जंगल में जहाँ गड़रिया भेड़ें चरा रहा था आया और आकर इतनी जोर से गरजा कि गड़रिये की सारी भेड़ें भग गईं और गड़रिया मारे डर के एक वृक्ष के ऊपर चढ़ गया। उस बलवान् शेर ने उन भागी हुई भेड़ों का पीछा किया। उन्हीं के झुण्ड में वह शेर भी भागा जा रहा था जो कि बचपन से गड़रिये के दबाव में भेड़ों के साथ रहता था। थोड़ी ही दूर के बाद एक जलाशय पड़ा। शेर उसे उछल कर जलाशय के उस किनारे पर खड़ा हो रहा और पीछे की ओर देखने लगा कि इतने में, वह दूसरा बलवान् शेर भी जलाशय के इधर के किनारे पर पहुँच कर दहाड़ने लगा। भेड़ों के साथ के रहनेवाले शेर ने जल में उस सिंह की और अपनी दोनों की एक ही प्रकार की परछाईं देख सोचा कि मैं भी तो वही हूँ जो यह है, मैं क्यों भागता हूँ। बस, 'मैं भी तो वही हूँ' यह ध्यान आते ही इसे अपने भूले हुये स्वरूप, बल और अधिकार का ज्ञान आ गया और

इसने भी दहाड़ मारी। इनके दहाड़ मारते ही वह बलवान् शेर सा ढीला पड़ वहाँ से लौट गया, क्योंकि उसने समझ लिया कि यह भेड़ों का समुदाय नहीं किन्तु सिंहों का समुदाय है और भेड़ें भी इसकी दहाड़ सुन इनके साथ से भग खड़ी हुई और गड़रिया भी वैसा ही भय करने लगा जैसा इस बलवान् शेर से करता था। कहाँ तो इस पर शासन करता था और अपनी डाँट के साथ इसको इधर उधर घुमाता था, कहाँ फिर उसके पास भी जाने में भयभीत होने लगा।

१६६—शान्ति से लाभ

सिकन्दर यूनान का एक बड़ा ही दिग्विजयी और प्रसिद्ध बादशाह था। उसने सुना कि अमुक स्थान में एक बड़े ही पहुँचे हुए प्रसिद्ध महात्मा रहते हैं, सिकन्दर उन महात्मा की परीक्षार्थ वहाँ गया और समीप के ग्राम में ठहर कर एक दूत के हाथ कहला भेजा कि जाओ उन साधु से कह दो कि—"दिग्विजयी सिकन्दर बादशाह आया है और उसने आपको बुलाया है, अगर आप नहीं चलेंगे तो आपको मरवा देगा।" महात्मा ने पूछा कि—"दिग्विजयी का अर्थ क्या है?" उसने कहा—"सबको जीतनेवाला, सबको मार कर वश में करनेवाला।" महात्मा ने पूछा कि—"सिकन्दर कितना करोड़ दो करोड़ मन खाता है?" दूत ने कहा—"नहीं नहीं।" तब महात्मा ने कहा—"तो लाख दो लाख मन का खानेवाला तो होगा ही?" दूत ने कहा—"नहीं महाराज, लगभग, पाव सेर का, जितना कि अन्य लोग खाते हैं उतना ही अन्न सिकन्दर भी खाता है।" साधु ने कहा—"तुम्हारे बादशाह से तो यह वृक्ष अच्छा है जो बिना किसी की हिंसा किये मेरा पेट भर देता है।" दूत ने जाकर ऐसा

ही सिकन्दर बादशाह से कहा। दूत के मुख से यह वाक्य सुनते ही सिकन्दर के रोमांच खड़े हो गये और सिकन्दर जाकर उन महात्मा साधु के चरणों पर गिर पड़ा और बोला कि— "जिस सिकन्दर ने बड़े बड़े राजों के शिर नीचे किये अथवा बड़े बड़े राजाओं के शिर अपने चरणों पर गिरवाये, वही सिकन्दर आज आपकी शान्ति के सामने शिर को आपके चरणों पर रखता है।"

१७०—दो किसी के पास नहीं आते

राजा रणजीतसिंह जी के पास एक साधु गये और जाकर यह कहा कि—"महाराज हमने कभी अशरफी नहीं देखी, सो आप कृपा कर हमें अशरफी दिखला दें।" राजा साहब ने कुछ अशरफियें महात्माजी के सामने रखवा दीं। पुन कुछ देर के बाद महात्मा ने राजा साहब से कहा कि—"अब ये अशरफियें आप उठवा लें।" राजा साहब ने कहा कि—"अब ये अशरफियें मुझे उठवा कर क्या करना है, आप ही ले जाइये।" महात्माजी ने कहा कि—"हम तो सन्यासी हैं, हम द्रव्य नहीं छूते।" राजा ने कहा कि—"जिन पुरुषों को ब्रह्मज्ञान होता है या जिनको रासायनिक ज्ञान होता है, ये दो प्रकार के महात्मा हम लोगों के तो क्या बल्कि किसी के भी दरवाजे पर नहीं जाते।"

१७१—बनावटी महात्मा

एक पादरी साहब एक शहर में उपदेशार्थ गये। वहाँ जाकर एक मछली बेचनेवाले की दूकान के सामने उपदेश करने लगे, कुछ देर के बाद जब दूकानवाले का चित्त कुछ इधर उधर हुआ

तो पादरी साहब मछलीवाले की दूकान मे एक मछली चुरा अपने पाकट में डाल कर चल दिये। यह बात दूकानवाले को मालूम हो गई। तब तो दूकानवाला वहाँ से दौड़ पादरीजी के पास आ हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया और कहा कि-"महाराज पादरी साहब, आपके उपदेश से तो मुझे ईश्वर मिल गया और आयतें उतरने लगीं। पहली आयत यह उतरी है कि "या तो मछली छोटी चुरावे या फिर पाकट बड़ी रखावे।"

१७२-दुष्टों से स्त्रियों की धर्म-रक्षा

महाराज भोज के राज्य मे एक वररुचि नामक ब्राह्मण पण्डित रहता था। इस ब्राह्मण से किसी अपराध होने के कारण राजा ने उसको निकलवा दिया। ब्राह्मण जिस समय ग्राम से जाने लगा तो अपनी स्त्री से कह गया कि-"मेरा इतना इतना रुपया अमुक सेठ के यहाँ जमा है, अत. जब तुझे आवश्यकता पड़े तब मॅगवा लेना।" जब वररुचि ब्राह्मण राज्य से चला गया तो कुछ काल के बाद उसकी स्त्री ने अपनी दासी को भेज उस सेठ से रुपया मॅगवाया, किन्तु सेठ ने दासी से कहा कि इस समय मेरी बही वगैरा सब राजा के यहाँ चली गई हैं, इस लिए रुपया नहीं मिल सकता।" दासी ने आकर ऐसा ही वररुचि की स्त्री से कह दिया। ब्राह्मणी सुन कर विवश हो चुप रही। कुछ काल के पश्चात् वररुचि की स्त्री अपनी दासी के साथ अपने ग्राम के समीप जो नदी थी उसमें एक दिन स्नान करने गई। ब्राह्मणी स्नान करके लौटी आ रही थी कि इतने में वह सेठ जिसके पास वररुचि महाराज का रुपया जमा था मिल गया और वररुचि की स्त्री को देख मोह वश हो उसने दासी से पूछा कि—"यह किसकी स्त्री है?" दासी ने कहा कि—"यह महाराज वररुचि की स्त्री है।" तब तो सेठ ने

सेठ ने कहा कि—"मैं कहाँ जाऊँ, अब क्या करूँ।" ब्राह्मणी ने कहा कि—"आप इस सन्दूक में बैठ जाइये।" यह सुन सेठ सन्दूक में बैठ गये। ब्राह्मणी ने सन्दूक बन्द कर कोतवाल को किवाड़े खोले और कुछ वार्ता के बाद कोतवाल से भी वैसा ही कहा कि—"आप मकान के अन्दर जाइये, आपको यह दासी स्नान वगैरह करा तेल लगायेगी। इस भाँति आप शुद्ध हूजिये। पुन मैं आऊगी।" तब तो कोतवाल साहब अन्दर पहुँचे और दासी ने इन्हें स्नान करा, लाल तेल इनके सारे शरीर में मल दिया। इतने ही में दीवान साहब पहुचे और पहुँच कर दर्वाजे की जंजीर खटखटाई। तब ब्राह्मणी ने कहा कि--"कौन है?" दीवान साहब ने कहा कि—"मैं दीवान हूं।" यह सुन कोतवाल साहब ने कहा कि—"अब मैं कहाँ जाऊँ, क्या करूँ, अगर दीवान जान गया तो मेरी तो नौकरी जायगी?" वररुचि की स्त्री ने कहा कि—"आप इस सन्दूक में बैठ जाइये।" कोतवाल साहब जब सन्दूक में बैठ गये तब ब्राह्मणी ने यह भी सन्दूक बन्द कर दर्वाजे के किवाड़ दीवान को खोल दिये और दीवान से भी इसी प्रकार कहा कि—"आप अन्दर चल कर शुद्ध हूजिये पुन मैं आऊँगी।" अब दीवान साहब अन्दर पहुँचे तो दासी ने स्नानादि करा इनके शरीर भर में पीले तेल का रंग मल दिया कि इतने में न वररुचि की स्त्री ने कहा कि—"हमारा धर्म आदमी आ गया, आप ज़रा इस सन्दूक में बैठ जाइये। पुन. मैं आपको निकाल लेऊँगी।" अब दीवानजी भी सन्दूक में बैठ गये तब ब्राह्मणी शीघ्र ही सन्दूक बन्द कर दुपट्टा तान सो रही और प्रात काल होते ही उसने राजा के यहाँ रिपोर्ट की कि—"मेरे यहाँ चोरी हो गई।" अब राजा के यहाँ से सिपाही तहक़ीकात देखने आये तब ब्राह्मणी ने कहा कि—"मेरा इतना इतना धन तो चोर ले गये और मेरे घर में ये तीन सन्दूकें छोड़ गये हैं,

सो ले जाइये।" राजदूत वे तीनो सन्दूकें आदमियों के सिर पर लदा राजदरबार में पहुँचे और साथ ही वररुचि महाराज की स्त्री भी पहुँची। महाराज भोज ने पूछा कि—"तू कौन है, क्या हुआ ?" ब्राह्मणी ने उत्तर दिया कि—"महाराज, मैं वररुचि की स्त्री हूँ, मेरे स्वामी अमुक अपराध से जब आपके राज्य से निकाले गये तब मुझ से कह गये थे कि मेरा इतना इतना रुपया अमुक सेठ के पास है, सो जब तुम्हें आवश्यकता पड़े तब मँगा लेना। सो मैंने उन सेठ के यहाँ से रुपया मँगाया परन्तु महाराज वह नाना प्रकार के बहाने करता है, रुपये नहीं देता और इस बात को मेरी ये तीनों सन्दूकें गवाह हैं।" राजा ने कहा—"यह कैसा ?" तब तो स्त्री ने एक सन्दूक पर हथेली फटफटा कर कहा—"कहरे करिया देव! मेरा इतना रुपया सेठ पर है या नहीं ?" तब तो सन्दूक के भीतर से सेठ बेचारा डर के कहता है कि—"हूँ हूँ।" इसी भाँति दूसरे से कहा कि—"कहरे पीले देव, मेरा इतना रुपया सेठ पर है या नहीं ?" इसने भी कहा कि—"हूँ हूँ।" इसी भाँति तीसरे को भी पुकारा। राजा को यह दृश्य देख बड़ा आश्चर्य हुआ। तब ब्राह्मणी ने राजा से सब सच्चा वृत्तान्त कह सुनाया कि महाराज, जब मेरा पति आप के राज्य से निकाला गया तो अमुक सेठ के यहाँ इतना रुपया बतला गया था। जब मैंने उस से मँगाया तब तो उस ने दिया नहीं और एक दिन जब मैं स्नान को गई तो सेठ और आपके राज्य के कोतवाल और दीवान मुझे मिले और बुरी दृष्टि से देखा तो मैंने इन्हें बुलाया और ये तीनों मेरे घर पर मेरी इज्जत लेने गये थे, सो मैंने इस भाँति इन्हें सन्दूकों में बन्द किया है, सो आप इन्हें उचित दण्ड दें।" तब राजा ने सन्दूक से तीनों देवों को निकलवा उचित दण्ड दिया।

१७३–सुशिक्षित माता का बेटा

एक बार महाराज भोज अपने पाठशाला में विद्यार्थियों की परीक्षा लेने गये। जब राजा सब ब्रह्मचारियों की परीक्षा ले चुके तो अन्त में एक ब्रह्मचारी के सामने गये। राजा ज्योंही पहुँचे तो ब्रह्मचारी ने तुरन्त ही श्लोक बना कर पढ़ा कि—

त्वद्यशो जलधौ भोज निमज्जनभयादिव ।
सूर्येन्दुबिम्बमिषतो धत्ते तुम्बिद्वयं नभः ॥

अर्थ—महाराज, आपके यशरूपी समुद्र में डूबने के भय से आकाश सूर्य और चन्द्र इन दोनों को तूँबा बना घने बना उस पर सवार हुआ है।

तब तो महाराज ने बालक की इस चातुर्यता को देख अध्यापक महाराज से पूछा कि—"श्रीमान् पण्डित जी, इस बालक के विशेष चतुर होने का कारण क्या है?" अध्यापक जी ने उत्तर दिया कि—"महाराज इस बालक की माता संस्कृत पढ़ी हुई है और उसने इसे प्रथम घर में ही कुछ साहित्य पढ़ाया है।"

१७४–सब से बड़ा देवता कौन ?

एक राजा ने एक सन्यासी महाराज से पूछा कि—"महाराज, संसार में सब से बड़ा देवता कौन है?" सन्यासी महाराज ने साधारण ही राजा साहब को शालिग्राम की एक काली सी बटिया उठा कर दे दी और कहा—"यही सब से बड़े देवता हैं।" राजा साहब उस बटिया को अपने घर ले गये और उस की नित्य पूजा करने लगे। एक दिन राजा साहब ने शालिग्राम की बटिया पर कुछ अन्न का पदार्थ चढ़ाया था, इस कारण उस बटिया पर एक चूहा आकर उसे खाने लगा। जब राजा

ने यह दृश्य देखा तो कहा कि—"शालिग्राम को हम सब से बड़ा देवता मानते थे, आज तो इनके सिर पर चूहा चढ़ा है, बस चूहा ही सब से बड़ा देवता है।" पुन. राजा साहब चूहे की पूजा करने लगे। कुछ काल के पश्चात् एक दिन चूहा राजा साहब की पूजा का सामान खा रहा था कि इतने में बिल्ली आ गई और बिल्ली ने चूहे की ओर ज्योंही झपाटा मारा तो चूहा भगा। बस राजा साहब ने समझ लिया कि चूहा नहीं किन्तु बिल्ली ही सब से बड़ा देवता है और राजा साहब बिल्ली की पूजा करने लगे। कुछ ही काल के बाद एक दिन बिल्ली राजा साहब के पूजा के पदार्थ खा रही थी कि इतने में एक कुत्ते ने बिल्ली पर धावा किया और बिल्ली भागी। बस राजा साहब ने समझ लिया कि बिल्ली क्या बल्कि कुत्ता ही सब से बड़ा देवता है और वे उसी की पूजा करने लगे। कुछ दिन के बाद एक दिन ऐसा हुआ कि राजा साहब कुत्ते की पूजा की तय्यारी कर ही रहे थे कि इतने में कुत्ता जहाँ कि रानी साहब रसोई बना रही थीं चला गया, रानी साहब ने एक चेला उठा उस कुत्ते के जमाया। अब तो राजा यह दृश्य देख दोनों हाथ जोड़ रानी के पैरों पड़ गये और कहा कि—"अरे बड़ा ही धोका हुआ, हम व्यर्थ इधर उधर ढूँढ़ते रहे, सब से बड़ा देवता तो हमारे घर म ही मौजूद था" और उस दिन से वे नित्य रानी की पूजा करने लगे। कुछ काल के पश्चात् राजा साहब को रानी साहब से किसी काम के बिगड़ जाने पर क्रोध आया और राजा साहब ने उठा रानी साहब के पाँच छै हंटर रसीद किये। पुन सोचे कि रानी क्या बल्कि सब से बड़ा देवता तो हम हैं। बस राजा उस दिन से अपनी ही पूजा यानी अच्छी तरह खाने पीने लगे। कुछ काल के बाद जब राजा साहब बीमार पड़े तो विशेष कष्ट होने पर इन के मुख से निकल गया—

"हा राम!" बस राजा ने समझ लिया कि मैं भी कुछ नहीं, संसार में सब से बड़ा देवता राम है। राजा साहब उसी दिन से राम की उपासना करने लगे और अन्त में मोक्ष प्राप्त की।

१७५--खुदा को दीमक खा गई

आप लोग सुन के चकित होंगे कि खुदा को दीमक खा गई, यह क्या और किस प्रकार खुदा को दीमक खा गई? लीजिये सुनिये जिस प्रकार खुदा को दीमक खा गई--

एक महादेव का मन्दिर जंगल में था। एक महाशय वहाँ पहुँचे तो देखा कि मन्दिर तो बड़ा अच्छा बना है, पर इस में मूर्ति नहीं। कुछ लोग वहाँ पशु चरा रहे थे जब उन से पूछा तो मालूम हुआ कि इसमें चन्दन काष्ट की मूर्ति थी, उस को दीमक खा गई। वाहरे-महादेव! जब तुम अपने को दीमक से नहीं बचा सके, तो अपने उपासकों को दुखों से कैसे बचाओगे?

१७६--शुद्ध ही बुरे को शुद्ध कर सकता है

एक वैश्य को एक पण्डितजी ने भागवत की कथा सुनाई। जब सप्ताह समाप्त हुआ तो वैश्य ने कहा--"क्यों पण्डितजी महाराज, इस भागवत का तो यह महात्म्य है कि जो कोई कथा सुने उसके लिए विमान आवे क्योंकि जब श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित को कथा सुनाई थी तो उनके लिए विमान आया था फिर हमारे लिये क्यों नहीं आया?" पण्डितजी ने कहा कि--"अब कलियुग है इस लिए अब चतुर्गुण धर्म करने से यह फल होता है।" वैश्य ने ३००) उस कथा पर चढ़ाये थे अतः उस ने ९००) और जमा कर दिये और कहा--"महाराज, तीन बार और सुनाइये।" पण्डितजी ने सेठजी को तीन बार और सप्ताह सुनाई, पर विमान फिर भी न आया। अब तो विचारे

पण्डित जी भी बड़े ही चक्कर में पड़े कि यह क्या बात है ? तब तो पण्डितजी सेठ को ले कर एक महात्मा के पास पहुँचे और सारा वृत्तान्त कह सुनाया कि —"महाराज, इन सेठजी को हमने लेख के अनुसार चार बार सप्ताह सुनाई, तब भी विमान न आया, पर शुकदेवजी के तो एक ही बार सुनाने पर राजा परीक्षित के लिए विमान आया था।" तब महात्माजी ने उठकर उन पण्डित महाराज और सेठ दोनों को बाँध कर डाल दिया। जब बहुत देर तक दोनों बँधे पड़े रहे तो दोनों एक दूसरे का मुँह ताकते रहे। तब महात्मा ने कहा कि—"क्यों एक दूसरे का मुँह देखते हो, खोल न लो ?" कहा—"महाराज, हम नहीं खोल सकते, आप ही कृपा करके हमें खोल दीजिये।" महात्मा ने उन्हें खोल दिया और कहा—"देखो, जिस प्रकार तुम दोनों बँधे होते हुये एक दूसरे को नहीं खोल सकते थे, इसी प्रकार तुम दोनों विषय-वासनाओं से बँधे हो, अतः एक दूसरे को खोल मुक्त नहीं कर सकते, पर श्रीशुकदेवजी महाराज शुद्ध थे, विषयों से मुक्त थे, इस लिए परीक्षित को खोल सके।"

नोट—दृष्टान्त बिलकुल असम्भव है, यानी परीक्षित के लिए भी विमान नहीं आया, पर उपयोगी होने के कारण लिखा।

१७७—अमृत नदी

एक अँग्रेज ने लण्डन में यह सुना कि हिन्दुस्तान में एक अमृत नदी है, अत उसने इस नदी के अमृत जल पान करने की अभिलाषा से हिन्दुस्तान को पयान किया। जिस समय वह लण्डन से कलकत्ता में आकर पहुँचा तो वहाँ के लोगों से पूछा कि—"क्यों भाइयो यहाँ पर अमृत नदी कौन सी है ?" लोगों कहा कि—"यहाँ अमृत नदी तो हम लोगों ने सुनी भी नहीं, पर गंगा नदी अवश्य है। अँग्रेज ने समझा शायद गंगा नदी

ही का नाम अमृत नदी है, अतः उस ने इलाहा के पुल के नीचे जहाँ गंगा का बड़ा गँदला जल था बिठूर में उसका पान किया और कहा कि—"यह अमृत नदी, तो नहीं बल्कि इसे नाला नदी तो अवश्य कह सकते हैं" और उदासीन होकर लौट पड़ा और सोच रहा था कि मैं इतनी दूर से व्यर्थ आया। कुछ दूर चलने पर उसे एक पण्डित मिला। पण्डित ने साहब बहादुर को उदासीन देख पूछा—"साहब, आप उदासीन क्यों हैं?" साहब ने कहा कि—"हिन्दुस्तानी लोग बड़े झूठे होते हैं।" पण्डित ने कहा—"कहिये तो कि हिन्दोस्तानी कैसे झूठे होते हैं।" उसने एक अखबार निकाल कर दिखाया कि—"देखो इसमें यह छपा है कि हिन्दुस्तान में एक अमृत नदी है, सो मैंने सर्वत्र ढूँढ़ा पर कहीं पता न लगा और मैं लण्डन से यहाँ तक हैरान हुआ, व्यर्थ खर्चा उठाया।" पण्डित ने कहा कि—"आइये हम आप को अमृत नदी दिखलावें।" पण्डित ने साहब बहादुर को कानपुर ले जाकर उसी गंगा का जल पिलाया, तब साहब बहादुर ने कहा कि—"यह कुछ उससे अच्छा है।" तब पण्डित ने कहा कि—"आप कृपा कर थोड़ा और आगे बढ़िये जब साहब हरिद्वार पहुँचे तो पण्डित ने कहा कि—"हुजूर, यहाँ का तो जल पान कीजिये।" साहब ने कहा कि—"यह तो बहुत ही अच्छा जल है।" पण्डितजी ने साहब से प्रार्थना कर जब गंगोत्री पर ले जाकर जल पिलाया तो साहब ने कहा कि—"हाँ यह बेशक अमृत जल है और इसके पीने से यथार्थ में मनुष्य अमृत हो सकता।"

इसका दार्ष्टान्त यह है कि साहब बहादुर ने जो शिक्षारूप अमृत नदी सुनी थी, जब यहाँ आकर पूछा कि यहाँ शिक्षा में अमृत नदी कौन है, तो लोगों ने तन्त्रों को बतलाया। तन्त्रों को देख साहब ने बड़ा शोक प्रकाशित किया। पुनः पण्डित ने पुराणों

पण्डित जी भी बड़े ही चक्कर में पड़े कि यह क्या बात है? तब तो पण्डितजी सेठ को ले कर एक महात्मा के पास पहुँचे और सारा वृत्तान्त कह सुनाया कि—"महाराज, इन सेठजी को हमने लेख के अनुसार चार बार सप्ताह सुनाई, तब भी विमान न आया, पर शुकदेवजी के तो एक ही बार सुनाने पर राजा परीक्षित के लिए विमान आया था।" तब महात्माजी ने उठकर उन पण्डित महाराज और सेठ दोनों को बाँध कर डाल दिया। जब बहुत देर तक दोनों बँधे पड़े रहे तो दोनों एक दूसरे का मुँह ताकते रहे। तब महात्मा ने कहा कि—"क्यों एक दूसरे का मुँह देखते हो, खोल न लो?" कहा—"महाराज, हम नहीं खोल सकते, आप ही कृपा करके हमें खोल दीजिये।" महात्मा ने उन्हें खोल दिया और कहा—"देखो, जिस प्रकार तुम दोनों बँधे होने हुये एक दूसरे को नहीं खोल सकते थे, इसी प्रकार तुम दोनों विषय-वासनाओं मे बँधे हो, अतः एक दूसरे को खोल मुक्त नहीं कर सकते पर श्रीशुकदेवजी महाराज शुद्ध थे, विषयों से मुक्त थे, इस लिए परीक्षित को खोल सके।"

नोट—दृष्टान्त बिलकुल असम्भव है, यानी परीक्षित के लिए भी विमान नहीं आया, पर उपयोगी होने के कारण लिखा।

१७७-अमृत नदी

एक अँग्रेज ने लण्डन में यह सुना कि हिन्दुस्तान में एक अमृत नदी है, अत: उसने इस नदी के अमृत जल पान करने की अभिलाषा से हिन्दुस्तान को पयान किया। जिस समय वह लण्डन से कलकत्ता में आकर पहुँचा तो वहाँ के लोगों से पूछा कि—"क्यों भाइयो यहाँ पर अमृत नदी कौन सी है?" लोगों कहा कि—"यहाँ अमृत नदी तो हम लोगों ने सुनी भी नहीं, पर गंगा नदी अवश्य है। अँग्रेज ने समझा शायद गंगा नदी

हीं का नाम अमृत नदी हो, अतः उस ने हवड़ा के पुल के नीचे जहाँ गंगा का महा गँदला जल था चिल्लू में उठा पान किया और कहा कि—"यह अमृत नदी तो नहीं बल्कि इसे नरक नदी तो अवश्य कह सकते हैं" और उदासीन होकर लौट पड़ा और सोच रहा था कि मैं इतनी दूर से व्यर्थ आया। कुछ दूर चलने पर उसे एक पण्डित मिला। पण्डित ने साहब बहादुर को उदासीन देख पूछा—"साहब, आप उदासीन क्यों हैं?" साहब ने कहा कि—"हिन्दुस्तानी लोग बड़े झूठे होते हैं।" पण्डित ने कहा—"कहिये तो कि हिन्दोस्तानी कैसे झूठे होते हैं।" उसने एक अखबार निकाल कर दिखाया कि—"देखो इसमें यह छपा है कि हिन्दुस्तान में एक अमृत नदी है, सो मैंने सर्वत्र पूछा पर कहीं पता न लगा और मैं लण्डन से यहाँ तक हैरान हुआ, व्यर्थ खर्चा उठाया।" पण्डित ने कहा कि—"आइये हम आप को अमृत नदी दिखलावें।" पण्डित ने साहब बहादुर को कानपुर ले जाकर उसी गंगा का जल पिलाया, तब साहब बहादुर ने कहा कि—"यह कुछ उससे अच्छा है।" तब पण्डित ने कहा कि—"आप कृपा कर थोड़ा और आगे बढ़िये जब साहब हरिद्वार पहुँचे तो पण्डित ने कहा कि—"हुजूर, यहाँ का तो जल पान कीजिये।" साहब ने कहा कि—"यह तो बहुत ही अच्छा जल है।" पण्डितजी ने साहब से प्रार्थना कर जब गंगोत्री पर ले जाकर जल पिलाया तो साहब ने कहा कि—"हाँ यह बेशक अमृत जल है और इसके पीने से यथार्थ में मनुष्य अमृत हो सकता।"

इसका दार्ष्टान्त यह है कि साहब बहादुर ने जो शिक्षारूप अमृत नदी सुनी थी, जब यहाँ आकर पूछा कि यहाँ शिक्षा में अमृत नदी कौन है, तो लोगों ने तन्त्रों को बतलाया। तन्त्रों को देख साहब ने बड़ा शोक प्रकाशित किया। पुनः पण्डित ने पुराणों

को दिखाया तो साहब ने कहा कि इस में भी वही तंत्र-शिक्षा घुसी है। पुनः पण्डित ने स्मृतियों को दिखलाया, तब साहब ने कहा हाँ ये कुछ अच्छी है, पर कुछ गँदलापन अवश्य है। पुनः पण्डितजी ने उपनिषद दिखलाई तो साहब की आत्मा बहुत शान्त हुई और कहा यह बड़ा ही उत्तम जल है। पुनः पण्डित जी ने गंगोत्री अर्थात् वेदोक्त दिखलाया तब तो साहब ने कहा कि हाँ यह बेशक अमृत नदी है और इसके पीने से मनुष्य अमृत हो सकता है।

१७८—सनातनधर्म की गाड़ी

कुछ लोगों का झुण्ड सफ़र करते जा रहा था, पर मंज़िले मक़सूद दूर होने के कारण लोगों ने सोचा कि यह मार्ग हम लोग बिना किसी तेज़ सवारी के ते न कर सकेंगे। पुनः सोचा कि आज कल सब सवारियों में अगर कोई तेज़ सवारी है तो रेल है, अतः वह झुण्ड यह विचार स्टेशन पर पहुँचा और टिकट ले लेकर गाड़ी पर सवार हुआ, पर गाड़ी में एञ्जिन न था और बहुत काल तक जब एञ्जिन न लगा तब कुछ लोग घबड़ा कर उतर पड़े और बाइसिकलों पर सवार हो चल दिये। जब कुछ काल और गाड़ी खड़ी रही और न चली तो लोगों ने सोचा कि हम सब गाड़ी में बैठनेवालों से तो वही अच्छे जो बाइसिकलों पर बैठ बैठ चले गये, अतः यह सोच कुछ लोग गाड़ी से और उतरे और दो दो घोड़ों की बग्घियों पर सवार हो हो चल दिये। पर वह गाड़ी फिर भी न चली तो कुछ काल के बाद लोगों ने सोचा कि हम लोगों से तो वही अच्छे जो दो घोड़ों की बग्घियों पर चले गये। पुनः उस गाड़ी से कुछ लोगों का गुच्छ और उतरा और उतर के तीन बैलों की गाड़ी पर सवार हो हो और कोई कोई गधों पर सवार हो हो चल दिये, पर जो लोग धैर्य धारण किये बैठे रहे कि अब

टिकट बदा है और हम गाड़ी पर बैठे हैं तो कभी न कभी यह गाड़ी भी चलेगी। कुछ काल के पश्चात् एक एञ्जिन ने कि जिसमें दो लाल लाल शीशे सामने और एक हरा शीशा ऊपर लगा हुआ था बड़े जोर से धाड़ धाड़ करते हुए आकर एक ऐसी टक्कर गाड़ी में लगाई कि टक्कर लगाते ही कुछ गिरोह डर कर उतर पड़ा कि कहीं गाड़ी लौट न जाय, बाक़ी और लोग बैठे रहे। कुछ ही देर के बाद वह गाड़ी भैंसे की गाड़ी और गधों की सवारीवालों को मिली। अब तो गाड़ी को आगे जाता देख भैंसों की गाड़ी तथा गधे की सवारी वालों ने बड़ा ही पश्चाताप किया। पुन थोड़ी ही देर बाद जो दो दो घोड़ों की बग्घियों पर रवाना हुए थे, गाड़ी ने उन्हें भी पीछे किया, तब तो उन लोगों ने भी बड़ा ही पश्चाताप किया। पुन कुछ ही देर के बाद गाड़ी ने बाइसिकलवालों को भी पीछे किया तब तो बाइसिकलवाले भी पछिताने लगे और मन के सब यह सोचने लगे कि अगर हम यह जानते कि यह गाड़ी सब से आगे निकल जायगी तो हम इससे कभी न उतरते। पर अब पछिताने से होता ही क्या है।

दृष्टान्त तो यह हुआ पर इसका दार्ष्टान्त यह है कि यह वैदिक धर्मरूपी गाड़ी जिसमें कि सम्पूर्ण संसार के मनुष्य मोक्षरूपी मंजिले मक़सूद के जाने के लिये बैठे थे पर उस गाड़ी में एञ्जिन न होने के कारण (यानी महाभारत में सब विद्वानों के नाश हो जाने के कारण इस वैदिक धर्म की गाड़ी का घसीटनेवाला कोई एञ्जिन अर्थात् विद्वान् न रहा था) प्रथम जो गुरुह उतर बाइसिकल पर सवार हुआ वह वाममार्ग के बाद बौद्ध मत हुआ जो 'अहिंसा परमोधर्मः' की बाइसिकल पर सवार हो चल पड़ा था पुन जो दूसरा गुरुह दो दो घोड़ों की बग्घियों पर चला था वह मज़हब इसलाम दो घोड़ों की

बग्घी यानी खुदा और रसूल, इन दो को मानकर चल पड़े। पुनः तीसरा कुपढ तीन भैंसों की गाड़ी तथा गधों की सवारीवाला ईसाई मत था, जिसमें तीन भैंसों की गाड़ी पिता, पुत्र, पवित्र आत्मा गधे की सवारी आदि मान कर चलने लगे। पर कुछ काल के बाद उस वैदिक धर्म की गाड़ी में स्वामी दयानन्द बालब्रह्मचारी रूप एञ्जिन जिसके दोनों नेत्र सुर्ख और दिमाग विद्या से सब्ज यही एञ्जिन के तीन शीशे थे, हाव हाव करना उनका संस्कृत भाषण था, उस एञ्जिन की ठोकर खण्डन मण्डन थी जिससे कितने ही भयभीत हो कोई उन्हें अपना शत्रु समझ, कोई ईसाई आदि समझ गाड़ी से उतर पड़े और जो हिम्मत किये बैठे रहे उन सबको मय उस गाड़ी के वह एञ्जिन लेकर सब से आगे निकल गया। अब तो अपने अपने पेट में सभी मतवादी चाहे ऊपर कुछ भी कहें पर इस गाड़ी में बैठने की इच्छा करते हैं, पर इस गाड़ी में यह भाव नहीं कि आगे निकलनेवालों को न बिठाले। यह एञ्जिन ऐसा है कि स्थान स्थान पर खड़ा हो हो आगेवाले भाइयों को बिठलाता जाता है और एक दिन आयेगा जब आप लोग संसार को इसी गाड़ी पर सवार देखेंगे।

तसनीफ़ को समाज के फैलाओ हर तरफ़।
प्रकाश वेद-पाक का पहुँचाओ हर तरफ ॥
संसार को दिखा दो कि किनके हो तुम सपूत।
सन्तान आर्यों के सपूतो के तुम हो पूत ॥
दिखलादो धर्म-शक्ति को तुम में है जो स्वरूप।
तुमको न कोई कह सके फिर कलियुगी कपूत ॥
इक इक नियम पै जब कि हजारों शहीद हों।
तब जानना कि आपके जीवन मुफ़ीद हों ॥